भारत में अंगरेज

राधाकृष्ण झा

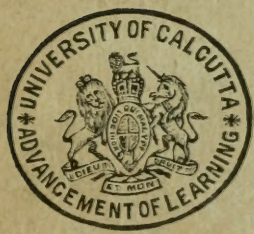

कलकत्ता विश्वविद्यालय

द्वारा प्रकाशित।

१९१६

HIn.
E58.2

भारत में अंगरेज

[॰ एन्॰ एन्॰ घोष रचित England's Work in India का हिन्दी अनुवाद।]

राधाकृष्ण झा एम्, ए,
(*Cobden Medallist, 1912*)
अध्यापक, पटना कालेज।

UNIVERSITY OF CALCUTTA
No. ..... Fd.
REGISTRAR'S OFFICE

कलकत्ता विश्वविद्यालय
द्वारा प्रकाशित।
१९१६

193640
21.1.25

PRINTED BY ATULCHANDRA BHATTACHARYYA,
AT THE CALCUTTA UNIVERSITY PRESS, SENATE HOUSE, CALCUTTA.

अनुवादक का वक्तव्य।

यह अनुवाद मूल ग्रन्थ के १९१४ वाले संस्करण का है। अनुवाद में मूल ग्रन्थ के भाव और आशय यथानुरूप रक्खे गये हैं। परन्तु जहां बातें बदल गई हैं, वा जहां स्पष्ट करने की आवश्यकता हुई है वहां फुटनोट लगा दिये गये हैं। आशा है, पाठकों को इससे लाभ होगा।

Digitized by the Internet Archive
in 2009 with funding from
University of Toronto

http://www.archive.org/details/englandsworkinin00calc

सूचीपत्र ।

प्रथम खण्ड ।

अंगरेजी राज में भारत की उन्नति ।

प्रथम अध्याय ।

ब्रिटिश शासन की नीति—घोषणा पत्र ... १—३२

द्वितीय अध्याय ।

संरक्षण के कार्य ... ... ३३—४३

तृतीय अध्याय ।

राजनीतिक उन्नति... ... ... ४४—६१

चतुर्थ अध्याय ।

सामाजिक कुरीति निवारण ... ... ६१—७६

पञ्चम अध्याय ।

शिक्षासम्बन्धी कार्य ... ... ७७—८८

षष्ठ अध्याय ।

साम्पत्तिक उन्नति ... ... ८८—११५

सप्तम अध्याय ।

देश की आभ्यन्तरिक उन्नति ... ... ११६—१४१

अष्टम अध्याय ।

नागरिकों के अधिकार ... ... १४२—१५७

नवम अध्याय ।

शासन के स्थूल सिद्धान्त और परिणाम ... १५८—१६८

द्वितीय खण्ड ।

भारत की शासन व्यवस्था ।

प्रथम अध्याय ।

प्रारम्भिक बातें ... ... १७१—१७४

द्वितीय अध्याय ।

सामरिक (फौजी) प्रबन्ध ... ... १७५—१८८

तृतीय अध्याय ।

उच्चवर्ग के शासक और व्यवस्थापक सभा ... १८९—२११

चतुर्थ अध्याय ।

निम्न शासक-वर्ग ... ... २१२—२२२

पञ्चम अध्याय ।

विचार विभाग ... ... २२३—२३१

षष्ठ अध्याय ।

राजस्व और आय-व्यय ... ... २३२—२४८

सप्तम अध्याय ।

देशी राजवाड़े ... ... २४९—२५४

प्रथम खण्ड

अंगरेज राज में भारत की उन्नति ।

प्रथम अध्याय।

ब्रिटिश शासन की नीति—घोषणा पत्र।

प्रारम्भिक बातें—शासन की कठिनाइयां—कैसी नीति का अवलम्बन हो सकता था—किस नीतिका अवलम्बन हुआ है—संरक्षण तथा संस्करण—साम्राज्यका विस्तार—जन संख्या—भाषाकी विभिन्नता—वर्ण धर्म की बहुलता—एक शासन—समान अधिकार और कर्त्तव्य—समान राजनैतिक स्थिति—अंगरेजी शासननीति की घोषणा—संरक्षण के कार्य—संस्करण के कार्य—महारानी का घोषणापत्र—महाराज सप्तम एडवर्ड और पञ्चम जौर्ज के घोषणापत्र—महाराज पञ्चमजौर्ज और महारानी मेरी के कलकत्ता विश्वविद्यालय का अभिनन्दनपत्र और उसका उत्तर।

इङ्गलण्ड को भारत शासन करने में अपूर्व तथा अनूठी कठिनाइयों से भरी समस्याओं का सामना करना पड़ा था। दूर रहकर एक दूसरे देश का शासन करना ही किसी देश के लिये कठिन है। यदि शासित देश आकार में बहुत बड़ा और उसके अधिवासियों की संख्या अत्यधिक हो, और

ये अधिवासी यदि भिन्न भिन्न जाति के हों, और शासकों से वर्ण, धर्म, भाषा, आचार-व्यवहार में विभिन्न हों, तो शासन कार्य और भी कठिन हो जाता है। ब्रिटिश शासन की प्रथमावस्था में राज्य विस्तार और जन संख्या आज कल की अपेक्षा कम थी, लोगोंका रहन सहन सीधा और उनकी आवश्यकतायें भी कम थीं। परन्तु इङ्गलैण्ड और भारतवर्ष के बीच तथा भारतवर्ष के भिन्न भिन्न प्रान्तों में जाने आनेका मार्ग आज कल के जैसा सरल और सुगम न था; न शासक ही देश से भलीभांति परिचित थे, और न शासित ही शासक से; राजपुरुषों की संख्या कम थी; एक नई शासन पद्धति से देश में जिन असुविधाओं और विघ्न-बाधाओं का उपस्थित होना अनिवार्य है, वे सब उपस्थित हुई थीं। अतएव आज कल भारत शासन किसी किसी विषय में कठिन होजाने पर भी बहुत से विषयों में सहज होगया है, इसमे संदेह नहीं।

जब अंगरेजों के हाथ में भारत शासन का अधिकार आचुका था तब वे किसी एक प्रकार की शासन प्रणाली का अवलम्बन कर सकते थे। वे अपने जातिवालों के लिये एक प्रकार का और भारतवासियों के लिये दूसरे ढंग का कानून बना सकते थे; कर, वाणिज्य, सरकारी नौकरी इत्यादि विषयों में अपने लिये विशेष अधिकार रख सकते थे, और भारतवासियों को अधिकारच्युत कर सकते थे। वे लोग भारत की भिन्न भिन्न जाति और सम्प्रदायों के लिये

पृथक पृथक नियम और संस्थाओं का स्थापन कर किसी जाति को बढ़ा सकते थे, और किसीको दबा सकते थे। अथवा भारत के लिये किसी नई शासन-प्रणाली के गढ़ने का कष्ट न उठाकर वे अपने देश का ही सारा कानून यहां चला सकते थे, और भारतवर्ष की सब संस्थाओं को उठा दे सकते थे। अथवा, भारतवर्ष की पुरानी संस्थायें यद्यपि बुरी हैं, तथापि जिनके देश की चीज़ हैं उनके लिये बहुत अच्छी हैं—यह समझ कर वे लोग किसी प्रकार का हस्तक्षेप न कर उन्हें ज्यों का त्यों ही छोड़ दे सकते थे। अथवा, यदि मनमाना सर्वाङ्ग सुन्दर आदर्श समाजतन्त्र स्थापित करने की इच्छा होती, तो वे लोग अपने देश तथा भारतवर्ष में प्रचलित सब कानून और संस्थाओं का तिरस्कार कर और देश की दशा पर ध्यान न देकर अपने राज्य भर में एक नई प्रणाली का, जिसको वे सब प्रकार से सुन्दर समझते, प्रचार कर सकते थे। उन्होंने भारतवर्ष में जिस नीति का अवलम्बन किया—अवश्य ही यह भी उचित उपायोंमें से एक उपाय था,—वह नीति इस देश की पूर्व प्रचलित नीति के न सर्वथा अनुकूल ही थी, और न प्रतिकूल। क्योंकि वे लोग न तो मनःपूत आदर्श शासनतन्त्र का ही प्रचार करना चाहते थे, और न अपने देश की संस्थाओं का विशेष पक्षपात और यहां की संस्थाओं के प्रति घृणा की दृष्टि रखते थे। वरन यह सतर्कता पूर्ण संरक्षण और संस्करण की नीति

थी, जिससे देश परिवर्त्तित अवस्था के अनुकूल हो शनैः शनैः उन्नति की ओर अग्रसर होसके। अंगरेज शासनकर्त्ता अगले दिनों से ही सर्वाङ्ग सुन्दरता वा एकी भाव की तरफ ध्यान न देकर प्रकृत कार्योपयोगिता पर ही लक्ष्य रखते आये हैं। जो नियम न्यायधर्म के विरुद्ध है, अथवा कार्य्यक्षेत्र में अव्यवहार्य वा अनिष्टकर सिद्ध हुआ है, वैसे नियमको बदलते हुए उन्होंने जरा भी संकोच नहीं किया है। परन्तु बिना सच्चे प्रयोजन के कभी किसी प्रकार की नई सृष्टि नहीं की है। उन्होंने यह स्वीकार कर लिया है कि न्याय-परता और सुशासन के कुछ मौलिक नियम सारे देश में लग सकते हैं। देश के भिन्न भिन्न प्रान्तों की आवश्यकताओं पर लक्ष्य रख कर ही स्थानीय नियम और शासन-प्रणाली के अंग प्रत्यंग की सृष्टि हुई है। संक्षेप में, उन्होंने सम्भवतः विशुद्ध देशी भावों और संस्थाओं का आदर किया है, और पुरानी बातों की रक्षा और उन्नति करने में यथोचित यत्न किया है। साथ ही साथ, इस देश की सच्ची उन्नति करने की कामना से प्रोत्साहित होकर उन्होंने कानून बनाने वा शासन करने में पश्चिमीय विचारों के लाने और स्वदेशीय संस्थाओं में पश्चिमीय संस्थाओं के मिलाने का यथासम्भव यत्न किया है। इसी प्रकार पुरानी बातों की रक्षा और नई बातों के प्रचार से अंगरेजी राज्य में भारत की कैसी उन्नति हुई है, अंगरेज शासकों ने देश की पुरानी बातों

को किस प्रकार बना रक्खा है, तथा कहां कहां पुरानी संस्थाओं का संस्कार किया है, और कहां आवश्यकतानुसार पश्चिम की सर्वथा नई संस्थाओं का प्रचार किया है—इन बातोंका उल्लेख करने से ही भारत की उन्नति की कहानी पूरी हो जायगी।

भारत साम्राज्य के विस्तारका पता इस बात से लग सकता है कि यह प्रायः १,८३३,००० वर्गमील में फैला हुआ है। ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत प्रान्तों का क्षेत्रफल १,१२४,००० वर्गमील और सारे देशीराज्यों का विस्तार प्रायः ७०९,००० वर्गमील है। ब्रिटिश भारत के बड़े बड़े प्रान्तों में शान राज्य सहित बर्मा (२३०,८३९ व०मी०), मद्रास (१४२,३३० व०मी०), अदन समेत बम्बई, (१२३०५९ व० मी०), और युक्त प्रदेश (१०७,२६७ व० मी०) की गिनती है। हाल में जब से प्रान्तों का पुनःसंगठन हुआ है, तब से बिहार, उड़िस्सा में ८३,१८१ वर्गमील और २८ जिलों समेत बंगाल में ७८,६९९ वर्गमील है। आसाम के इलाके में ५३,०१५ वर्गमील भूमि है।

मनुष्यगणना की पिछली रिपोर्ट के अनुसार भारत की जनसंख्या लगभग ३१५,१५६,३९६ के है, जिसमें से २४४,२६७,५४२ ब्रिटिश भारत में, और ७०,८८८,८५४ देशी राज्यों में रहते हैं। आगरा और अवध के संयुक्त प्रान्त में, जिसकी जन संख्या ४७,१८२,०४४ है, सब से घनी बस्ती है।

उसके बाद बंगाल का स्थान है, जहां ४५,४८३,०७७ आदमी बसते हैं। बिहार और उड़िस्सा में ३४,४९०,०८४ आदमी रहते हैं। यह जान कर अवश्य ही कौतूहल होगा कि बम्बई प्रान्त की आबादी, १२२,९७९ व० मी० का क्षेत्रफल होने पर भी, सिर्फ १९६२६,४७७ है, परन्तु पंजाब में जिसका क्षेत्रफल सिर्फ ९९,७७९ व० मी० है, १९,९७४,९५६ आदमी बसते हैं।

"मिलान करने पर मालूम होता है कि १९०१ की मनुष्यगणना की अपेक्षा कुल २०,७७१,४८१ मनुष्यों अर्थात् सैकड़े ७·१ की वृद्धि हुई है। इसका कुछ अंश तो पश्चिमोत्तर और पूर्वोत्तर सीमा प्रान्तों की जंगली जातियों को मिला लेने के कारण भी हुआ है। अनुमान किया गया है कि इनकी संख्या प्रायः १७३१,११६ होगी। अंगरेजी राज्य में सैकड़े ५·५ की वृद्धि हुई है, परन्तु देशी राज्यों और एजेन्सियों में सैकड़े १२·९ तक की वृद्धि हुई है।*"

भारत साम्राज्य में जिन देशी भाषाओं का प्रचार पाया गया है, उनकी संख्या २२० से कम नहीं होगी, इनमें ३८ प्रकार की बोलियां भी शामिल हैं। ये सब प्रायः तीन भागों में बांटी जा सकती हैं। इण्डो-चाइनीज (Indo-Chinese) जो हिमालय, बर्मा, और पूर्वोत्तर भारत में पाई जाती है;

* जे. एस. काटन कृत ब्रिटानिका इयर बुक।

द्राविड़ मुण्डा (Dravido-Munda) जो प्रधानतः भारत-प्रायद्वीप के दक्षिण और मध्यवर्त्ती देशों में पाई जाती है; और इण्डो-युरोपियन (Indo-European) जो पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त, पंजाब, बम्बई, बंगाल, आसाम और निजाम राज्य से लेकर हिमालय के बीच वाले देशों में प्रचलित है। †

जातितत्व के अनुसार भारत के अधिवासी सात विभागों वा जातियों में बांटे गये हैं। ‡ उनमें प्रचलित धर्म भी दस विभागों में बांटे गये हैं। § ये जाति और धर्म और भी छोटे छोटे भागों में बांटे जा सकते हैं।

इतने बड़े देश में जहां अनेक जाति और धर्म के मानने-वाले असंख्य मनुष्य वास करते हैं, लोगोंके रहन सहन तथा विचार की विभिन्नता और आपस में स्वार्थ का आघात होना अवश्यम्भावी है। यह भारत के इतिहास में पहला ही अवसर है, जब कि इसके भिन्न भिन्न जाति के लोग एक राजा—अर्थात् अंगरेज के अधिकार में लाये गये हैं। एक राज्य में रहने के कारण समान राजनीतिक अधिकार और कर्त्तव्य का भाव उदय होनेलगा है, जिसके कारण जाति-पांति और सम्प्रदाय के झगड़े ठंढे पड़ गये हैं। उदाहरणतः यदि हिन्दू,

---

† सेन्सस (मनुष्यगणना) की रिपोर्ट (१९११) अध्याय ९।

‡ इन विभागों के नाम गुण तथा विस्तार के लिये सेन्सस रिपोर्ट (१९११) देखो।

§ सेन्सस रिपोर्ट (१९११) अध्याय ९।

मुसलमान, पारसी, क्रस्तान अपने अपने धर्म के अनुसार मन्दिरोंमें उपासना करें, पृथक पृथक शिक्षा-प्रणाली अवलम्बन करें, अपने अपने सामाजिक जीवनों में पृथक पृथक नियमों पर चलें तो इस विभिन्नता के कारण थोड़ी वा बहुत ईर्षा क्यों न फैलेगी। परन्तु जब विभिन्नता होने पर भी सब के राजनीतिक अधिकार समान हैं अर्थात् साम्राज्य के नागरिक होने के कारण सब के अधिकार तथा कर्त्तव्य समान हैं; प्रत्येक व्यक्ति अपने धार्मिक और सामाजिक विचारों में स्वतन्त्र है, तब आपस का विद्वेष कैसा ही घोर क्यों न हो, कोई किसी को बाधा नहीं दे सकता है। जैसा कि ऊपर कहा जाचुका है, इंगलैण्ड एक दूसरी ही नीतिका अवलम्बन कर सकता था, जातिविशेष को विशेष अधिकार दे सकता था, परन्तु ऐसा न कर उसने सब किसी को समान अधिकार देकर समान कर्त्तव्य की शृङ्खला में बांध रक्खा है।

१८३३ ई० में ही जब कि पार्लिमेंट की आज्ञा (3 and 4 William IV C. 85) से ईस्ट इण्डिया कम्पनी को नई सनद मिली थी, उसी समय उसकी ८७ धारामें कहा गया था कि "उपर्युक्त प्रदेशों का कोई भी अधिवासी अथवा सम्राट् की कोई भी ब्रिटिश प्रजा जो वहां रहती हो अपने वर्ण, धर्म, जन्मस्थान वा वंशादि के कारण कम्पनी सरकार के अधीन किसी पद पर नियुक्त होनेके अयोग्य नहीं समझी जायगी।" सर कोर्टनै इलवर्ट ने भी कहा है कि "राज काज में देशी-

लोगों के अबाध प्रवेश की नीति की प्रतिज्ञा इसके पहले कभी इतनी उदारता और दृढ़ता से नहीं की गई थी।"

उसी कानून की दूसरी धारा में—यह कहते हुए कि "उन प्रदेशों के साथ युरोपियनों के अबाध सम्बन्ध से होनेवाली हानि वा आशङ्का से बचने का भी प्रबन्ध करना आवश्यक होगा"—सकौन्सिल वड़ेलाट को "उन प्रदेशों की देशी प्रजा की शारीरिक, मानसिक और धार्मिक अत्याचार और अपमान से रक्षा करने के लिये यथासम्भव शीघ्र कानून बनाने का अधिकार दिया गया था।"

उसी कानून से सकौन्सिल वड़ेलाट को आज्ञा हुई थी कि वे दासत्व की प्रथा को कम करने, दासोंकी दशा सुधारने और सुयोग तथा अवसर देखकर सम्पूर्ण भारतवर्ष से दासत्व की प्रथा को निर्मूल करने के उपायों का अवलम्बन करेंगे, और इस विषय के कानून का खसरा (कच्ची लिपि) तैयार कर शासक-सभा (Court of Directors) के सम्मुख उपस्थित करेंगे। उक्त खसरा तैयार करने में विवाह के नियम, तथा पिता और प्रधान पुरुषके अधिकारों और स्वत्वों पर भी ध्यान रखने का आदेश था।

सिपाही विद्रोह के अनन्तर ईस्ट इण्डिया कम्पनी से भारत का राज्यभार अपने हाथ में लेते हुए महारानी विक्टोरिया ने जो घोषणा की थी, उसमें अंगरेजों की शासन-नीति के मूलतत्वों का वर्णन किया गया था। इसका

नाम पड़ा था "भारत के राजा, महाराजा और अधिवासियों के प्रति सकौन्सिल महारानी की घोषणा"। यह सन् १८५८ ई० की पहली नवम्बर को कलकत्ता गजट में प्रकाशित होकर सब जगह पढ़ी गई थी। इस घोषणा पत्र से जिस प्रकार की उदारता, समदर्शिता और मंगल कामना प्रकट होती है उसको स्पष्ट कर दिखाने के लिये किसी प्रकार की टीका, टिप्पणी की आवश्यकता नहीं है। महारानी विक्टोरिया तथा उनके उत्तराधिकारी सम्राट् सप्तम एडवर्ड और पञ्चम जौर्ज की घोषणाओं तथा अन्य सम्भाषणों को आद्योपान्त पढ़ने से ही पूरा आनन्द और उत्साह मिलेगा तथा सब बातें स्पष्ट हो जांयगीं। वे नीचे दी जाती हैं :—

महारानी का घोषणा-पत्र।

ईश्वर की कृपा से मैं विक्टोरिया, ग्रेटब्रिटेन और आयरलैंड के संयुक्तराज्य तथा योरप, एशिया, अफ्रिका, अमेरिका और आस्ट्रेलिया प्रभृति महादेशों में फैले हुए उपनिवेशों और अधीनस्थ राज्यों की अधिष्ठात्री तथा धर्म रक्षिणी,

अनेक गुरुतर कारणों से हमलोगों ने महासभा (पार्लिमेण्ट) में उपस्थित सरदार सामन्तों, पुरोहितों और

सर्व साधारण के प्रतिनिधियों के परामर्श से स्थिर किया है कि आज तक माननीय ईस्ट इण्डिया कम्पनी भारतवर्ष के जिन राज्यों का प्रबन्ध हमलोगों के लिये कर रही थी, उनका शासन भार अपने हाथ में ले लेवें।

अतएव इस घोषणापत्र द्वारा सर्व साधारण को कहती और विदित करती हूं कि हमलोगों ने उपर्युक्त सामन्त सरदारों की सम्मति और परामर्श से भारत का सम्पूर्ण शासनभार अपने ऊपर लिया है। और इसी के द्वारा भारतवर्ष की प्रजाओं से चाहती हूं कि वे राजभक्त बनें, तथा मेरी और मेरे उत्तराधिकारियों की वश्यता सच्चे मन से स्वीकार करें, तथा हम लोग समय समय पर जिन कर्मचारियों को अपनी ओर से भारत शासन के लिये नियुक्त करें उनकी आज्ञा को शिरोधार्य्य करें।

मैं अपने परम प्रेमास्पद और विश्वास भाजन, आत्मीय चार्लस जान वाइकाउण्ट कैनिंग महोदय को, जिनकी योग्यता और राजभक्ति पर मुझे पूरा भरोसा है, भारतवर्ष का सर्व प्रथम राजप्रतिनिधि और बड़ालाट नियुक्त करती हूं। अब से वह हमारे नाम से और प्रतिनिधि के नाते देश का शासन करेंगे। और समय समय पर हमारे अन्यतम प्रधान मन्त्री द्वारा जो सब राजकीय आदेश और नियमावली उन को मिलेंगी उन्हींके अनुसार वह कार्य्य करेंगे।

सम्मति जो व्यक्ति माननीय ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधीन जिस ओर तथा सैनिक पद पर नियुक्त हैं, उन सबों का अपने अपने पद पर रहना स्वीकार करती हूं परन्तु इसके उपरान्त उन लोगों को हमारी इच्छा और समय समय पर निकलने वाली विधिव्यवस्था का पालन करना पड़ेगा।

इस घोषणापत्र द्वारा यह सूचित करती हूं कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी वा उनकी सम्मति से जो सन्धियां देशी राज्यों के साथ की गई थीं, वे स्वीकार की जाती हैं, और उनका पालन अक्षरशः किया जायगा। देशी राजा भी, आशा है, उसी प्रकार उस सन्धि का पालन करेंगे।

आज कल जितना देश हमलोगों के राज्याधिकार में है उसके विस्तार की इच्छा हम लोगोंकी नहीं है और जैसे हम लोगों के अधिकार वा स्वत्वों पर किसी के हस्तक्षेप करनेसे हम लोग कदापि सह्य नहीं कर सकेंगे, उसी प्रकार यदि कोई अन्याय से दूसरे के अधिकार पर हस्तक्षेप करेगा तो उसका भी हम लोग अनुमोदन न करेंगे।

हम लोग भारत के देशी राजाओं के स्वत्व, अधिकार, और मान-मर्यादा की रक्षा अपनी ही मान-मर्यादा समझकर करेंगे। हम लोगों की इच्छा है कि देश की भीतरी शान्ति और सुशासन से जो समृद्धि और सामाजिक उन्नति अवश्यम्भावी है, उसका लाभ देशी नरेश और हमारी प्रजा दोनो उठावें।

अन्य देशों की प्रजा के प्रति जिन कर्त्तव्यों को पालन करने के लिये हम बाध्य हैं, भारत की प्रजा के प्रति भी हम उन्हीं कर्त्तव्यों के प्रतिपालन के लिये अपने को बाध्य समझेंगे और सर्वशक्तिमान ईश्वर की कृपा से हम इन कर्त्तव्यों का सच्चे और शुद्ध मन से पालन करेंगे।

यद्यपि क्रस्तान धर्म की सत्यता पर हमलोग दृढ़ विश्वास रखते हैं, और धर्म जनित शान्ति और स्वतन्त्रता को कृतज्ञ हृदय से स्वीकार करते हैं, तथापि अपने धर्म विश्वास को अपनी किसी प्रजा के हृदय में बल पूर्वक प्रचार कराने के अधिकार तथा विचार को अस्वीकार करते हैं। हम लोग इस राजकीय इच्छा को सानन्द प्रकाश करते हैं कि हम-लोगों के राज्य में कोई व्यक्ति अपने धर्म विश्वास अथवा अनुष्ठान के कारण किसी प्रकार से भी अनुग्रह वा निग्रह का भाजन न होगा। और हमारे कानून सब किसी की रक्षा एक समान और पक्षपात रहित होकर करते रहेंगे। हम अपने राजकर्मचारियों को भी विशेषरूप से सतर्क कर देते हैं कि यदि वे हमारी भारतीय प्रजाके धार्मिक विचार वा पूजा पाठ में किसी प्रकार की बाधा विपत्ति डालेंगे तो हमारे विरक्तिभाजन होंगे।

इसके अतिरिक्त हमारी यह भी इच्छा है कि हम लोगों की प्रजा, चाहे वह किसी वर्ण वा धर्म की क्यों न हो, अपनी शिक्षा, योग्यता, न्यायपरता इत्यादि गुणों के कारण जिस पद

के योग्य ठहरेगी उस पद पर किसी रोक-टोक और पक्षपात के बिना नियुक्त की जायगी।

अपनी पैतृक भूमि को भारतवासी किस श्रद्धा और प्रीति की दृष्टि से देखते हैं, यह हम को मालूम है, और हम उसका आदर भी करते हैं अतएव हम भूमि सम्बन्धी उनके सब प्रकार के स्वत्वाधिकारों की रक्षा करने को प्रस्तुत हैं; केवल जो न्यायतः प्राप्य होगा वह उन्हें देना पड़ेगा। और हमारी यह इच्छा है कि कानून के बनने और वर्तने के समय भारत के पुराने स्वत्वों और रस्मरिवाजों का उचित आदर किया जावे।

कतिपय दुराकाङ्क्षी व्यक्तियों के झूठा समाचार फैला कर और अपने देशवालों की आंखमें धूल झोंककर विद्रोह उपस्थित कराने के कारण जो अनिष्ट और असंगल अपने देश का किया है, उसके लिये हम को बड़ा दुख है। इस विद्रोह को दमन करते हुए लड़ाई के मैदान में हमारी शक्ति का परिचय मिल चुका है। अब हम दया करके उन लोगों के अपराध को क्षमा करना चाहते हैं जिनको लोगों ने बहका कर विद्रोही बना दिया था, परन्तु जो अब अपने कर्त्तव्य पथ पर फिर आना चाहते हैं।

जिसमें और अधिक रक्तपात न हो तथा भारतवर्ष में शीघ्र ही शान्ति स्थापित हो जावे, इस अभिप्राय से हमारे प्रतिनिधि और बड़ेलाट एक प्रदेश को तो क्षमा कर

देने की आज्ञा दिला चुके हैं। जो लोग गत सिपाहीविद्रोह के समय हमारी सरकार के विरुद्ध खड़े हुए थे उनमें से अधिकांश व्यक्तियों को कुछ शर्तों पर क्षमा कर देने का वचन दिया गया है। जिन लोगों का अपराध इतना गुरुतर है कि क्षमा करना असम्भव है, उन्हें क्या दण्ड दिया जायगा इसकी भी घोषणा कर दी गई है। हम लोग बड़ेलाट की इस काररवाई से सहमत हैं, और उसे स्वीकार भी करते हैं और उसके अतिरिक्त यह सूचित और विदित करते हैं कि :—

जिन लोगों का यह अपराध प्रमाणित हुआ है वा होगा कि उन्होंने ब्रिटिश प्रजा-हत्या करने में प्रत्यक्ष रूप से भाग लिया था, उन अपराधियों पर दया दिखाना न्याय के विरुद्ध होगा। उनको छोड़ और सब अपराधियों के प्रति हम लोग दया दिखावेंगे।

जिन लोगों ने हत्यारों को जान बूझ कर आश्रय दिया था, वा जो लोग इस विद्रोह के अगुआ वा भड़कानेवाले थे, उनको केवल प्राणदान दिया जायगा। परन्तु उन लोगों के लिये दण्ड स्थिर करने में इस बात का पूरा बिचार किया जायगा कि उनको कैसे घटनाचक्र में पड़ कर अपनी राजभक्ति से च्युत होना पड़ा था। कुचक्रियों की झूठी बातों में पड़ कर जिन सरलचित्त सहजविश्वासी व्यक्तियों ने अपराध किया था उन लोगों के प्रति विशेष दया दिखाई जायगी।

इनके अतिरिक्त विद्रोह में सम्मिलित अन्य सब व्यक्तियों को, उनके सब अपराधों को भूल कर दया दिखाते हुए, हम क्षमा करने का वचन देते हैं यदि वे अपने अपने घरों में लौट कर शान्ति पूर्वक स्वच्छन्दता से जीविका निर्वाह करने लग जांय।

हमारी यही इच्छा है कि जो कोई आगामी १ली जनवरी तक इन नियमों को स्वीकार करेंगे उन सभी के प्रति यहां दया और क्षमा दिखाई जायगी।

जब ईश्वर की कृपा से भारत में आभ्यन्तरिक शान्ति स्थापित हो जायगी तब हमारी अन्तःकरण से इच्छा है कि भारत के शान्तिमय उद्योगधन्धों को उत्तेजना दें तथा सर्व साधारण के उपकार और उन्नति के कार्य्यों की वृद्धि करें और राज्य शासन उसकी प्रजा के हित की दृष्टि से किया करें। उनकी सुखसमृद्धि में ही हमारी शक्ति, उनके सन्तोष में ही हमारी रक्षा और उनकी कृतज्ञता ही हमलोगों के लिये सर्वोत्कृष्ट पुरस्कार होगा। सर्व शक्तिमान ईश्वर हमको और भारतस्थित हमारे कर्मचारियों को ऐसी शक्ति दें कि हम लोग भारतवासियों के मंगल के लिये अपनी इन मनस्कामनाओं को पूरी कर सकें।

महाराज सप्तम एडवर्ड का घोषणा पत्र भारत के नरेशों और प्रजाओं के नाम, नवम्बर २, १९०८

आज पचास वर्ष हुए कि हमारी प्यारी माता, इन राज्यों की पूर्वस्वामिनी महारानी विक्टोरिया ने, बहुत से गुरुतर कारणों से, पार्लिमेण्ट की सलाह और अनुमति से उन राज्यों का भार ग्रहण किया था जिनका शासन उस समय तक ईस्ट इण्डिया कम्पनी के हाथ में था। यथाविधि ग्रहण किये गये उस महान कार्य्य के स्मरण करने में भारत के नरेशों और प्रजाओं के अभिवादन का यह बहुत ही उचित वत्सर है। आप लोगों के बहुकालव्यापी जातीय जीवन के लिये अर्द्धशताब्दी का समय बहुत थोड़ा है, पर तौ भी आज जिस आधी सदी का शेष हुआ है वह आपके जातीय इतिहास में बहुत देदीप्यमान स्थान अधिकार करेगा। जिस दिन महारानी के स्वतः शासनभार ग्रहण करने की घोषणा हुई थी, उसी दिन मानों भारत सरकार की एकता पर छाप लग गई और उसी दिन से एक नये युग का आरम्भ होगया। मार्ग बहुत ही कठिन था और कभी कभी

मार्ग प्रदर्शन गति बहुत ही धीमी जान पड़ी हो ; परन्तु ब्रिटिश सरकार के निरीक्षण में भिन्न भिन्न जातियों और प्राय: तीस करोड़ मनुष्यों के एकत्रीकरण का कार्य धीरे धीरे बिना रुके हुए अग्रसर होता ही रहा है। हम इन पचास वर्षों के परिश्रम का निरीक्षण निर्मल दृष्टि से शुद्ध अन्त:करण पूर्वक करते हैं।

वे कठिनाइयां जो मनुष्यशासन में हर समय और हर स्थान पर हुआ ही करती हैं, समय समय पर उपस्थित होती रहीं हैं। ब्रिटिश सरकार के कर्मचारियों ने उन कठिनाइयों का सामना परिश्रम, साहस, सहिष्णुता, विचार तथा ऐसे दृढ़ संकल्प के साथ किया है जो न कभी विचला और न डिगा। जहां कहीं भूलें हुईं उनको सुधारने में हमारी सरकार के कर्मचारी किसी प्रकार के कष्ट वा स्वार्थ-त्याग से कभी पीछे नहीं हटे। जहां कोई दोष सिद्ध हुए उनके प्रतिकार में साहस पूर्वक परिश्रम किया गया।

अनावृष्टि और महामारी जैसे दैविक तापों से देश को बचाने में कोई साम्राज्य समर्थ नहीं होसकता। परन्तु मनुष्य की बुद्धि और परिश्रम से जहां तक सम्भव है हमारे अनुभवी शासकों ने इन दैवी तापों के निवारणार्थ परि-श्रम किया है। अब तक भारत के इतिहास में जहां तक दृष्टि पंहुच सकती है उससे कहीं अधिक काल पर्य्यन्त आपका देश

युद्ध विग्रह के घोर दुखों से बचा रहा और देश में शान्तिका अखण्ड राज्य बना रहा।

१८५८ के उदार शासनपत्र में महारानी विक्टोरिया ने आप लोगों को यह निश्चय दिलाया था कि शान्तिमय व्यापार सम्बन्धी धन्धों को उत्तेजित करने तथा सर्व साधारण की भलाई और उन्नति के कार्य्यों को करने और समस्त देश-वासियों के लाभ के लिये ही देश के शासन करने की उनकी प्रबल इच्छा है। आप लोगों के सांसारिक सुख और उन्नति साधन के लिये जिन महान कार्य्यों का संकल्प और आरम्भ किया गया है, (इतने बड़े और ऐसे साहस के कार्य्य अब तक नहीं हुए थे) उनसे संसार के आगे यह स्पष्ट हो जाता है कि उक्त प्रतिज्ञायें किस उत्साह के साथ पूरी की गई हैं।

करद तथा मित्र राज्यों के स्वत्वों और अधिकारों का आदर तथा रक्षा की गई है। वे लोग भी अपनी राजभक्ति से तनिक भी नहीं डिगे हैं। धार्मिक विचारों वा उपासनादि के कारण हमारी प्रजा में से किसी का न पक्षपात किया गया है, और न किसी पर बाधा विपत्ति डाली गई है। कानून ने सब किसी की रक्षा की है। कानूनों को वर्त्तने के समय भी वर्ण,धर्म वा पुराने रस्म-रिवाजों की मर्यादा रक्षा की गई है। इन कानूनों का रूप सरल कर दिया गया है। और उनके कार्य्यकारी अवयवों की नियति इस प्रकार से ठीक करदी गई

है कि वे पुरानी, परन्तु धीरे धीरे नई सृष्टि की ओर अग्रसर होने वाली, जाति की आवश्यकताओं को पूरी कर सकें।

हमारी सरकार के हाथ अगणित मनुष्यों का भाग्यसूत्र युग युग के लिये सौंप दिया गया है। हम लोगों का यह सब से पहला काम है कि अपराधियों के उन षड़यन्त्रों का, जिनका न कोई कारण है, और न कोई उद्देश्य है, दृढ़ता पूर्वक दमन करदें। हमको यह मालूम है कि भारतवर्ष की राज-भक्त और विश्वास पात्र प्रजा में ऐसे असंख्य लोग वर्त्तमान हैं, जिन्हें इस षड़यन्त्र से बड़ी घृणा है। मैं उनको ऐसा कदापि नहीं करने दूंगा कि वे लोग मुझ को लाचार होकर शान्ति और नियम स्थापित करने से मुंह मोड़ने दें।

हम नहीं चाहते कि ऐसा ऐतिहासिक वार्षिकोत्सव दया और क्षमा दिखाये बिना ही जाने दिया जाए, इसलिये मैंने आज्ञा दी है कि—जैसा कि १८०३ के राज्याभिषेक के प्रसिद्ध दरबार के समय हुआ था—कानून का उल्लंघन करने के कारण जिन अपराधियों को अदालतों से सज़ा मिली है, उनकी सज़ा या तो माफ कर दी जाय वा कुछ कुछ घटा दी जाय। हमारी इच्छा है कि ये अपराधी इस दया को स्मरण रखें और भविष्यत में कोई अपराध न करें।

बराबर ऐसा उपाय किया जा रहा है, जिससे सरकारी पदों वा अधिकारों पर पहुंचने के लिये जाति पांति के कारण कोई बाधा न होने पावे। मेरी यह इच्छा है, तथा मुझे

पूरा भरोसा है कि आज से जैसे जैसे विद्या का प्रचार होता जायगा, अनुभव की वृद्धि होती जायगी, तथा भारत के चतुर, योग्य पुरुष अपने दायित्व को समझने लगेंगे वैसे वैसे इस ओर ध्रुव उन्नति होती जायगी।

आरम्भ से ही प्रतिनिधिसत्ताक संस्थाओं का प्रचार क्रमशः होता आया है अब हमारे प्रतिनिधि तथा गवर्नर जेनरल और अन्य मन्त्रियों की राय में ऐसा समय आ पहुंचा है कि वैसी संस्थाओं का बुद्धिमानी से और भी प्रचार किया जा सकता है। ब्रिटिश शासन के कारण जैसे प्रशस्त विचारों का प्रचार हुआ है, वैसे विचार रखने वाले मुख्य २ श्रेणियों के लोग ब्रिटिश साम्राज्य के नागरिकों के स्वत्व और कानून बनाने तथा शासन करने में विस्तृत अधिकार मांगने लगे हैं। यदि उनकी मांग कौशल पूर्वक पूरी की जाय तो ह्रास होने के बदले अधिकारियों के बल की पुष्टि ही होगी। यदि उन कर्मचारियों को, जिनके हाथ शासन भार है, शासितों और उनके प्रतिनिधियों तथा अगुओं से मिलने-जुलने का अवसर बराबर मिलता रहे तो शासन कार्य्य और भी उत्तम होगा। इन उद्देश्यों की पूर्त्ति के लिये जो नियम यत्न पूर्वक बनाये जारहे हैं उनकी बात यहां नहीं कहूंगा। वे शीघ्र ही आप लोगों पर विदित किये जांयगे, और मुझे विश्वास है कि उनसे आपकी उन्नति का एक नवीन अध्याय आरम्भ होगा।

मैं भारतीय सेना की वीरता और स्वामिभक्ति को स्वीकार करता हूं। उनके वीरोचित स्वभाव नियमपालन तथा कार्य्य-तत्परता के कारण मैं कितना प्रसन्न हुआ हूं, उसको मैंने नये वर्ष के अवसर पर वास्तविक रूप से दिखाने की आज्ञा दी है।

भारत की श्रीवृद्धि का विषय महारानी विक्टोरिया के हृदय की सब से प्यारी वस्तु थी। १८७५ ई० में जब से मैंने भारत का भ्रमण किया है, तब से वहांके राजाओं और प्रजाओं के हितके प्रश्नों का ऐसे आग्रह और प्रेम से चिन्तन करता हूं जिसको समय किसी प्रकार कम नहीं कर सकता। हमारे प्यारे पुत्र युवराज अपनी युवराज्ञी सह आपके देश का भ्रमण कर उक्त देश के प्रति प्रगाढ़ प्रेम और उसके सुख और संतोष के लिये सच्ची इच्छा लेकर लौटे हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि भारत के प्रति हमारे वंश के राजपुरुषों की सच्ची सहानुभूति और आशा इस राज्य के मनुष्यों की सम्मिलित इच्छा का यथार्थ द्योतक है।

ईश्वर की कृपा से उभय पक्ष की उस सुमति और परस्पर सद्भाव की वृद्धि हो, जो एक ऐसे महान कार्य्य के लिये आवश्यक है जो कि इतिहास के आरम्भ से आज तक किसी बड़े से बड़े साम्राज्य के बांटे पड़ा था।

सम्राट् पंचम जौर्ज का संदेश राज्याभिषेक के समय—१२ दिसम्बर, १९११।

आज आप लोगों के सान्मुख उपस्थित होते हुए मेरे हृदय में कृतज्ञता और सन्तोष के भाव उदय होते हैं। यह वर्ष मेरे और मेरी महारानी के लिये बहुत से बड़े बड़े उत्सवों और असामान्य तथापि सुखद परिश्रम के भार ग्रहण का रहा है। इतना समय बीतने पर भी और इतनी दूर रहते हुए भी भारतभ्रमण की कृतज्ञतापूर्ण पूर्वस्मृति हम लोगों को फिर भी उसी देश में खींच लाई है, जिसके स्नेह ने उसी समय हमारे हृदय पर अधिकार कर लिया था और बहुत बड़ी आशा से हम लोग ने उसी दूर देश की यात्रा के लिये प्रस्थान किया जहां हम लोगों को पहले घर का सुख मिल चुका था।

ईश्वर की कृपा से २२ जून को वेस्टमिनिस्टर के गिरजे में हमारे पूर्व पुरुषों का मुकुट यथा विधि और प्राचीन रीति विधान पूर्वक हमारे सिर पर रख कर जो राज्याभिषेक हुआ था और उसकी सूचना स्वयं आकर देने का जो सन्देशा मैंने गत जुलाई में भेजा था उसे आज मैंने पूरा किया।

महारानी के साथ स्वयं यहां आकर मैं यह भी दिखाने के लिये उत्सुक हूं कि मैं यहां के राज-भक्त नरेशों और

प्रजाओं को कैसी स्नेह की दृष्टि से देखता हूं और भारत साम्राज्य की भलाई और सुख हमारे हृदय को कैसी प्यारी वस्तु है।

इसके अतिरिक्त हमारी यह भी इच्छा थी कि जो लोग अभिषेक के उत्सव पर उपस्थित न हो सके थे, वे लोग उस उत्सव के स्मारक स्वरूप इस दिल्ली के दरबार में उपस्थित हों।

इस वृहत् समुदाय को देख कर, जिसमें भारत साम्राज्य के गवर्नर, विश्वस्त कर्मचारी, बड़े बड़े राजा महाराजा, प्रजा के प्रतिनिधि और सेना के नियुक्त वीर शामिल हैं, महारानी को और मुझे सच्चा आनन्द और सन्तोष प्राप्त होरहा है।

वे जिस राजभक्ति और वश्यता की पुष्पाञ्जलि को सत्य-निष्ठा से अर्पण करना चाहते हैं उसे मैं आज हृदय से प्रसन्न होकर स्वयं स्वीकार करूंगा।

यह देखकर कि इस प्रसिद्ध ऐतिहासिक अवसर पर भारतके नरेश तथा प्रजा सहानुभूति और परस्पर के प्रेम पूर्ण सद्भाव में मेरे साथ एक सूत्र में बंधे हुए हैं, मेरे हृदय पर बड़ा प्रभाव पड़ा है।

इस अभिषेक की स्मृति में इन भावों के प्रमाण स्वरूप मैंने कुछ विशेष अनुग्रह देखाने का निश्चय किया है, जिसकी सूचना हमारे गवर्नर जेनरल द्वारा इस समुदाय को आज ही आगे चलकर दी जायगी।

अन्त में मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि हमारे पूजनीय पूर्व पुरुषों ने आपके स्वत्वाधिकारों की रक्षा करने को जो

सब प्रतिज्ञायें की थीं, उनको तथा आपके सुख, शान्ति और मंगल की जो मेरी प्रबल कामना है, उसको स्वयं दुहराने का अवसर मुझे मिला है।

दयामय परमेश्वर हमारी प्रजा की रक्षा करें, और हमें उनके सुख, समृद्धि की वृद्धि करने में सहायता दें।

उपस्थित नरेशों और प्रजावृन्द को प्रेम पूर्वक अभिवादन करताहूं।

दिल्ली दरबार के बाद जहां यह घोषणापत्र प्रचारित हुआ था, जब सम्राज्ञी समेत सम्राट, दिसम्बर १९१२ में कलकत्ता पधारे थे, उस समय कलकत्ता विश्वविद्यालय के सेनेट ने स्वागत करते हुए उनको एक अभिनन्दन पत्र दिया था। उसके उत्तर में सम्राट का जो भाषण हुआ था वह प्रजा के लिये, विशेष कर विद्यार्थियों के लिये, कुछ कम महत्व का नहीं है।

अभिनन्दन पत्र तथा उसका उत्तर—दोनो का अनुवाद नीचे दिया जाता है। उसके पढ़ने से साहस और उत्साह बढ़ेगा, तथा विचार करने का अवसर मिलेगा। दरभङ्गा लाइब्रेरी के भवन में जहां आज कल विश्वविद्यालय का काम होता है, दोनों संगमरमर पर मुद्राङ्कित है। इनमें सम्राट का सन्देशा यथानुरूप स्वर्णाक्षरों में है।

कलकत्ता विश्वविद्यालय की ओर से सम्राट् और सम्राज्ञी की सेवा में दिया गया अभिनन्दन पत्र, जनवरी ६, १९१२।

प्रबल प्रतापान्वित सम्राट, सम्राज्ञी की सेवामें,—

प्रभो,

सच्ची निष्ठा और राज-भक्ति युक्त हृदय से आज हम लोग, कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि, कृपालु सम्राट और सम्राज्ञी की सेवा में अभिनन्दन पत्र अर्पण करने का गौरव प्राप्त करते हैं। जिस बड़े सम्राट और सम्राज्ञी ने गत जून में लण्डन में मनाये गये राज्याभिषेक का उत्सव हमारे पुराने राजाओं की राजधानी दिल्ली में करने को स्वयं पधार कर हमारे प्यारे देश के प्रति श्रद्धा और प्रेम को उत्तम रूप से दर्शाया है, उनके प्रति कृतज्ञता प्रकाश करते हुए हमलोग अन्य भारतवासियों समेत फूले अंग न समाते हैं। उसके अतिरिक्त हमलोग—कलकत्ता विश्वविद्यालय के सदस्य—उस शुभ अवसर को विशेष गौरव और कृतज्ञता से स्मरण करते हैं, जब कि आज से छः वर्ष पहले श्रीमान् ने, जो उस समय युवराज थे, बड़ी कृपा कर हमारे यहां के 'आनरेरी डाक्टर आफ ला' की श्रेणी में सम्मिलित होना

स्वीकार किया था। हम लोगों को वह दिन भी याद आता है, जब कि श्रीमान् के पूज्य पिता, पुण्यस्मृति स्वर्गीय सम्राट सप्तम एडवर्ड ने यह उपाधि स्वीकार कर विश्वविद्यालय का गौरव बढ़ाया था। अब हम लोग यह अभिमान के साथ कह सकते हैं कि श्रीमान् के राजवंश और इस विश्वविद्यालय से जो सम्बन्ध उस समय स्थापित हुआ था, वह अब वंशपरम्परागत हो गया है।

इस शुभ अवसर पर हम लोग यह कहने का साहस कर सकते हैं कि हम लोग केवल कलकत्ता विश्वविद्यालय अथवा भारत के समस्त विश्वविद्यालय ही नहीं बरन विश्वविद्यालय में शिक्षाप्राप्त भारत के जनसमुदाय मात्र की ओर से प्रतिनिधि स्वरूप उपस्थित हुए हैं। इतने बड़े समुदाय की ओर से कृतज्ञता प्रकाश करने की भिक्षा मांगते हैं। ग्रेट-ब्रिटेन के साथ सम्बन्ध होने से भारत को जो असंख्य लाभ और मंगल हुआ है, उसके लिये भारत ऋणी है। यह लाभ इतना अधिक परिमाण में हुआ है कि उसका वर्णन करना कठिन है। परन्तु एक लाभ ऐसा है जो श्रेष्ठतम लाभों में से एक है, और जिसका विशेष रूप से उल्लेख करना विश्वविद्यालय के प्रतिनिधियों के लिये उचित ही नहीं, बरन कर्त्तव्य है। हम लोगों का उद्देश्य पूर्व और पश्चिम के उस सम्मिलन से है, जिससे पश्चिम के आधुनिक कलाकौशल, ज्ञान, विज्ञान, साहित्य और सभ्यता का अतुल

भाण्डार हम लोगों को सुलभ होगया है। इसमें सन्देह नहीं कि हमारे पूर्व पुरुषों ने ज्ञान विज्ञान में जो कुछ उन्नति की थी, उसे हम, भारतवासी श्रद्धा और गौरव की दृष्टि से देखते हैं; परन्तु साथ ही साथ हम लोग यह भी स्वीकार करते हैं कि अपने देश की महत्ता और सुख बढ़ाने तथा संसार की उन्नतिशील जातियों के बीच आदर का स्थान पुनः प्राप्त करने के लिये हम लोगों को सब से पहले परिश्रम कर के सब ज्ञान विज्ञान, कला-कौशल से सुसज्जित होना पड़ेगा। अतएव, जब हम लोग उस दयालु सम्राट के निकट उपस्थित होते हैं, जो भारत और ग्रेटब्रिटेन के सुखमय सम्मिलन और तज्जनित फल की साक्षात् मूर्त्ति है, उस समय हम, भारत के विश्वविद्यालयों के प्रतिनिधि, उस विधाता के प्रति कृतज्ञता प्रकाश किये बिना नहीं रह सकते, जिसने भारत का भाग्य-सूत्र पश्चिम के देशों में से ग्रेटब्रिटेन जैसे उन्नतिशील, सभ्य देश के साथ बांध दिया है। हम लोग उन शासकों के प्रति भी कृतज्ञता प्रकाश किये बिना नहीं रह सकते, जिन्होंने सर्वसाधारण में विद्या प्रचार करने की सहानुभूति और दूरदर्शितापूर्ण नीति का आरम्भ, बहुत दिन हुए, किया था, और अब भी उसी पथ पर चल रहे हैं जिससे आधुनिक ज्ञान का प्रकाश सारे देश में क्रमशः फैल रहा है। इस कृतज्ञता को प्रकाश करने के साथ साथ उचित है कि हम लोग एक और निवेदन करें। हम भारतीय विश्वविद्यालयों का कृपालु सम्राट

के निकट यह विनीत निवेदन है कि ज्ञान विज्ञान के प्रचार से जो भारत का पुनर्गठन हो रहा है, उसमें हम लोगों का स्थान शीर्षस्थानीय है। इस पद के कारण हम लोगों पर कितना बड़ा काम और दायित्व है, वह हम लोगों को स्पष्ट मालूम है। हम लोग यह भलीभांति समझते हैं कि देश को सभ्यता और शिक्षा के रास्ते पर चढ़ाना और चलाना ही हम लोगों का कर्त्तव्य नहीं है, वरन उसे सुमार्ग दिखाना तथा उसे पथभ्रष्ट न होने देना भी हमारा धर्म है। हठात् नई शिक्षा मिलने से नवयुवकों के मनमें उन रक्षणशील शक्तियों के प्रति घृणा वा अश्रद्धा उत्पन्न हो जाती है, जिन शक्तियों के अर्थात् नियमों के प्रति श्रद्धा, कानून तथा अच्छे रस्म-रिवाजों के आदर और देश में स्थापित सरकार के प्रति भक्ति के बिना किसी भी जाति का मंगल नहीं हो सकता है, और न कोई उन्नति कर सकती है। इस विपत्ति से बचाने के लिये यथासाध्य यत्न करना भी हमारा कर्त्तव्य है।

हम लोग सम्राट के निकट यह निवेदन करने का साहस करते हैं कि यद्यपि हम लोग ज्ञानशक्ति की निःसीम वृद्धि के प्रयासी हैं, तथापि राजनैतिक, सामाजिक और नैतिक शक्तियों के संरक्षण के भी कुछ कम उत्सुक नहीं है। हम लोग भारतवर्ष, ग्रेटब्रिटेन और उसके राजवंश के परस्पर मित्रता-बन्धन को सुदृढ़ करने को अपना सब से श्रेष्ठ कर्त्तव्य समझेंगे। यह सोच कर हम लोगों को बड़ा आनन्द होता है

कि ईश्वर की कृपासे हम लोगों को भी उस महान कार्य्य को सुचारु रूप से सम्पादित करने में भाग लेनेका अवसर प्राप्त होगा, जिसको संसार भर में फैले हुए ब्रिटिश साम्राज्य ने मनुष्यमात्रकी भलाई के लिये अपने ऊपर लिया है।

कलकत्ता विश्वविद्यालय के अभिनन्दन पत्र का उत्तर जो सम्राट् पंचम जौर्ज ने दिया था।

उस अवसर का स्मरण करते हुए मुझे हर्ष होता है, जब आजसे छः वर्ष पहले मुझे कलकत्ता विश्वविद्यालय से 'डाक्टर आफ् ला' की उपाधि मिली थी। मुझे इस बात का हर्ष है कि आज हमें भारत में उच्च शिक्षा के प्रति अनुराग प्रगट करने का अवसर मिला है। योरप और भारत की सभ्यता और उच्चाभिलाष के जिस सम्मिलन पर भारतका भावी मंगल अवलम्बित है, उसमें मुझे भारत के विश्वविद्यालयों से बड़ी सहायता मिलने की आशा है। शिक्षा के उद्देश्य

और कोटि की उन्नति के लिये विश्वविद्यालयों ने जो समय समय पर कार्य्य किये हैं, उनको मैं बड़ी सहानुभूति से देखता रहा हूं। अभी भी बहुत कुछ बाकी है। आज कल कोई भी विश्वविद्यालय पूरा नहीं समझा जाता है, जिसमें कला और विज्ञान के प्रधान प्रधान अंगो को पढ़ाने का प्रबन्ध नहीं है, और जिसमें अनुसन्धान करने का पूरा अवसर नहीं दिया जाता। आप लोगों को प्राचीन विद्या की रक्षा के साथ साथ पश्चिमीय विज्ञान का भी प्रचार करना है। आप लोगों को चरित्रसंगठन भी करना पड़ेगा, जिसके बिना विद्या किसी काम की नहीं है। आप लोगों ने कहा है कि आप लोगों को अपने दायित्व का ज्ञान है। मेरी कामना है कि अपने काम में आपकी द्रुतगति हो। आपके सङ्कल्प ऊंचे हों, और उसको प्राप्ति के यत्न निरन्तर करते रहिये; ईश्वर की कृपा से अवश्य सफलता होगी।

छः वर्ष हुए कि मैंने इंगलैण्ड से सहानुभूति का सन्देशा भारत को भेजा था। आज मैं भारत को "आशा" का मन्त्र देता हूं! चारों ओर मैं नवीन जीवन के लक्षण और चिन्ह देखता हूं। शिक्षा से आप लोगों को आशा मिली है; उच्चतर तथा अच्छी शिक्षा से यह आशा और भी ऊंची और अच्छी होजायगी। मेरी आज्ञा से दिल्ली में प्रचार किया गया था कि अब से सकौन्सिल मेरे गवर्नर जनरल शिक्षा-विस्तार और उन्नति के लिये अधिक धन व्यय किया करेंगे।

मेरी इच्छा है कि देशमें स्कूल, कालेजों का जाल बिछ जावे, जिनमें से ऐसे राज-भक्त, पुरुषार्थी, और उपकारी नागरिक निकलें जो कृषि, वाणिज्य तथा जीवन के अन्य धन्धों में प्रतियोगिता में अपना स्थान रख सकेंगे। मेरी यह भी इच्छा है कि ज्ञान के विस्तार से मेरी भारतीय प्रजा के घरों में उजेला हो, और परिश्रम में आनन्द मिले, उनके विचार उच्च हों, और उनको शारीरिक तथा मानसिक सुख मिले। मेरी यह अभिलाषा शिक्षाप्रचार से ही पूरी होगी, और भारत में शिक्षाविस्तार का विषय मेरे मन का सहचर रहैगा।

मेरे और मेरे राजवंश के प्रति भक्ति दिखाने, ग्रेट-ब्रिटेन और भारत के पारस्परिक सम्बन्ध को दृढ़ करने, और अंगरेजी राज्य जनित लाभों की गुणग्राहकता दिखाने का जो आप लोगों ने आश्वासन दिया है, उससे मैं संतुष्ट हुआ हूं। मैं आप लोगों को इस श्रद्धा भक्तिपूर्ण आवेदनपत्र के लिये धन्यवाद देता हूं।

द्वितीय अध्याय।

संरक्षण के कार्य्य।

धार्मिक विषयों में तटस्थता—पूर्वीय विद्या का प्रचार—देशी कानून और रस्मरिवाजों का मान—लगान की पुरानी प्रथा को जारी रखना—पुराने समय में गांवों की पुलिस—पुराने विचारालय—पञ्चायत।

महारानी की १८५८ वाली घोषणा से सब वर्ण धर्म-वालों को धार्मिक विचारों और उपासनादि की स्वतन्त्रता का अभयदान मिला था। भारतवासियों के शरीर, धर्म्म और विचारों को तिरस्कार और अपमान से बचाने के लिये सकौन्सिल गवर्नर-जेनरल को कानून और नियम बनाने की आज्ञा १८३३ की सनद से हुई थी। उसी सनद से यह भी प्रचारित किया गया था कि कोई भी व्यक्ति अपने धर्म्म के कारण किसी पद के अयोग्य नहीं समझा जायगा। १८६० में जो भारतीय दण्डविधान (इण्डियन पीनल कोड) पास हुआ है, उसमें भी धार्मिक विचारों को अपमान और तिरस्कार से रक्षा करने का विधान है। उस विधान के

अध्याय १५ की २८५—२८८ धाराओं में धर्म्म सम्बन्धी अपराधों की व्यवस्था है। ब्रिटली स्टोक्स ने कहा है कि "हर किसी को अपने धर्म के अनुसार चलने देना चाहिये, और किसी को दूसरे के धर्म का अपमान नहीं करने देना चाहिये—इन्हीं सिद्धान्तों पर ये विधान बने हैं"। *

भारतवर्ष में व्यक्तियों को धार्मिक विषयों में पूरी स्वतन्त्रता है, क्योंकि (१) हर किसी को अपने धर्म के मानने और उसके अनुसार चलने का अधिकार है। (२) कोई अपने धर्म के कारण किसी भी पद के अयोग्य नहीं समझा जायगा। (३) १८५४ के सरकारी खरीते के अनुसार किसी भी सरकारी स्कूल या कालेज में न तो धार्मिक परीक्षा ली जायगी और न धार्मिक शिक्षा ही दी जायगी। † विश्वविद्यालय के नियमानुसार परीक्षार्थियों से ऐसा प्रश्न नहीं किया जायगा, जिसमें उन्हें अपना धार्मिक विचार प्रकट करना पड़े। इंगलैण्ड जैसे देश में भी ये अधिकार अभी हाल ही में दिये गये हैं,—इसका स्मरण करने से इन अधिकारों का महत्व प्रकट होता है। १८२९ ई० में ही कार्थलिक रिलीफ ऐक्ट बना था, १८५८ तक यहूदियों की रक्षा का कानून नहीं बना था। तीन शताब्दियों तक लड़ते झगड़ते रहने के उपरान्त इंगलैण्ड में लोगों को

---

* ऐङ्गलो इण्डियन कोड्स, भाग १, पृष्ठ ३२।

† इम्पीरियल गजेटियर आफ इण्डिया। भाग ४, पृष्ठ ४४७।

धार्मिक स्वतन्त्रता मिली थी। परन्तु भारतवर्ष को शुरु में ही स्वयं शासकों ने इस स्वतन्त्रता का प्रदान किया है। काथलिक रिलीफ ऐक्ट के चार वर्षों के बाद 'चार्टर ऐक्ट' बना था, और जिस साल यहूदियों की रक्षा का कानून बना था, ठीक उसी साल महारानी का घोषणापत्र निकला था।

शिक्षा से ही विशेष कर मनुष्यों के विचार, चरित्र और जीवन प्रणाली का संगठन होता है। ब्रिटिश शासकों ने शिक्षा प्रचार करने की देशी पुरानी संस्थाओं अर्थात् हिन्दुओं के 'टोल' और मुसलमानों के 'मकतब' और 'मदरसों' के साथ कभी छेड़छाड़ नहीं की।* हाल में भी, परीक्षा लेकर, छात्रवृत्ति बांट कर, परीक्षार्थियों को उपाधि प्रदान कर और शिक्षकों को वेतन तथा ईनाम बांट कर इन पाठशालाओं की सहायता की गई है। भिन्न भिन्न प्रदेशों में पूर्वीय ज्ञान की शिक्षा के लिये स्कूल और कालेज बने हैं। वारन हेस्टिंगस ने मुसलमानों के लिये १७८२ ई० में कलकत्ता मदरसा खोला। संस्कृत की पढ़ाई के लिये १७९१ ई० में बनारस में संस्कृत कालेज स्थापित हुआ। इसका उद्देश्य हिन्दुओं की पवित्र नगरी काशी में उनके

---

* देशी शिक्षाप्रणाली का संक्षिप्त विवरण 'इम्पीरियल गजेटियर' भाग ४ पृष्ठ ४०७—४०९ में मिलेगा। कब कहां कितने 'टोल' थे उनका वर्णन पी, एन्, बोस रचित 'हिन्दू सभ्यता का इतिहास' भाग ३, पृष्ठ १५५ में मिलेगा।

नियम, साहित्य और धर्म की रक्षा करने का था। वहां आयुर्वेद को छोड़ अन्य विषयों को पढ़ाने के लिये ब्राह्मण अध्यापक ही नियुक्त करने की व्यवस्था हुई थी। हिन्दुओं के धर्म्मशास्त्र के शिक्षाप्रकरण में जिन नियमों का उल्लेख किया गया है उन्हीं नियमों की सहायता से उस कालेज की नियमावली बनी थी। *

१८१३ के चार्टर ऐक्ट में एक धारा थी जिसमें साहित्य के उद्धार और उन्नति करने, तथा देशके विद्वानों को सहायता देने, और अंगरेजी प्रजा में विज्ञान की शिक्षा और चर्चा फैलाने में प्रति वर्ष एक लाख रुपया खर्च करने की आज्ञा दी गई थी। यह रुपया देशी कालेजों को चलाने, विद्यार्थियों को वृत्ति देने और पूर्वीय भाषा के ग्रन्थों के प्रकाश करने में व्यय होता था। † १८२१ ई० में पूना में एक संस्कृत कालेज खोला गया। लाट एमहर्स्ट ने कलकत्ते में १८२४ में संस्कृत कालेज खोला। पहले पहले ब्राह्मण विद्यार्थियों को ही वृत्ति मिलती थी और वही उस कालेज में भर्त्ती हो सकते थे। परन्तु आज कल वह रुकावट नहीं है, अब हिन्दूमात्र के लड़के वहां लिये जाते हैं। पूर्वीय ढंग

---

* पी, एन्, बीस रचित 'अंगरेजी राज्य में हिन्दुओं की सभ्यता का इतिहास' नामक अंगरेजी पुस्तक (भाग ३, पृष्ठ १५९) और उसमें उल्लिखित प्रमाणों को देखो।

† इम्पीरियल गजेटियर भाग ४, पृष्ठ ४०९।

की शिक्षा देनेके लिये आगरा और दिल्ली में, १८२४—१८२५ के बीच में, कालेज बने थे। परन्तु शीघ्र ही उस पुराने ढंग के साथ साथ अंगरेजी की भी शिक्षा दी जाने लगी। कालेजों के पाठ्यक्रम में भूगोल और गणित शामिल किये गये। कलकत्ते के संस्कृत कालेज और आगरा कालेज में अंगरेजी का क्लास खुला और दिल्ली तथा बनारस में अंगरेजी पढ़ाने के लिये जिला स्कूल स्थापित हुए। *

शिक्षा की तरह कानून के विषय में भी ईस्ट-इण्डिया कम्पनी की इच्छा थी कि पुरानी बातों में जहां तक हो सके कम परिवर्त्तन किया जाय। वारन हेस्टिंगस द्वारा पास किये गये १७७२ के एक नियम † में लिखा है कि उत्तराधिकार, ब्याह, जाति तथा धर्म सम्बन्धी रस्म-रिवाजों के मुकद्दमों में मुफस्सिल की अदालतों में मुसलमानों के प्रति कुरान-शरीफ और गेन्टुओं ‡ (हिन्दू इसी नाम से पुकारे जाते थे) के प्रति शास्त्र के विषयों पर ध्यान रखा जायगा। अन्यत्र १७८१ के रेगुलेशन में लिखा गया है कि जिन विषयों पर कोई विशेष विधिव्यवस्था

---

* पी, एन, बोस रचित इतिहास, भाग ३, पृष्ठ १६४।

† २१ वीं अगस्त के जुडिशियल रेगुलेशन की धारा नं० २३।

‡ डा० मी, डी, फील्ड का कथन है कि 'गेन्टू' शब्द पोर्चुगीजों के 'जेन्शियो' (gentio) से निकला है, जिसका अर्थ नास्तिक वा मूर्तिपूजक है। आगे चलकर यह भारतवासियों (हिन्दुओं) के प्रति प्रयोग किया जाने लगा।

नहीं की गई है, वहां विचारकों को न्यायपरता, समदर्शिता और विशुद्ध विवेक बुद्धि के अनुसार कार्य्य करना पड़ेगा। १७८१ में पास हुए पार्लिमेण्ट के एक कानून * के अनुसार कलकत्तावासियों के सब प्रकार के मुकद्दमों में सुप्रीम-कोर्ट का अधिकार होगा, परन्तु भूमि, कर, तथा सम्पत्ति के उत्तराधिकार तथा सब प्रकार के एकरारनामों में मुसलमानों के मुकद्दमों का फैसला मुसलमानी कानून और हिन्दुओं का मुकद्दमा हिन्दुओं के धर्म शास्त्र से किया जायगा, और जहां एक पक्ष में मुसलमान वा हिन्दू होगा, और दूसरे पक्ष में भिन्न जाति का व्यक्ति होगा, वहां प्रतिवादी के नियमों और रस्म-रिवाजों के अनुसार फैसला होगा।

उपर्युक्त कानून में † यह भी कहा गया था, कि "हिन्दू मुसलमानों के लौकिक और धार्मिक रस्म-रिवाजों का ख्याल रखते हुए, हिन्दू मुसलमान कुलपति वा घरके कर्तापुरुष को जितने अधिकार वा स्वत्व उनके धर्मशास्त्रों में लिखे कानूनों से मिले हैं, उनकी रक्षा की जायगी। अपनी जाति वा धर्म्मानुमोदित कार्य्यके लिये, चाहे वे कार्य्य अंगरेजी कानून में कितने ही नाजायज़ क्यों न हों, उन्हें किसी प्रकार का दण्ड नहीं हो सकता।"

---

* २१ जौर्ज ३, सी ७०, स०, १७।

† धारा नम्बर १८।

एक प्रसिद्ध लेखक ने कहा है—"अगर हम लोग भारत की अंगरेजी अदालतों में प्रयोग किये जानेवाले कानूनों का निरीक्षण करें, और यह पता लगावें कि उसमें कितना अंश अंगरेजी कानून का है, और कितना देशी कानून का तो हमलोग देखेंगे कि वारन हेस्टिंग्स ने जो प्रसिद्ध कानून * बनाया था, (यद्यपि उस कानून को मानने के लिये आज कल की व्यवस्थापक सभायें बाध्य नहीं हैं,) उसके अनुसार अब भी बहुत से ऐसे विषय हैं, जिनमें हस्तक्षेप करने में व्यवस्थापक सभायें अनिच्छा प्रकाश करती हैं, और उन विषयों को देश के कानून और रस्म-रिवाजों पर छोड़ती हैं। .....तथापि उसके अनुसार अब भी पारिवारिक नियमों में उत्तराधिकार का अधिकांश भारत-वासियों के जातीय नियमों पर स्थित है ; हां, हिन्दुस्तान की अंगरेजी व्यवस्थापक सभाओं ने कहीं कहीं कुछ थोड़ा फेर-फार वा अदल-बदल किया है। ब्याह करने, गोद लेने, अविभक्त-कुल (Joint family), बांट बखरा, उत्तराधिकार इत्यादि विषयों में हिन्दु अपना जातीय नियम पालन करते हैं। उसी प्रकार मुसलमान भी ब्याह, विरासत और वक़्फ इत्यादि विषयों में अपने जातीय कानून पर चलते हैं।" †

---

* २२ वीं अगस्त, १७७२ के रेगुलेशन में लिखा गया।

† सर कोर्टने इलबर्ट कृत—'भारत सरकार'—पृष्ठ ४०१।

जमीन के बन्दोवस्त की प्रथा का विस्तृत वर्णन अन्यत्र किया जायगा। यहां इतना कहना बस होगा कि इस विषय में भी अंगरेज शासकों ने यथासम्भव संरक्षण की नीति दिखलाई है। "जिस समय देशी राजतन्त्रका अधःपतन प्रायः हो गया था उस समय ईस्ट-इण्डिया कम्पनी ने शासनाधिकार अपने हाथमें लिया। परन्तु आरम्भ में जानकारी नहीं रहने के कारण वा अन्य कारणों से पुरानी बातों को उठा कर नई रीति चलाने का यत्न नहीं किया गया।" * "सारी प्रथा जिसका आरम्भ मुगल राज्य की बढ़ती के दिनों में हुआ था, उस समय अधोगति को प्राप्त हो चुकी थी। इस कारण उस समय जिस प्रथा का प्रचार था उसके मूल सिद्धान्तों को मानने के सिवाय और कोई दूसरा उपाय न था।" †

बम्बई प्रान्त में रैयतबारी प्रथा का प्रचार मरहट्टा सरकारके, जो अंगरेज सरकार के पहले थी, समय से ही चला आता था। यद्यपि मद्रास के विषय में यह बात नही कही जा सकती है, तथापि वहां कई जिलों में लगान की ऐसी हालत थी कि जिससे रैयतबारी प्रथा का प्रचार करना अनिवार्य था। ‡ समय समय पर कानून वा रेगुलेशन से

---

* वी, एच, बेडेन पोल कृत 'लैण्ड रेवेन्यु मैन्युवल' पृष्ठ ११४।

† बेडेन पोल कृत ग्रन्थ पृष्ठ ११८।

‡ वही पृष्ठ १२६।

नई बातों का प्रचार हुआ है, परन्तु अंगरेजी सरकार ने युक्तप्रदेश और पंजाब को छोड़ हर जगह पुराने ढंग पर ही लगान का बन्दोबस्त किया है। लगान के कानून की प्रधान शाखा जो "रेण्ट और रेवेन्यु ऐक्ट" में दर्ज है, तथा भिन्न २ प्रान्तों में उक्त विषय के रेगुलेशन यद्यपि देश की प्रथा पर ही बने हैं, तथापि उनमें अंगरेजी और देशी प्रथा का मिश्रण है। *

अंगरेजी राज्य के आरम्भ में गांवों की पुलिस की व्यवस्था कोई अच्छी नहीं थी, पर जो कुछ था वह पुराने ढंग पर ही चला जाता था। गांव का चौकीदार और गांव का मंडल (मुखिया) किसी प्रकार अपने काम से हटाया नहीं जा सकता था। मुगलों का राज्य जाते २ पुलिस का इन्तजाम भी बहुत विशृंखल हो गया था। छोटे-मोटे सरदार और जमीन्दार, जब उन्हें ऊपर का कोई डर न रहा, अपने आदमियों से आसपास के लोगों को जमीन लुटवाने लगे। इसी बुरी आदत की नकल गांवों के मंडल और चौकीदार भी करने लगे। चौकीदार लोग तो खुद चोरी करने लगे, और मंडल बदमाशों को अपने यहां रखने वा चोरी के माल का हिस्सा लेकर उनकी तरफ से आंख मूंदने लगे। ..... अंगरेजी राज्य के आरम्भ में भारत की यही अवस्था थी;

---

* सर कोर्टने इलबर्ट कृत 'भारतसरकार' पृष्ठ ४०

सुधार का सब से पहला काम यह हुआ कि जमीन्दारों से पुलिस के बन्दोबस्त का भार उठा कर जिला मजिस्ट्रेट के हवाले किया गया। प्रत्येक जिला, पुलिस के कामों के लिये प्रायः बीस वर्गमील के हिस्सों में बांट दिया गया। यह इलाका दारोगा के हाथ में दिया गया; इसकी मातहती में २० से ५० तक हथियारबन्द आदमी रखे गये, और चौकीदारों पर भी उनको अधिकार दिया गया।" * परन्तु यह बन्दोबस्त बेकाम निकला। तभी से पुलिस विभाग का संस्कार और पुनः संगठन होता रहा है।

मुसलमानी राज्य में विचार विभाग का जैसा प्रबन्ध था उसीके अनुसार कम्पनी के राज्य के आरम्भ में भी अदालतें बनी थीं। १७७२ † में हरेक कलक्टर के इलाके में एक दीवानी और एक फौजदारी अदालत कायम हुई। कम्पनी का कलक्टर दीवानी अदालत में बैठता था। फौजदारी अदालत में मुसलमानी कानून के अनुसार न्याय करने के लिये प्रत्येक जिले में काज़ी, मुफ्ती ‡ और दो मौलवी बैठते थे। कचहरियों में काम नियमानुकूल होता है या नहीं, विचार पक्षपात रहित होता है या नहीं—यह सब

---

* इम्पीरियल गजेटियर भाग ४, पृष्ठ ३८६।

† १५वीं अगस्त के रेगुलेशन से।

‡ मुसलमानी राज्य में विरासत के मुकद्दमों का फैसला करना काज़ियों का काम था। मुफ्ती मुसलमानी कानूनों की व्याख्या करता था।

देखना कलक्टर का काम था। दीवानी अदालतों की अपील सदर दीवानी अदालत में सुनी जाती थी, जहां कौन्सिल के सदस्य और सभापति बैठते थे, और खालसा (खज़ाना) के हिन्दुस्तानी अफसर उनकी सहायता करते थे। फौजदारी मुकद्दमों की अपील सदर निज़ामत अदालत में होती थी, जहां नवाब नाज़िम द्वारा बहाल किये गये प्रधान विचारक तथा प्रधान काज़ी, मुफ्ती और तीन प्रसिद्ध मौलवी बैठते थे। निज़ामत अदालत के फैसले पर कौन्सिल सहित सभापति का अधिकार था। *

पंचायत की प्रथा यहां बहुत पुरानी है। बंगाल और मद्रास में इन पंचायतों को सरकार ने भी स्वीकार किया है। ये गांवों के स्वायत्त शासन की देशी संस्थाओं के अंग स्वरूप थीं। पंचायत—जिसका अर्थ पांच आदमियों का समूह है——गांव के मुखियों के समूह को कहते हैं, ये मुखिया बहुत पुराने समय से गांव के सामाजिक तथा अन्य कानूनी मुकद्दमों का फैसला किया करते थे। आज कल इस पंचायत की प्रथा का उतना प्रचार नहीं है जितना कि पहले था। सरकार ने इसको उठाने की कभी चेष्टा नहीं की, बरन जब कभी अवसर मिला है उससे काम लेने की चेष्टा करती रही है, यद्यपि इसका आधुनिक प्रयोग पुराने अभिप्राय से पृथक रहा है।

* सी, डी, फील्ड कृत 'बंगाल कोड के रेगुलेशन की भूमिका' धारा १९१।

तृतीय अध्याय।

राजनीतिक उन्नति।

पश्चिमी विचारों और संस्थाओं का उन्नति के साधन स्वरूप समझ कर प्रचार—उनसे लाभ और अभिप्राय—कानून की समदर्शिता—नागरिकों के स्वत्व——गुलामी का उठा देना—खुल्लम खुल्ला न्याय करना—न्यायालय और व्यवस्थापक सभाओं की रिपोर्ट प्रकाशित करना—जिसमें न्यायका कार्य अच्छी तरह होवे उसका उपाय—फौजदारी कानून में वादी प्रतिवादी के लड़ने की रीति—व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के रक्षक—निर्दोष प्रमाणित करने की सुगमता—विना विचार किये कभी किसी को दण्ड नहीं होता—इस नियम का एकमात्र अपवाद—जूरी द्वारा न्याय—उससे लाभ—स्थानीय स्वायत्तशासन—उसका साम्राज्य से सम्बन्ध—स्थानीय सरकार और स्थानीय स्वायत्तशासन का भेद—प्रतिनिधि की सम्मति विना टैक्स नहीं लगाया जा सकता, यह एक अंगरेजी सिद्धान्त है—स्वायत्तशासन की देशजात संस्थाओं और आधुनिक संस्थाओं में अन्तर—निर्वाचन की प्रथा—इसकी क्रमिक उन्नति——यह उन्नति सफलता पर है—स्थानीय स्वायत्तशासन के उद्देश्य—उसके प्रसार की रीति।

अगले अध्यायों में यह सब दिखाने का बड़ा यत्न किया गया है कि अंगरेज शासकों ने आरम्भ से भारतवासियों की भलाई और प्रसन्नता का ख्याल रखते हुए, देश के कानूनों और संस्थाओं की रक्षा के लिये यथासम्भव कहां तक

प्रयत्न किया है। परन्तु सदैव उनकी इच्छा उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होने की रही है, इस हेतु उन्होंने पाश्चात्य भावों और संस्थाओं को यहां लाना और इस देश के अनुकूल बनाना आवश्यक समझा है। ऐसा करते हुए उन्हे इस बातका पूरा विश्वास रहा है कि ये संस्थायें और ये भाव अवश्य ही उन्नति के साधक होंगे; ये अवश्य ही देशवासियों के नैतिक और मानसिक बल की पुष्टि करेंगे, और अन्त में सांसारिक सुख समृद्धि की वृद्धि करने में सहायक होंगे।

आज तक जो सब सिलसिलेवार कानून ग्रन्थबद्ध किये गये हैं और जो 'कोड' वा 'ऐक्ट' के नाम से मशहूर हैं, सब आधुनिक विचारों के प्रदर्शक हैं। हर समय हर देश में 'कोड' की सृष्टि नहीं होती। कोड बनाने में यह लाभ है कि कानून स्पष्ट शब्दों में क्रमानुसार लिखा जाता है, इसकी विज्ञप्ति सारे संसार को हो जाती है, और चाहे कानून का विद्यार्थी हो वा कानून का पेशेवाला वकील हो, जज हो वा मजिस्टर वा साधारण व्यक्ति हो—सब कोई उसे जान सकता है, और उसका आशय समझ सकता है। बहुत दिन हुए कि ब्रिटिश पार्लिमेण्ट (महासभा) ने इस 'कोड' की उपयोगिता बतलाई थी। १८३३ के चार्टर ऐक्ट में कहा गया था कि "यह बहुत ही आवश्यक प्रतीत होता है कि शीघ्र ही हमारे राज्य में, स्थान विशेषों की विशेष आवश्यकताओं पर ध्यान रखते हुए, विचारालयों और पुलिस विभाग का ऐसा

प्रबन्ध किया जाय कि जिसकी अधीनता क्या युरोपियन और क्या भारतवासी—सब कोई बराबर स्वीकार करें। ऐसे ऐसे कानून बनाये जावें जो वहां की सब प्रकार की प्रजा पर बराबर ही लागू होवें और जो उन प्रजाओं के स्वत्व, विचार और रस्म-रिवाजों का भी ख्याल रखें। उन देशों में प्रचलित कानून और रिवाजों को जो कि कानून की तरह लागू होते हैं, पता लगाकर इकट्ठा करना चाहिये और समय समय पर आवश्यकतानुसार परिवर्त्तन करना चाहिये"* उसी ऐक्ट से सकौन्सिल बड़ेलाट को एक कमिशन बैठाने की आज्ञा हुई थी, जिस कमिशन का नाम 'भारतीय कानून कमिशन' था और जिसको प्रचलित कानूनों और विचारालयों के विषय में खोज पूछ कर रिपोर्ट करने की पूरी क्षमता दी गई थी; और यह रिपोर्ट महासभा के सामने पेश होने को थी। पहले 'भारतीय कानून कमिशन' का मुख्य सदस्य लाट मेकाले था।

यहां यह स्मरण रखना चाहिये कि महासभा के आज्ञानुसार, कोड बनाते समय अधिवासियों के स्वत्व, विचार और प्रचलित रस्म-रिवाजों पर ख्याल रक्खा जाता था और प्रचलित कानूनों—लिखित वा मौखिक——सब का पूरा पता लगाया जाता था। अन्यत्र—कानून की आंख में सब कोई बराबर हैं—यह सिद्धान्त स्पष्ट वाक्यों में कहा गया है।

---

* धारा ५३।

चाहे यूरोपियनहों, चाहे देशी—सब कोई विचारालयों और पुलिस के अधीन रहेंगे; कानून वैसे ही बनाये जायंगे जो सब जाति-पांति की प्रजा पर बराबर लगाये जा सकें। बड़े बड़े विद्वानों ने 'इण्डियन कोडस्' की शैली की प्रशंसा की है। एक प्रसिद्ध अंगरेज * व्यवहार-शास्त्रज्ञ ने कहा है कि "अब तक कोड के जितने नमूने बने हैं, उन सब से ये अच्छे हैं"। उनके आलोच्य विषय के लिये इतना ही कहना बस होगा कि वे इंगलैण्ड के कानून के आधार पर बने हैं; फर्क सिर्फ इतना ही है कि वहां की स्थानीय विशेषताओं को छोड़ दिया गया है, और भारतवर्ष की अवस्था, संस्था, जल-वायु तथा आचार, विचार, धर्म, मर्म पर ध्यान रखकर कुछ फेर-फार कर दिया गया है। †

कानून की आंख में सब कोई बराबर हों—यह प्रजा के लिये बड़े सौभाग्य की बात है। इसका अर्थ यही है कि किसी व्यक्ति वा जाति विशेष को कोई विशेष अधिकार नहीं है, तथा पीड़नकारी कोई भी क्यों हो अवश्य दण्ड पावेगा; और कानून पक्षपात रहित होकर सब को बराबर रक्षा करेगा तथा सब कोई नागरिकों के स्वत्वोंका उपभोग बराबर २ कर सकेंगे। पुराने समय में रोम में जिस प्रकार नागरिकों (१)

(१) Jus Civile (Civil Law) नागरिकों के प्रति व्यवहार में आनेवाला कानून।

* सर फेडरिक पौलक।

† हिटली स्टोक्स कृत—ऐंग्लो-इण्डियन कोडस्, भाग १, भूमिका पृष्ठ २६।

और विजिताओं (२) के प्रति भिन्न भिन्न कानूनों का उपयोग होता था वैसा भरतवर्ष में नहीं है। यह भी स्मरण रहना चाहिये कि कानूनों की यह समदर्शिता अंगरेज शासकों की ही सृष्टि है। इसकी विज्ञप्ति १८३३ के चार्टर ऐक्ट से हुई थी, जिसकी पुनरुक्ति १८५८ वाली महारानी की घोषणा और उनके अनन्तर अन्य राजकीय घोषणाओं द्वारा गम्भीरता तथा जोर के साथ की गई है। फौज़दारी कानूनों के विषय में दण्डविधान में * ऐसा लिखा गया है कि १ जनवरी १८६२ से लेकर भविष्य में ब्रिटिश भारत में इस दण्ड विधान के नियमों का उल्लङ्घन करने के लिये सब किसी को इसी दण्डविधान के अनुसार सजा दी जायगी। †

अंगरेज शासकों ने स्वतन्त्रता और समानता की स्थापना की है। उन्होंने गुलामी उठाकर, सब किसी को समान स्वत्व दिया है; चाहे वह व्यक्ति किसी वर्ण, धर्म्म वा जाति

---

(२) Jus gentium—विजित जाति के प्रति उपयोग किया जानेवाला कानून।

* धारा नं २।

† कई बड़े बड़े अफसर हैं जिनका विचार भारत में न होकर विलायत में ही हो सकता है। परन्तु इन छोटी छोटी बातों पर ध्यान देने की जरूरत नहीं। उसी तरह युरोपियन ब्रिटिश प्रजा को फौजदारी मुकद्दमों में जो विशेष अधिकार है उन पर भी ध्यान देने की जरूरत नहीं।

का क्यों न हो, घरमें या समाज में उसका पद कैसा ही क्यों न हो—स्वामी हो वा स्त्री, पिता वा पुत्र, मालिक वा नौकर, जमीन्दार वा रैयत, राजा वा प्रजा—सब का स्वत्व समान है। अब अंगरेजी शासन का यह माना हुआ सिद्धान्त होगया है कि कानून किसी का पक्षपात नहीं करता।

प्रकाश्यरूपसे, सब किसी के सामने, विचार हुआ करता है। विचारालय सर्व साधारण के लिये खुले हुए हैं, वहां जो चाहे मुकद्दमा दायर कर सकता है, जो चाहे इजलास पर जा कर मुकद्दमा फैसला होते देख सकता है, चाहे वह मुकद्दमा किसी प्रकार का क्यों न हो। विचारपति भीड़भाड़ वा गोलमाल रोकने की क्षमता रखते हैं, परन्तु साधारणतः जो चाहे इजलास पर जाकर यह देख सकता है कि मुकद्दमा कैसे फैसला होता है। इससे सर्वसाधारण को यह विचारने का अवसर मिलता है कि किस प्रकार न्याय होता है। न्यायालयों वा व्यवस्थापक सभाओं के कार्य्यविवरणों के प्रकाश करने में किसी प्रकार की रुकावट नहीं है। इंगलैण्ड के इतिहास में भी ऐसे ऐसे समय उपस्थित हुए हैं जब कि किसी खास प्रकार के मुकद्दमों की रिपोर्ट गुप्त रखी गई है; समाचार पत्रों और मजिस्ट्रेटों तथा कामन्स सभा के बीच बहुत दिनों तक लड़ाई झगड़ा, वाद-विवाद होते रहने पर १७७१ में महासभा के बहस की रिपोर्ट छापने की स्वतन्त्रता मिली थी।

मुकद्दमों का फैसला कानून तथा न्याय बुद्धि और शुद्ध अन्तःकरण की सहायता से होता है, परन्तु इसमें विचार-पति को मनमाना कार्य्य करने का अधिकार नहीं है। न्यायार्थी चाहे कोई भी हो, न्यायालय की शरण ले सकता है। जब तक बादी प्रतिबादी के (दोनो ओर के) वकीलों की सब बातें पूरी तरह सुन न ली जावें तब तक फैसला नहीं होता है। जहां उन्हें वकील लाने की क्षमता नहीं है वहां बादी प्रतिबादी स्वयं बहस कर सकते हैं। कानून में लिखे गये नियमों के अनुसार सबके सामने गवाही ली जाती है। हर पक्ष को जिरह करके अपने विपक्ष के साक्ष्य की जांच करने का अधिकार है। फौजदारी मुकद्दमों में जो कुछ गवाही ली जायगी वह सब मुजरिम (अपराधी) के सामने, उसके परोक्ष में नहीं। हर हालत में गवाही देते समय सपथ खानी पड़ती है, और झूठी गवाही देने वालों को कड़ी सज़ा होती है। किसी अवस्था में गवाही देना अस्वीकार करना भी अपराध समझा जाता है। संक्षेपतः मुकद्दमें की सच्ची सच्ची बातों की जांच करने के लिये हर तरह से ऐसा प्रबन्ध किया गया है जिसमें कि न्याय का कार्य्य पक्षपात रहित होवे।

अपराधी का, बरन उस पुरुष का जिस पर अपराध लगाया जाता है, अपराध उस जुर्म के प्रमाण में दिये गये साक्ष्य द्वारा ही प्रमाणित होता है। और बादी का यह काम है

कि वह जिस अपराध के कारण प्रतिवादी को सजा दिलाना चाहता है उसको साक्ष्य द्वारा प्रमाणित करे। यदि पूरा प्रमाण न मिला तो अपराधी छूट जायगा। फ्रान्स में जो गुप्त भेद जानने और छान-बीन करने की प्रथा प्रचलित है उसके अनुसार अपराधी के घरू चरित्र और पूर्व्व इतिहास का पूरा पता लगाया जा सकता है, और उसके पूर्व्व चरित्र के कारण यदि यह शङ्का स्थापित हो जावे कि ऐसे व्यक्ति के लिये यह अपराध करना असम्भव नहीं है तब अपराधी को ही प्रमाणित करना पड़ेगा कि वह निर्दोष है। अगर वह अपने को निर्दोष साबित न कर सका तो उसे सज़ा मिलेगी। इससे स्पष्ट होता है कि अपराधियों को इस प्रथा से बड़ी असुविधा होती है। *

किसी देश के फौजदारी कानून से वहां की व्यक्तिगत स्वाधीनता का पता लगता है। अंगरेजी कानून में इस बात की व्यवस्था है कि बिना प्रयोजन वा अन्याय रूप से व्यक्तिगत स्वाधीनता पर व्याघात न पहुंचे। जब कभी कोई अपराध करता है वा दोषी ठहराया जाता है तब उसके विरुद्ध अभियोग लाया जाता है। जो व्यक्ति किसी के विरुद्ध खबर देता है या अभियोग लाता है उसे अपनी बात का प्रमाण देना पड़ता है, यदि अभियोग प्रमाणित न हुआ

---

* Sheldon Amos कृत "Systematic View of the Science of Jurisprudence" पृष्ठ ३४९—५०।

तो उसे सजा हो सकती है। जिस व्यक्ति पर अभियोग लगाया जाता है वह न्यायालय लाया जाता है। बड़े बड़े अपराधों को छोड़ कोई बिना वारण्ट गिरफ्तार नहीं हो सकता। विचार के समय अपराधी अपने वकील द्वारा पक्ष समर्थन करा सकता है, जब तक इसके पक्ष की बातें न सुनली जांयगी, तब तक अपराधी को दण्ड नहीं दिया जायगा जब तक जुर्म नहीं साबित होता तब तक अपराधी निर्दोष समझा जाता है। गवाहों की तरह उसका जिरह नहीं होता, परन्तु वह अपना बयान कर सकता है और सफाई के लिये गवाह भी ला सकता है। बन्दियों को अनेक सुविधायें हैं; इनसे अधिक की कल्पना नहीं हो सकती। इनमें से कुछ तो केवल अंगरेजी प्रथामें ही पाई जाती हैं। इन सब से व्यक्तिगत स्वाधीनता के प्रति इनकी बड़ी श्रद्धा का पता लगता है। इनमें से कई एक विशेष अधिकार तो ऐसे हैं जिनका आरम्भ इंगलैंड में भी बहुत हाल में हुआ है। इंगलैण्ड का फौजदारी कानून, जिसका कि अब तक हिन्दुस्तान की तरह कोई 'कोड' नहीं है, आज कल जैसा न्याय और दया पूर्ण है, पूर्व में वैसा न था, बरन कभी ऐसा भी समय था जब इनके कारण कैदियों को बड़ी कठिनाई होती थी। "अनियन्त्रित शासन का सब से बड़ा धब्बा उनके फौजदारी कानूनों के इतिहास में पाया जाता है। आदमियों की जान इस कठोरता और असभ्यता से

ली जाती थी जो एक क्रस्तानी राज्य के सर्वथा अयोग्य था, वह तो किसी पूर्वी स्वेच्छाचारी नरेश वा अफ्रिकन सरदार के योग्य था।" * बहुत दिनों तक लड़ते झगड़ते रहने पर १८३६ ई० में प्राणदण्ड दिये जाने लायक अपराधियों को अपने वकीलों द्वारा निर्दोष प्रमाणित कराने का अधिकार मिला था।

अदालत की आज्ञा के अतिरिक्त कुछ विशेष असाधारण कारणों से व्यक्तिगत स्वाधीनता हरण की जा सकती है। १८१८ के रेगुलेशन ३ में उन अवस्थाओं का वर्णन है। राज्य के लाभ के लिये सकौन्सिल बड़ेलाट को वैसे आदमियों की स्वाधीनता हरण करने के लिये वारण्ट निकालने का अधिकार है जिन व्यक्तियों के विरुद्ध ऐसे प्रमाण न मिलते हों कि जिनसे अदालत द्वारा वह कार्य्य किया जा सके। जो व्यक्ति इस तरह नजरबन्द किया जाता है, वह न किसी अपराध का अपराधी समझा जाता है, और न उसे किसी प्रकार का परिश्रम ही करना पड़ता है। राजनीतिक बन्दियों के स्वास्थ्य और सुख का सब प्रबन्ध किया जाता है; उसकी पदमर्यादा के अनुसार उसका निर्वाह करने, उसके तथा उसके कुटुम्ब की आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रबन्ध किया जाता है।

---

* Sir Thomas Erskine May कृत Constitutional History of England. भाग ३, पृ० ३९३।

फौजदारी दण्डविधान से १८६१ में जूरी की प्रथा का प्रचार हुआ था। हाइकोर्ट में अपराधियों का न्याय एक जज और जूरी की सहायता से होता है, जूरी यदि एकमत हो तो उसकी राय बहाल रहेगी, यद्यपि जज़ की राय भिन्न क्यों न हो। दौरा इजलास में जज जूरी वा असेसरों की सहायता से विचार करते हैं। स्थानीय सरकार विज्ञापन द्वारा यह निश्चय कर देती है कि कहां किस जिले में जूरी वा असेसरों द्वारा विचार होगा। जब जूरी के सामने विचार होता है तब जज कानूनी बातों का फैसला करता है, और जूरी अभियोग की सच्ची घटनाओं पर ध्यान देती है। जब मुकद्दमे की सुनाई खतम हो जाती है तब जज जूरी को सम्बोधन करते हुए गवाहियों की सब बातें कह देता है, उस अभियोग में किस कानून का प्रयोग किया जासकता है, उसका अर्थ समझा देता है, और उन मूल घटनाओं को बताता है कि जिन पर ही जूरी की राय दी जा सकेगी। जूरी द्वारा विचार करने के स्वत्व का सर्व साधारण में बड़ा मान है, और यह बहुत पुराने समय से चला आता है। भारत में यह इंगलैण्ड का दिया वर है। इससे अपराधी को इस बात का विशेष लाभ है कि उसका अपराध वकीलों द्वारा बारीक बारीक कानूनी बातों से निर्णय न हो कर साधारण व्यक्तिओं द्वारा नित्य के अनुभव जनित बुद्धि से होता है। एक लाभ यह भी है कि घटना की मूल बातें

सरकारी तौर से नहीं बरन गैर सरकारी तौर से साधारण व्यक्तियों द्वारा निश्चित होती हैं। * जिसमें जूरी से उपकार हो और विचारका कार्य्य उत्तम रीति से हो उसके लिये जूरियों को बुद्धिमान, विद्वान, और विशेष कर ईमानन्दार और स्वतन्त्र विचार का होना पड़ेगा।

केवल पाश्चात्य उन्नत विचारों के अनुसार कानून बनाकर और उनके अनुसार कार्य करने के लिये महकमे और दफ्तरों को कायम कर ही भारत की राजनीतिक उन्नति की चेष्टा नहीं की गई है, बरन उसकेलिये यहां स्थानीय स्वायत्तशासन का भी प्रचार किया गया है। स्थानीय स्वायत्तशासन स्वतन्त्रता का दूसरा नाम है। जो देश स्वतन्त्र है वहां स्वायत्तशासन है, और जहां स्वायत्तशासन है वहां स्वतन्त्रता भी है। उसी तरह साम्राज्य की स्वतन्त्रता का साम्राज्य का स्वायत्तशासन कहेंगे। साम्राज्य का कोई अंश स्थानीय स्वायत्तशासन का अधिकार प्राप्त कर सकता है और साथ ही साथ वह अंश साम्राज्य के अधीन भी रह सकता है। इसका अर्थ यही है कि स्थानीय बातों का सम्पूर्ण वा अंशतः प्रबन्ध स्थानीय लोगों के हाथ है, इससे साम्राज्य के अधिकार में किसी प्रकार का व्याघात नहीं पहुंचता, बरन यह स्थानीय स्वायत्तशासन तो साम्राज्य की

---

* Sheldon Amos कृत Science of Law पृष्ठ २६७—७०।

कृपा से ही बनता है, साम्राज्य जब चाहे उसे घटा बढ़ा वा बिगाड़ सकता है। उसके अतिरिक्त स्वायत्तशासन को देखने भालने, उसके कार्यों का निरीक्षण करने का अधिकार उपर के कर्मचारियों को अवश्य ही रहता है। कलकत्ते में म्युनिसिपल के कामों में कहा जाता है कि लोगों को स्वायत्तशासन है। इसका अर्थ यही है कि म्युनिसिपल का प्रबन्ध न भारत सरकार ही करती है और न बंगाल सरकार, परन्तु यह कार्य 'कलकत्ता कारपोरेशन' नाम की संस्था के हाथ है जो विशेषत: कलकत्ता के 'रेटपेयरों' के प्रतिनिधियों से बनी है। सरकार केवल नामिनेशन से बहाल किये गये कमिश्नरों और सरकारी चेयरमैन (प्रधान) के द्वारा तथा कानून द्वारा रक्षित निरीक्षण करने के अधिकारों से कारपोरेशन पर अपना प्रभाव डालती है।

भारत में किस प्रकार का स्वायत्तशासन है उसका सविस्तर वर्णन अन्यत्र किसी अध्याय में दिया जायगा। यहां केवल स्वायत्तशासन का अर्थ और उसके स्थापित करने का आशय समझाया जायगा। स्थानीय सरकार और स्थानीय स्वायत्तशासन दोनों में अन्तर है। स्थानीय सरकार का अर्थ किसी देश वा साम्राज्य के अंश का स्थानीय कर्मचारियों द्वारा शासन है; कभी कभी उन कर्मचारियों को भी स्थानीय सरकार कहते हैं। परन्तु स्थानीय सरकार स्थानीय स्वायत्तशासन में तभी परिणत होगी जब कि स्थानीय कर्मचारियों

में से सब के सब वा अधिकांश प्रजाके प्रतिनिधि होंगे। बंगाल सरकार को स्थानीय सरकार (Local Government) कहा जाता है क्योंकि यह स्वयं तथा कुछ कुछ स्वाधीनता पूर्वक बंगाल प्रेसिडेन्सी का शासन करती है। परन्तु इस प्रेसिडेन्सी का शासन करनेवाले कर्मचारी सरकारी अफसर हैं, उनकी नियुक्ति उपर के सरकारी अफसरों द्वारा होती है। इस कारण बंगाल सरकार स्वायत्तशासन का उदाहरण नहीं है। परन्तु कलकत्ता कारपोरेशन स्वायत्तशासन की संस्था है क्योंकि इसके चलानेवाले अधिकांश साधारण के प्रतिनिधि हैं यद्यपि उसके चेयरमैन (प्रधान) और कुछ सदस्य सरकार द्वारा नियुक्त होते हैं।

टैक्स बैठाना और सरकारी खर्च का प्रबन्ध करना ये दोनों काम सरकार के कामों में बहुत महत्व के है। स्थानीय स्वायत्तशासन की संस्थाओं को अपने इलाके में टैक्स लगाने और उसे वहां के कामों में जैसा उचित जान पड़े खर्च करने का अधिकार है; हां, सरकार थोड़ा बहुत जरूर देखती भालती है। इंगलैंड में यह सिद्धान्त बहुत दिनों से चला आता है कि प्रजा पर टैक्स बैठाने का अधिकार केवल प्रजा के प्रतिनिधि को है। वहां के लोगोंका विचार है कि जहां प्रतिनिधियों से भिन्न अन्य व्यक्ति टैक्स बैठाता है वहां स्वतन्त्रता का वास नहीं हो सकता। यहां यह स्मरण रखना चाहिये कि न पुराने जमाने में और न

आजकल ही कहीं यह सिद्धान्त सर्व सम्मत माना गया है, भिन्न भिन्न जातियों ने भिन्न २ अधिकारों को अपनी स्वाधीनता का द्योतक माना है।

इस देश में न हिन्दुओं ने और न मुसलमानों ने ही इस विषय पर कभी विशेष ध्यान दिया है। और अंगरेज सरकार ने भी इस सिद्धान्त को स्थानीय स्वायत्तशासन के विषय में भी अनिवार्य्य बनाने का यत्न नहीं किया है। स्वायत्तशासन की जो बड़ी बड़ी संस्थायें आज कल है उनमें सरकार के प्रतिनिधि स्वरूप कुछ अफसर बहाल किये जाते हैं, और कुछ गैर सरकारी सज्जन सरकार द्वारा बहाल किये जाते हैं, ये गैर सरकारी सज्जन यद्यपि वैसे समाज वा जाति के भावों को व्यक्त करते हैं जिनके प्रतिनिधि वहां नहीं है तथापि वे सर्व साधारणके चुने गये प्रतिनिधि नहीं कहे जासकते।

एक प्रकार की स्वायत्तशासन की संस्था भारत में बहुत पुराने समय से चली आती है, परन्तु वह कभी दिहातों, गांवों से आगे नहीं बढ़ी। गांवों के मामूली झगड़ों का फैसला वहां के पंच करलिया करते थे। गांव की पुलिस का काम और इन्तजाम गांववाले ही करते थे। सामाजिक तथा कानूनी झगड़ों का फैसला पंचायत करलेती थी। परन्तु यह स्पष्ट नहीं होता कि इन संस्थाओं के सदस्य निर्वाचित प्रतिनिधि ही होसकते थे, वा क्या कभी वे लोग इस सिद्धान्त को मानते थे कि बिना प्रतिनिधि की सम्मति के टैक्स नहीं बैठाया जा

सकता। अंगरेज शासकोंने विशेष कर लाट रिपन के समय से जिस स्वायत्तशासन का प्रचार भारत में किया है वह बड़े आयतन का है और उसकी विधिव्यवस्था कानूनी है। वह इस मौलिक सिद्धान्त पर स्थित नहीं है कि बिना प्रतिनिधि के टैक्स बैठाया नहीं जा सकता। परन्तु कार्य-क्षेत्र में इसकी उपयोगिता देखकर ही इसका प्रचार किया गया है। इसमें उद्देश्य ये है—(१) स्थानीय बातों का प्रबन्ध वैसे लोगों से कराना चाहिये जो वहां की बातों से परिचित हों। (२) ऐसा करने से बड़े बड़े अफसरों के उपर से कामका कुछ बोझ हट जायगा। (३) और साधारण प्रजा को स्वायत्तशासन की क्रमशः शिक्षा मिल जायगी। इसी पिछले उद्देश्य के लिये प्रतिनिधियों के साथ साथ सरकारी कर्मचारियों का भी संयोग कर दिया जाता है। यह सारी संस्था अभी क्षणस्थायी है, जैसे जैसे इसमें सफलता होती जाती है तैसे तैसे इसकी उन्नति और संस्कार होता जाता है। अर्थात् नये नये स्थानों में इसका प्रचार होता जाता है, इसके सदस्यों की संख्या बढ़ाई जाती है, अधिक अधिक निर्वाचित प्रतिनिधि लिये जाते हैं। स्वायत्तशासन की संस्थाओं के अतिरिक्त भी अन्य संस्थाओं में निर्वाचित प्रतिनिधिओं की संख्या बढ़ रही है। उदाहरणतः कलकत्ता तथा अन्य विश्वविद्यालयों के कुछ फेलो अब निर्वाचित होते हैं। सेनेट, कारपोरेशन तथा अन्य सार्वजनिक संस्थाओं की कमी-

टियां निर्वाचित होती हैं। कुछ सार्वजनिक संस्थाओं को विश्वविद्यालय के फेलो और स्थानीय कौन्सिलों के सभ्य चुनने का अधिकार है; और इन कौन्सिलों के निर्वाचित सदस्यों को भी बड़ी व्यवस्थापक सभा में प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है। सरकारी कामों की देखा-देखी सर्वसाधारण भी यथासम्भव अपने यहां के कामों में निर्वाचन की प्रथा का व्यवहार करने लगे हैं।

भिन्न भिन्न प्रकार की स्वायत्तशासन की संस्थाओं के संगठन में भेद होता है जैसे कि निर्वाचित और अनिर्वाचित सदस्यों की संख्या; सरकारी देख-रेख की मात्रा इत्यादि। केन्द्रीभूत शासन स्वायत्तशासन का उल्टा है। शासकों का ध्यान पृथक्करण अर्थात् स्वायत्तशासन की वृद्धि की ओर जा रहा है। परन्तु इस विषय में, जैसा कि अन्य विषयों में भी हुआ करता है, वे लोग किसी काल्पनिक सिद्धान्त पर नहीं चलना चाहते, वरन अनुभव पर सावधानी से अग्रसर होना चाहते हैं। हालमें मि० सी० ई० एच, हौबहाउस, एम० पी० की अध्यक्षता में जो पृथक्करण कमिशन (Decentralisation Commission) बैठा था उसने पृथक्करण की सलाह दी है। उस सलाह के अनुसार शीघ्र ही कानून बनने वाला है।

साधारण छोटी छोटी संस्थाओं से ही क्रमशः बड़ी बड़ी स्वायत्तशासन की संस्थाओं का विकाश होता है, छोटी छोटी

संस्थाओं का प्रबन्ध करते करते बड़ी बड़ी संस्थाओं के प्रबन्ध करने की योग्यता आती है। सरकार छोटी छोटी संस्थाओं की सफलता देखकर ही बड़ी बड़ी संस्थाओं को स्वायत्तशासन देनेको प्रस्तुत है। इस हेतु जैसे जैसे लोगों की क्षमता बढ़ती गई है वैसे वैसे स्वायत्तशासन की भी वृद्धि हुई है। इससे भी अधिक उन्नति की आशा दिलाई गई है, आशा है कि वह भी अपने समय पर अवश्य फलवती होगी।

चतुर्थ अध्याय।

सामाजिक कुरीति निवारण।

अभद्र, अनैतिक और दण्डनीय व्यवहारोंका रोकना—सती प्रथाका इतिहास—उसके रोकनेके लिये किये गये नियमोंका इतिहास—कांटे आदि से प्राण देना—उसके निवारण के नियमों का इतिहास—सामाजिक कुरीतियोंके प्रति सरकारकी नीति—बच्चोंका मारना—अनैतिक व्यवहार—हिन्दुविधवाओंका पुनर्विवाह—एक धर्म को छोड़ दूसरे धर्म में जानेवाले लोगोंकी कठिनाइयां—स्त्रीशिक्षा—अभद्र और अनैतिक व्यवहारोंको रोकनेके लिये कानून।

अंगरेजी राज्य में सब वर्ण और धर्मवालों की धार्मिक और सामाजिक रीतियों की श्रद्धा की गई है। किन्तु उनमें से जो रीति आपत्तिजनक थी वा जो दण्ड देने

योग्य थी उसकी रक्षा नहीं हो सकी। उन अभ्यासों को जिन से मनुष्यों की जान चली जाय वा जान माल पर खतरा पहुंचे अवश्य ही दण्ड देने योग्य समझना चाहिये। जब कभी किसी कुरीतिको बन्द करना पड़ता था तब शासक लोग बड़ी सावधानीसे काम करते थे और समाज के विचारों का उचित सम्मान करते थे। पहले तो उन लोगोंने चेतावनी दी थी वा मामूली काररवाई की थी और आशा की थी कि समाज स्वयं सुधार कर लेगा। परन्तु जब चेतावनी पर कुछ भी ध्यान न दिया गया, मामूली काररवाईका कोई फल न हुआ, जहां समाजने आवश्यक सुधार करने से अनिच्छा वा अयोग्यता प्रकट की वहां शासकों को अपनी शक्तिका प्रयोग करना पड़ा, कानूनी वा शासकोचित कार-रवाई से कुरीतियोंको उखाड़ फेंकना पड़ा।

हिन्दुओंकी उस प्रथा का उठाना जिसे अंगरेज 'सती' कह कर पुकारते हैं, सरकार द्वारा किये गये हिन्दुओंकी सामाजिक कुरीतियोंके संस्कार का ज्वलन्त प्रमाण है।

'सती'का अर्थ पतिपरायणा स्त्री है। 'सतीप्रथा'का अर्थ पत्नीका मृतपतिकी चिता पर जीते जल मरना है। इस प्रथाका कैसे आरम्भ हुआ मालूम नहीं। शास्त्रोंका आदेश है कि पत्नी पतिकी मृत्युके बाद चाहे तो कठिन ब्रह्मचर्य से रहे वा जल मरे। इस उत्सर्गसे फल तभी होगा

जब कि यह इच्छापूर्वक किया जायगा। परन्तु समयके फेर से जबरदस्ती 'सतियों'को जलानेकी चाल चल पड़ी। जिस समय स्त्री अपने पतिवियोगके दुखके बोझसे दबी रहती थी, जिस समय उसे भला बुरा सोचनेकी शक्ति नहीं रहती थी और जब कि उसे किसीकी बात टालनेका साहस नहीं रहता था उस समय लोग उसे फुसला कर आत्महत्या करनेको प्रस्तुत कराते थे। कहा जाता है कि कभी कभी कुछ खिलाकर बेसुध कराके जल मरनेको राजी करते थे।

उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भमें यह बुराई इतनी फैल गई थी कि सरकारसे चुपचाप न बैठा गया। लाट वेलसली की सरकारने १८०५ ई० में अपील कोर्टके जजोंको "इस बातका पता लगाने कहा कि इस प्रथाकी हिन्दुशास्त्रोंके अनुसार कहां तक अनुमति है। यदि शास्त्रोंमें इसकी अनुमति न होवे तो बड़ेलाटकी आशा थी कि यह प्रथा, यदि एकायक नहीं तो क्रमशः, अवश्य उठा दी जायगी। यदि विचारपतियोंकी रायमें इस प्रथा का बिल्कुल उठा देना असम्भव अथवा अनुचित समझा जावे, क्योंकि वैसा करने से हिन्दुओंके धार्मिक विचारों पर आघात पहुंचेगा, तो वे लोग कुछ ऐसा उपाय सोच निकालें जिससे दवा खिला कर बेहोश करने और कम उम्र की विधवाओंको जलाने इत्यादि की कुरीतियां बन्द हो जावें।" विचार-पतियों ने पण्डितों से पूछा कि क्या शास्त्रोंमें 'सतीदाह'का

आदेश है ? पण्डितोंने उत्तर दिया कि कुछ अवस्थाओंको छोड़ चारो वर्णको प्रत्येक स्त्री 'सती' हो सकती है। विचार-पतियोंने सरकारको लिख भेजा कि "इस प्रथाको एकायक उठा देना अत्यन्त अनुचित होगा, हां, कुछ दिनोमें यह क्रमशः बन्द हो जा सकती है।" उनलोगों ने वैसे कानूनों के बनानेका परामर्श दिया था जिनसे सतीदाहके समय होने वाले अनुचित, बेकानूनी, अशास्त्रोक्त, दण्डनीय कुसंस्कारों का दमन होता।

१८१३ ई० में सरकारकी आज्ञा हुई कि "अब से मजिस्ट्रेट या पुलिसके प्रधान अफसरको सूचना दिये बिना कभी सतीदाह न हो सकेगा। ये अफसर इन बातोंका पता लगावेंगे कि स्त्री अपनी इच्छासे सती होना चाहती है, या कहीं उसे ज्ञानशून्य करनेवाली और नशा लानेवाली कोई दवा तो नहीं दी गई है, उसकी अवस्था १६ वर्ष से कम नहीं है और वह गर्भिणी भी नहीं है।" सतीदाह पुलिसके सामने होगा जो इस बातका निरीक्षण करेगी कि किसी प्रकार से भय प्रदर्शन या उत्पीड़न नहीं किया गया है। इन उपायों से कोई विशेष फल न निकला। राजा राममोहन रायने बड़े जोर से इस प्रथाका प्रतिवाद किया। १८२३ में लाट एम्हर्स्टने कानून बनाकर किसी विधवाका अपने मृतपतिके शवके साथ जल मरना दण्डनीय बनाया। उस कानूनमें यह भी लिखा गया था कि यदि कोई विधवा सती होना

चाहे तो वह स्वयं मजिस्ट्रेटके पास जा कर इस बातकी प्रार्थना करे; जिस वंशमें सती होगी उस घरानेके लोग सरकारी नौकरीके अयोग्य समझे जांयगे, और सती तथा उसके पतिकी जो जायदाद होगी वह बिल्कुल सरकारमें जब्त कर ली जायगी। *

ये प्रबन्ध भी यथेष्ट न हुए। इस बुराईको जड़से दूर करना लाट विलियम बेण्टिकके हिस्सेमें था। भारत में आने के कुछ ही दिनों बाद आपने चिट्ठी लिख कर कुछ सरकारी अफसरोंसे इस प्रथाको उठा देनेके विषयमें राय पूछी। उन लोगोंकी राय मिल जाने पर आपने सारे अंगरेजी राज्यसे सतीकी प्रथाका एकदम उठा देना निश्चय कर लिया। ४ दिसम्बर, १८२९ को सकौन्सिल बड़े लाटने १८२९ का १६वां रेगुलेशन बनाया जिसमें "सती होना अर्थात् हिन्दुविधवाओंका जीते जल मरना या जीते गाड़ देना कानून विरुद्ध बनाया गया और फौजदारी अदालतों के सामने उसकी सज़ा कायम की गई।"

उस रेगुलेशनका मुखबन्ध अध्ययन करने योग्य है। वह इस प्रकार है: "सती की प्रथा अर्थात् हिन्दुविधवाओं का जीते जलाना या गाड़ देना मानव प्रकृतिके विरुद्ध है। इसे अनिवार्य कर्त्तव्य समझनेका शास्त्रोंमें कहीं भी आदेश

---

* इसका विस्तृत वर्णन पी० एन० बोस कृत—'सभ्यताका इतिहास' भाग २, अध्याय ३ में देखो।

नहीं है। बरन विधवाओंके लिये विशेष कर सांसारिक झगड़ोंसे अलग हो कर धार्मिक जीवन व्यतीत करना ही श्रेष्ठतर समझा गया है। सम्पूर्ण भारतमें ऐसे असंख्य व्यक्ति हैं जिनके यहां न इसकी चाल है और जो न इसे मानते ही हैं। कई बड़े बड़े इलाकोंमें तो इसकी चाल ही नहीं है। और जहां इसकी चाल बहुत है वहां भी ऐसा अपवाद है कि बहुत से स्थलों में ऐसी कठोरता और निर्दयता दिखलाई गई कि जिससे हिन्दुओंके हृदयमें भी बड़ा आघात पहुंचा है; उन लोगोंकी आंखोंमें भी वह कानूनविरुद्ध और अनुचित समझा गया है। ऐसे कार्य्यों को बुरा बताने और रोकनेके लिये अब तक जितने उपाय किये गये हैं सब विफल हुए हैं। सकौन्सिल बड़ेलाटको इस बातका पूरा निश्चय हो गयाहै कि इस प्रथाको एकदम उठाये बिना इसकी बुराइयोंका यथेष्ट रूपसे दमन नहीं हो सकता। इन विचारोंसे प्रोत्साहित होकर सकौन्सिल बड़ेलाटने निम्नलिखित नियमोंका बनाना उचित समझा है; और यह आज्ञा दी जाती है कि जिस दिनसे इस कानून की घोषणा होगी उसी दिनसे यह नियम फोर्टविलियम की प्रेसिडेन्सीकी मातहतके सारे इलाके में माना जायगा। ऐसा करते हुए हमलोगोंको ब्रिटिश-शासन-नीतिके उस सर्व्वोच्च और सर्वप्रथम सिद्धान्तसे कि—सब जातिके लोग अपने धार्मिक व्यवहारोंके अनुकूल कार्य उस समय तक अवश्य कर

सकेंगे जब तक कि वे कार्य न्याय और मानव विचारोंके विरुद्ध न होंगे,—तनिक भी हटनेकी इच्छा नहीं है।" सती होनेका समाचार पाकर जमीन्दार और पुलिसको क्या करना होगा उसके नियमोंका यहां उल्लेख करना आवश्यक नहीं।

देहमें अंकुश लगा कर झूलनेकी प्रथाका उठा देना सरकार द्वारा सामाजिक कुसंस्कारोंके उठा देनेका दूसरा उदाहरण है, यद्यपि यह उतने महत्वका नहीं है। १८५६ तथा १८५७ में कलकत्ता मिश्नरी कानफरेन्सने आवेदनपत्र भेज कर सरकारसे प्रार्थना की कि चरक पूजाके अवसर पर पहले तीन दिनोंमें जिस निर्दयता, अमानुषिक व्यवहारों और उत्पीड़नोंका दर्शन हुआ करता है उसको रोक दिया जावे। यह कहा गया था कि "ये भक्त कांटों और खड़ी छूरीकी नोक पर कूद पड़ते हैं; अपनी भुजाओं वा जिह्वाओं पर लोहेका तीर घुसेड़ देते हैं, बगलके मांसके आर पार सूत निकाल देते हैं या उसमें जलती हुई आगमें तपी हुई बड़ी बड़ी कांटियां घुसेड़ते हैं। दूसरे दूसरे भक्त अपनी पीठकी स्नायुओंमें अंकुश घुसेड़कर चरक पूजाके वृक्षसे झूलते हैं।" बंगालके छोटेलाट सर फ्रेडरिक हालिडेने बहुत सोच विचार कर निश्चय किया कि ये भक्त अपनी इच्छा से ये सब कष्ट उठाते हैं, इस कारण इसका प्रतिकार मिश्नरियों और स्कूलमास्टरोंके हाथ छोड़ना चाहिये। और

जैसा कि शासक सभा (Court of Directors) ने भी कहा था, ऐसे निठुर व्यवहारोंको समझा बुझा कर रोकनेका यत्न करना चाहिये, इसमें अधिकार प्रदर्शन करना उचित नहीं।*

जब सर जान पीटर ग्रांट बंगालके छोटेलाट थे(१८५९-६२) उस समय कलकत्तेके मिश्नरियोंने बंगालको व्यवस्थापक सभाके पास फिर से आवेदनपत्र भेजा, वह पत्र भारत सचिवके पास भेज दिया गया। महारानी विक्टोरियाकी सरकार की राय थी कि इस रिवाजको हर तरह से बुरा बतलाया जावे। उन लोगोंने यह भी सलाह दी थी कि जब जब सरकारी जमीनका बन्दोबस्त हुआ करे तब तब पट्टेमें यह भी शर्त्त लिखाया जावे कि वहां चरक पूजा कभी न होगी। ऐसा किया जाय कि जिसमें भारतवासी सज्जन भी इस ओर अपनी सहानुभूति प्रकट करें, और शनैः शनैः यह भी लोगों पर प्रकट किया जाय कि सरकार इन कामोंको बहुत बुरा समझती है। सर जे० पी० ग्रांटने डिविजनके कमिश्नरोंसे इस विषयकी रिपोर्ट मांगी, इससे यह पता लगा कि चरक पूजाके समय झूलनेकी प्रथा खास बंगाल और उड़िस्सामें ही जारी है। जहां पर यह चाल बहुत पुरानी थी वहांके अफसरोंको लिखा गया कि वे लोग स्वयं समझा बुझा कर और जमीन्दारोंसे मदद ले कर वहांके लोगोंको इस प्रथाको छोड़ देने पर राजी करें। जहां पर चरकके

* बकलैण्ड कृत—Bengal Under Lt. Governors, भाग १, पृष्ठ ३२।

समय झूलनेकी चाल पुरानी नहीं थी, बरन कभी कभी दिखलानेको हुआ करती थी वहां पर मजिस्ट्रेटोंको अधिकार दिया गया कि वे लोग शान्ति और भद्रताकी रक्षाके ख्याल से इस प्रथाको रोक देवें। उसके बाद यह रिपोर्ट दी गई कि यह प्रथा अब उठती जा रही है। *

सन १८६४।६५ में यह बात फिरसे उठी। बंगालके छोटेलाट, सर सिसिल बीडनने, इस कठोरतापूर्ण प्रथाको रोकनेके लिये, १५ मार्च १८६५ को एक मन्तव्य प्रकाशित किया। † लोवर प्रोभिन्सके मजिस्ट्रेटोंको यह आज्ञा हुई कि वे लोग सब किसी को समझा दें कि चरक पूजाके समय सर्वसाधारणके सामने झूलने या और किसी तरह से अपने शरीरको कष्ट देने से बाज़ आवें; और न किसी को ऐसा करनेमें ही सहायता पहुंचावें। वे लोग ऐसा प्रबन्ध करें कि जिसमें उनके अधिकार वा उनके प्रबन्धमें रखी हुई सम्पत्तिमें इस तरह की पूजा न हुआ करे। जो लोग इस आदेशका उल्लङ्घन करेंगे वे मुजरिम (दोषी) समझे जांयगे और उनको सज़ा होगी।

इन दो संस्कारोंके इतिहाससे और नहीं तो इतना अवश्य स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक और धार्मिक व्यवहारोंको सुधारनेमें सरकार अपनी अनिच्छा प्रकट करती है; परन्तु

---

* बकलैण्ड कृत "Bengal Under Lt. Governors" भाग १ पृष्ठ १७७।

† वही पृष्ठ, ३१२।

जिन सुधारोंको करनेमें समाज अक्षम है और जब समाज कुछ न कर सकती है तब सरकार उन कुसंस्कारोंको दूर करनेका दृढ़ निश्चय कर लेती है। इन दो बातों में सुधार की बड़ी आवश्यकता रहने पर भी देर से काम होने का कारण यही था कि सरकार सामाजिक बातोंमें हाथ न डाल कर उनका भार समाज पर ही सौंपना चाहती थी। सतीदाह की बुरी प्रथा बहुत दिनोंसे चली आती थी, परन्तु जब से सरकारका ध्यान उस ओर आकर्षित हुआ तब से २५ वर्षोंके भीतर ही सारा सुधार हो गया। घराऊ बातों वा सामाजिक और धार्मिक व्यवहारोंमें हस्तक्षेप करनेमें अनिच्छा प्रकाश करना अंगरेजी राज्यकी प्रधान नीति रही है। परन्तु साथ ही साथ कुसंस्कारोंको दूर करना भी उनका उद्देश्य रहा है। कोई काम एकायक नहीं किया जाता है। बहुत दिन तक तटस्थता दिखाई जाती है। परन्तु जब यह स्पष्ट हो जाता है कि सर्वसाधारण के किये कुछ नहीं होता तब सरकार अपनी सारी क्षमता से सबलोंसे निर्बलोंकी रक्षा करती है, अन्याय, उत्पीड़न को दूर करती है, कभी कभी प्रजा को उनके सामाजिक बुरे नियमों से भी बचाती है।

अंगरेजी राज्य के पहले यहां बच्चों को मारने की चाल बहुत कुछ फैली हुई थी। स्त्रियां देव देवियों के यहां मन्नत मानती थीं, या कोई बर मांगती थीं जिसके पूरा होने

पर अपने नन्हें बच्चों को या तो गंगासागर में डुबा देती थीं या किसी देव देवी के यहां चढ़ा देती थीं। बहुत से स्थानों में, विशेष कर पंजाब, युक्त प्रदेश और राजपुताने में, यह समझ कर कि या तो लड़कियों के व्याहने में बहुत खर्च होगा या यदि नीचे कुल में उनकी शादी हुई तो बंश को कलंक लगेगा, उनको जन्मते ही मार डालना कोई नई बात न थी। देश के फौजदारी कानूनों, जन्म-मरण की रिपोर्ट देनेके नियमों और दण्डनीय कुसंस्कारों को रोकने के प्रबन्धों से अब इन अमानुषिक व्यवहारों का अन्त होगया है। * इण्डियन पीनल कोड केअनुसार यदि किसी पुरुष वा स्त्री का, चाहे उसकी उम्र कुछ हो, प्राण लेने की इच्छा से प्राण हरण किया जाय तो यह खून समझा जायगा और उसके लिये प्राणदण्ड वा देश निकाले की सजा दी जायगी। उसी कोड में व्याख्या करते हुए यह भी लिखा गया है कि जिन बच्चोंने अभी संसार में पैर भी न रखा है, कभी सांस भी न ली है—परन्तु गर्भ में जिनकी सृष्टि होचुकी है——उनके मारने का अपराध किसी जीते जागते बच्चेको मारने के अपराध के समान होगा। † बारह वर्ष से कम के बच्चों की माता, पिता वा अभिभावक यदि बच्चों को परित्याग करने की इच्छा से

---

* इसके विशेष विस्तृत वर्णन के लिये स्ट्राची कृत इण्डिया, तीसरी आवृत्ति, पृ० ३९५—४०० देखो।

† धारा न० २९२ की व्याख्या।

उन्हे कहीं छोड़ देवें तो उनको कड़ी सजा हो सकती है। और यदि बच्चा यों छोड़ देने के कारण मरजाय तो अपराधी को खून करने का अपराध लगेगा। * एक सम्प्रदाय के साधू नर-बलि करना अपना धर्म समझते थे और उसी अभिप्राय से कभी कभी स्वयं मनुष्यों को बलि देते थे वा दूसरों से दिलाते थे। परन्तु आज कल यदि वे लोग ऐसा करें तो अवश्य उन्हें खून करने या उसमें शामिल होनेका अपराध लगेगा और सजा होगी। हो सकता है कि केवल कानून बनाने से ही कुसंस्कारों वा अपराधों का अन्त न हो जाय; अब भी बच्चे मारदिये जाते हों, और मनुष्यों का बलिप्रदान होता हो, परन्तु यह काम न अब खुले मैदान में हो सकता है, और न कोई ऐसा करने का स्वत्व ही दिखा सकता है यद्यपि उसके धर्म में ही ऐसा क्यों न कहा गया हो। ये अपराध छिप कर ही किये जासकते हैं, और पता लगने से ही कानून से उनको सजा मिलेगी।

सम्भव है कि अब भी कहीं कहीं किसी समाज में छिप-कर ऐसे कार्य किये जाते हों जो सर्वथा निन्दनीय हैं, और जिनका करना जुर्मों में शामिल है, परन्तु इतना तो अवश्य निर्विवाद है कि अंगरेजी कानून ने हरजगह स्वीकार किया है कि मनुष्यशरीर पवित्र है। कोई मनुष्य कभी दूसरे के शरीर पर आघात नहीं कर सकता, ऐसा करने

---

* धारा ३१७।

वाला अवश्य दण्ड का भागी होगा। इस विषय में कानून सब किसी की बराबर रक्षा करता है। मनुष्य मात्र का शरीर, चाहे वह राजा हो वा प्रजा, ब्राह्मण वा चाण्डाल, पवित्र और अदण्डनीय है। सरकार ने कुछ ऐसे भी सुधार किये हैं जिनसे मनुष्यों को सामाजिक बन्धन से कुछ स्वतन्त्रता मिली है। उच्च जाति की विधवाओं का पुनर्विवाह होना हिन्दू समाज ने कभी नहीं सहन किया था। अर्थात् किसी उच्च जाति की विधवा, स्वतन्त्र और स्वत्वाधिकारिणी होने पर भी अपनी इच्छा होते हुए भी ऐसा व्याह नहीं कर सकती है जो जायज गिना जाय। कानून की दृष्टि में विधवा हमेशे नाबालिग समझी जाती है, उसके अभिभावक भी यदि चाहें तो उसका पुनर्विवाह नहीं करा सकते हैं। विधवाओं और उनके अभिभावकों की अड़चनें अब दूर होगई हैं। पं० ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने इस सुधार के पक्ष में आन्दोलन आरम्भ किया था, उन्होंने छोटी छोटी पुस्तकों को लिख कर यह प्रमाणित किया था कि अवस्था विशेष में शास्त्रों ने विधवाओं के व्याह की सम्मति दी है। आपने सरकार से भी लिखकर प्रार्थना की कि कानून द्वारा विधवाओं को पुनर्विवाह का अधिकार मिले। सरकार को इस सुधार की आवश्यकता पर विश्वास होगया और विधवाओं को इसका अधिकार देनेवाला कानून बनाना भी निश्चय होगया। कौन्सिल के मेम्बर की हैसियत से सर

जे० पी० ग्रांट ने हिन्दू विधवाओं के पुनर्विवाह में जो कानूनी बाधायें थीं उनको दूर करने के लिये १८५६ में एक बिल पेश किया जो कि आगे चलकर १८६४ का ऐक्ट नं० १५ कहलाया। * उस ऐक्ट की पहली धारा यों है: "जिस हिन्दू स्त्री की शादी होगई हो परन्तु पति मरगया हो, वह विधवा यदि किसी हिन्दू से पुनर्विवाह करना चाहे तो वह व्याह न रद्द वा बातिल ही होगा और न उस व्याह से जन्मे बच्चे ही नाजायज समझे जांयगे। हिन्दुओं के रिवाज वा हिन्दूशास्त्रों के नियम इसके विरुद्ध होनेसे भी कोई हर्ज नहीं।"

एक और दूसरा सुधार हुआ है जिससे क्रस्तान बने हिन्दुओं के कानूनी स्वत्वों की रक्षा हुई है। हिन्दू जिस सम्पत्ति का उत्तराधिकारी हो सकता था अपना धर्म छोड़ देने पर वह उसे नहीं पा सकता; उसके अधिकार में जो सम्पत्ति रहती थी वह भी उसके धर्म छोड़ने पर उनके हाथ से छूट जा सकती थी। १८५० के ऐक्ट २१ से ये बातें उठ गईं, उस कानून में लिखा गया था कि "ईस्ट इण्डिया कम्पनी के राज्य में प्रचलित वे नियम वा रिवाज, जिनके द्वारा किसी पुरुष वा स्त्री को जाति वा धर्मच्युत होने के कारण, सम्पत्ति के उत्तराधिकारी होनेसे अलग किया जाता

---

* "Bengal Under Lt. Governors," भाग १, पृ० २२।

है, अब से कम्पनी वा सम्राट के सनद से स्थापित अदालतों में मान्य न होंगे।"

लड़कियों को पढ़ाने का कोई विस्तृत प्रबन्ध इस देश में न था। आज कल जो प्रबन्ध किया गया है वह अंगरेज सरकार के समय का है। १८४९ में लार्ड डलहौसी ने बंगाल शिक्षा परिषद् (Bengal Council of Education) को सूचना दी कि वे अब से स्त्री शिक्षा का भी प्रबन्ध करें, उसके कुछ ही दिनों बाद भारतीय सज्जनों की कमिटी ने एक कन्या पाठशाला कायम की। यह पहली कन्या पाठशाला थी जिसे सरकार ने स्वीकार की थी। १८५४ के खरीते में कहा गया था कि सरकार को स्पष्टरूप तथा हृदय से स्त्रीशिक्षा की सहायता करनी चाहिये। क्योंकि मनुष्यों की शिक्षा से शिक्षा और नीति विस्तार में उतनी सहायता नहीं मिलती जितनी कि स्त्री शिक्षा से।" १८८२ के शिक्षा कमिशन ने परामर्श दिया था कि स्त्रीशिक्षा की ओर विशेष उत्साह दिखाना चाहिये, उसकी सहायता भी विशेषरूप से करनी चाहिये। सरकार ने इस मन्तव्य को स्वीकार कर लिया है। बच्चों की शिक्षा में जितना व्यय होता है उससे अधिक धन पुत्रियों की शिक्षा में लगाया जाता है, और इसका प्रबन्ध भी विशेषत: सरकार ही किया करती है। *

---

* इम्पीरियल गजेटियर, भाग ४, पृ० ४३१।

सामाजिक उन्नति की अभिलाषा से सरकार ने भद्रता और नीति की रक्षा के लिये कानून बनाना उचित समझा है। ये कानून किसिम किसिम के पुलिस ऐक्ट और पीनल कोड में पाये जाते हैं। † जूआ खेलना, वैसे घरों को रखना जहां दंगा फसाद होता हो, सर्वसाधारण में अभद्र व्यवहार करना, वा अश्लील गीत गाना, बुरी गन्दी किताबों को बेचना इत्यादि काम जिससे साधारण के नैतिक विचारों में आघात वा हानि पहुंचती हो कानून द्वारा रोका गया है। संक्षेपतः यह कहा जा सकता है कि जिन बातों के कहने वा करने से सर्वसाधारण की भद्रता वा नैतिक व्यवहार में धक्का पहुंच सकता है, वा उनके विचारों में गन्दगी आसकती है, वैसी बातों को रोकने का प्रबन्ध किया गया है।

---

† अध्याय १९।

पञ्चम अध्याय।

शिक्षा सम्बन्धी कार्य।

सर्वाङ्गीन शिक्षा इंगलैंड का उद्देश्य है—राजनैतिक संस्थाओं से शिक्षा—आप से आप दिये हुए अधिकार—स्कूली शिक्षा, प्राथमिक, मध्यम तथा उच्चतर—औद्योगिक शिक्षा—प्रारम्भिक तथा उच्च—डाकटरी शिक्षा—कानूनी शिक्षा—नार्मल स्कूल—कृषि कालिज—ललित कला की शिक्षा—स्कूली शिक्षा के सिद्धान्त—पाश्चात्य और प्राच्य शिक्षाके पक्षवालोंका वादानुवाद—१८५४ का शिक्षा विषयक खरीता—शिक्षा सबको मिल सकती है—जाति विशेष की शिक्षा की संस्थायें—शिक्षामें धर्म सम्बन्धी तटस्थता—ज्ञान वृद्धि के भिन्न भिन्न उपाय।

शिक्षा प्रचार (यहां शिक्षाका अर्थ बहुत ही विस्तृत है) ही इङ्गलैंड का पूर्वीय देशों में आनेका उद्देश्य कहा जा सकता है, यही उसकी सर्वोच्च अभिलाषा है। निःसन्देह यह वह प्रधान कार्य है जिसके साधन में उसने अपने को अर्पण कर दिया है। जो कानून बने है और जो संस्थायें स्थापित हुई हैं उनका उद्देश्य केवल व्यवहारिक अभावों को ही पूरा करना न था बरन यहां के अधिवासियों को नया विचार और नई रीति नीति का सिखलाना था। ये सब

साधारणतः देश के विचारों से अधिक उन्नत रहे हैं। इस प्रकार अधिवासियों को अधिकार प्रदान करने से उनके चित्त में अपने अधिकारों को पहचाननेकी शक्ति का सञ्चार हुआ है, सुख भोगते भोगते उन्हें अब सुख अनुभव करने की शक्ति हुई है। संक्षेपतः इन कानूनों और संस्थाओं से यहां के अधिवासियों को नये नये अभावों के अनुभव करने और अपने अधिकारों, कर्त्तव्यों और लाभों को समझने की शिक्षा मिल चुकी है या मिल रही है। जूरी की सहायता से विचार करने की प्रथा का जो प्रचार भारतवर्ष में हुआ था उसके लिये न तो भारतवासियोंने ही प्रार्थना की थी और न उसके द्वारा किसी विशेष आवश्यकता की ही पूर्त्ति होती थी। इसका उद्देश्य अच्छी तरह न्याय करने के अतिरिक्त भारतवासियों को इस नई प्रथा से परिचित कराना और उन्हें नया अधिकार देकर नये कर्त्तव्यों को पालन करने के योग्य बनाना भी था। इस संस्थासे यहां के अधिवासियों को नये नये अधिकारोंके गुणग्रहण करने की ऐसी अच्छी शिक्षा मिली है कि अब वे लोग जूरी प्रथाका दूसरे दूसरे जिलों में भी प्रचार करने का आन्दोलन कर रहे हैं। पुनः, जब स्थानीय स्वायत्तशासन के प्रचार के लिये पहले पहले काररवाई की जा रही थी उस समय इसके लिये कहीं कोई उल्लेख योग्य आन्दोलन नहीं हुआ था। उससे यहां वालों को ऐसा लाभ हुआ जिससे वे लोग पूर्ण-

तथा अनभिज्ञ थे, परन्तु आशा की जाती थी कि वे लोग शीघ्र ही उन लाभों के गुण को समझने लगेंगे, और नये नये अधिकारों को पाकर नये कर्त्तव्यों के पालने करने की योग्यता प्राप्त करेंगे। इन काररवाइयों का उद्देश्य विशेष कर संस्कार उत्पन्न करना था। शासकों का यह उद्देश्य यहां तक सफल हुआ है कि आज कल स्थानीय स्वायत्त-शासन के प्रचार और उन्नति के लिये चारो ओर से सर्व-साधारण की पुकार हो रही है। यहां ऐसे २ उदाहरणों के बढ़ाने की आवश्यकता नहीं है। इतिहास के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जायगा कि जहां विलायत में सर्वसाधारण के आन्दोलन करने पर (जो कभी कभी भयंकररूप भी धारण करता था) सार्वजनिक संस्थाओं की सृष्टि हुई है वहां भारत में, सरकार ने आप से आप वैसी संस्थाओं का प्रचार किया है; और ऐसा करने का उद्देश्य केवल सुशासन ही नहीं है वरन विशेषकर यहां के अधिवासियों को राजनीतिक शिक्षा देना है। अगले तीन अध्यायों में जिन सुधारों का वर्णन किया जायगा और जो आर्थिक सांसारिक और नागरिक नामक तीन भागों में विभक्त हैं, उनसे यद्यपि एक न एक अभाव की पूर्त्ति अवश्य होती है तथापि उन सब का लक्ष्य भारतवासियों को शिक्षित करना ही है। सर्वदा शासकों की यही इच्छा रही है कि भारत-वासियों के सन्मुख नये नये उद्देश्य रखे जाँय, उन्हें नये

विचारों और रीतियों से परिचित कराया जाय, और सब प्रकार से उनकी योग्यता की वृद्धि की जाय। इंगलैंड ने भारतवर्ष में राजनीति और समाज सम्बन्धी जितने कार्य्य किये हैं सब का फल शिक्षाप्रद हुआ है। सरकार ने भारत में आज तक जो कुछ किया है, वा भविष्य में जो कुछ करेगी सब का आशय 'शिक्षा' नामक एक शब्द से ही प्रगट हो जायगा। जनसमुदाय को शिक्षित करने का अर्थ उन्हें उन्नत करना है।

इस अध्याय में स्कूली शिक्षा और उसके मूल सिद्धान्तों का जिन पर वह स्थिर है और जिन संस्थाओं द्वारा उसका प्रचार होता है तथा वृद्धि विकाश, शिल्प एवं ललित कला को शिक्षा के लिये जिन साधनों की सृष्टि हुई है उन सब का वर्णन होगा। जिन जिन विषयों की शिक्षा मिलती है उनके अनुसार शिक्षा प्रचार का कार्य्य इन विभागों में बांटा जा सकता है :—साहित्य सम्बन्धी, वैज्ञानिक, नैतिक, कला सम्बन्धी, व्यवसाय और ललितकला सम्बन्धी। कहां कितनी पढ़ाई होती है उसके अनुसार शिक्षाकार्य का विभाजन प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च इन तीन श्रेणियों में हो सकता है। शिक्षा विभाग के भिन्न भिन्न अङ्गों के लिये भारत में इन्हीं शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

प्राइमरी स्कूलों में प्राथमिक शिक्षा दी जाती है। सारे भारतवर्ष में न पाठ्यक्रम ही एकसा है और न प्रबन्ध

ही एक है। गांवों की पुरानी पाठशाला वा मकतबों से लेकर आधुनिक स्कूलों तक, जहां उत्तम रीति से नियमित शिक्षा मिलती है, सब प्रकार की पाठशालायें यहां मिलती हैं। साधारणतः प्राइमरी स्कूलों का उद्देश्य बच्चों को अपनी भाषा में लिखना पढ़ना सिखाना, साधारण हिसाब सिखाना, देशी हिसाब किताब और पट्टा, कबूलियत इत्यादि देशी कागज-पत्र समझाना तथा भूगोल, कृषि, स्वास्थ्यरक्षा और भारत के इतिहास जैसे साधारण विषयों का प्रारम्भिक ज्ञान दिलाना है। * शहरों में तो यही नियम है; परन्तु देहातों में पाठ्यक्रम इससे भी सहज है। कुछ थोड़ेसे प्राइमरी स्कूलों का, जिनकी संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ रही है, सब प्रबन्ध स्वयं सरकार करती है; शेष का प्रबन्ध म्युनिसिपल वा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड वा गैरसरकारी सज्जनों अथवा संस्थाओं द्वारा हुआ करता है। बंगाल, बर्मा में अधिकांश स्कूलों का प्रबन्ध गैर-सरकारी है। ये सब देशजात स्कूल हैं जिन्हें अदल बदल कर शिक्षाविभाग की आवश्यकताओं के योग्य बना दिया गया है। कुछ नये ढंग के स्कूल हैं जिनके मालिक देशी सज्जन हैं, और कुछ स्कूल मिशनरी सुसाइटियों (संस्थाओं) द्वारा संचालित हैं।

---

* इम्पीरियल गजेटियर भाग ४, पृ० ४१९।

संचालकों की सभा (Court of Directors) ने १८५४ में स्वीकार किया था कि सरकार सर्वसाधारण को देशी भाषा में शिक्षा देने के लिये विशेषतया बाध्य है, और यही बात भारत सरकार ने भी स्वीकार करली है। वह इस कर्त्तव्य को पालन करने में हमेशे अधिक से अधिक उत्साह दिखाती आई है, पर तो भी प्राथमिक शिक्षा का उतना प्रचार नहीं हुआ है जितना कि आवश्यक है।

माध्यमिक स्कूल तीन प्रकार के हैं—वर्नेक्युलर मिडिल स्कूल, मिडिल इंगलिश स्कूल और हाई-स्कूल। वर्नेक्युलर मिडिल स्कूलों का पाठ्यक्रम प्राथमिक स्कूल कोर्स का ही विस्तार है। मिडिल इंगलिश स्कूलों में अंगरेजी भाषा की शिक्षा होती है और अंगरेजी शिक्षा का माध्यम भी है। पाठ्यक्रम प्रायः वर्नेक्युलर स्कूलों सा है। हाईस्कूलों में, जिसे बंगाल में हाइयर इंगलिश स्कूल भी कहते हैं, मेट्रिकुलेशन कक्षा तक की पढ़ाई होती है। इन स्कूलों में प्रारम्भिक शिक्षा का भी प्रबन्ध होता है। जिन बच्चों ने बाहर में शिक्षा पाई है उनको किसी ऊंचे 'मान' में भी जिसके वे योग्य हों, भरती किया जा सकता है।

विश्वविद्यालयों में संलग्न कालेजों तथा विश्वविद्यालय के अध्यापक, लेकचरर (व्याख्याता), रीडर, फेलो (आज कल घूमनेवाले—ट्रेवलिंग—फेलो भी नियुक्त हुए हैं) द्वारा उच्चतम शिक्षा दी जाती है। यहां पांच विश्वविद्यालय

हैं जो कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, लाहौर और इलाहाबाद में स्थित हैं। पहले तीनों १८५७ में स्थापित हुए थे। पंजाब युनिवर्सिटी कालेज १८८२में विश्वविद्यालय बना दिया गया। १८८७ में इलाहाबाद का विश्वविद्यालय स्थापित हुआ। पटना और ढाका में विश्वविद्यालय स्थापित होने वाले हैं, बर्मा और नागपुर में भी विश्वविद्यालय स्थापित करने का विचार हो रहा है।

ब्रिटिश भारत के विश्वविद्यालयों का कानून १९०४ के ऐक्ट नं० ८ में है जो १८५७ के ऐक्ट को बदल कर बना है। इस कानून से विश्वविद्यालय को विद्यार्थियों की शिक्षा का प्रबन्ध करने, युनिवर्सिटी प्रोफेसर और लेकचरर बहाल करने, शिक्षा के लिये दी हुई वृत्ति को रखने और उसका प्रबन्ध करने, पुस्तकालय, प्रयोगशाला (Laboratory) और वस्तु-संग्रहालय (अजायबघर) स्थापित करने और चलाने, विद्यार्थियों के रहने की जगह और उनके भद्र आचरण के लिये नियम बनाने और साधारणतः शिक्षा प्रचार और खोज (Research) करने की अभिलाषा उत्पन्न कराने का अधिकार है। विश्वविद्यालय में चान्सलर (कलकत्ता में रेक्टर भी हैं) भाइसचान्सलर, 'एक्सअफिशियो' (पदाधिकारी) और साधारण फेलो रहते हैं। बड़े बड़े सरकारी अफसर एक्स-अफिशियो फेलो भी होते हैं उन की संख्या दस से अधिक नहीं हो सकती है। साधारण फेलों में चान्सलर द्वारा

नियुक्त तथा फेकल्टियों द्वारा निर्वाचित और रजिस्टर्ड ग्रेजुयेटों द्वारा अथवा सेनेट द्वारा निर्वाचित सज्जन रहते हैं। साधारण फेलो के कार्य की अवधि पांच वर्ष की है। कलकत्ता, बम्बई और मद्रास के विश्वविद्यालयों में ऐसे सज्जनों की संख्या ५० से अधिक और सौ से कम होती है। बड़ेलाट कलकत्ता विश्वविद्यालय के चान्सलर और बंगाल के गवर्नर रेक्टर हैं। अन्य विश्वविद्यालयों में प्रान्तीय शासक ही चान्सलर होता है।

कानून ने जो अधिकार दिया है उसके अनुसार सेनेट सभा डिग्री कायम कर सकती है और डिग्रियों और परीक्षाओं के अनुसार प्रमाणपत्र, सनद वा सम्मान-सूचक उपाधि वितरण कर सकती है। विश्वविद्यालय किसी कालेज को संलग्न कालेज बना सकता है वा उससे सम्बन्ध काट सकता है, वह निजका कालेज भी चला सकता है। किसी कालेज को संलग्न करने वा न करने के विषय में सेनेट सभा की जो राय होती है वह भारत सरकार के यहां भेजी जाती है और वही उसपर अन्तिम विचार करती है। सेनेट सभा से जो रेगुलेशन (नियम) बनते हैं उनको स्वीकृति सरकार से लेनी पड़ती है। सब विश्वविद्यालय कला, कानून और डाक्टरी की उपाधियां देते हैं; मद्रास को छोड़ सब किसी को अलग अलग विज्ञानभवन हैं; इलाहाबाद को छोड़ सब जगह इञ्जिनियरिंग (स्थापत्य विद्या) की डिग्री मिलती है।

यहां तक तो उच्च वा उदार शिक्षा के प्रबन्ध का वर्णन किया गया। यहां पर भिन्न भिन्न कलाओं की शिक्षा के भी स्कूल हैं। बहुत पहले कला कौशल की शिक्षा की ओर सरकार की दृष्टि गई थी। बंगाल में १८६२ में सर सिसिल बीडन ने 'भारत कला-भवन' (Indian School of Arts) को सरकारी स्कूल बना देने के लिये भारत सरकार को प्रोत्साहित किया। १८५४ में कुछ सज्जनों ने कला कौशल की उन्नति के लिये एक संस्था स्थापित की थी जिसके उद्योग से यह भवन स्थापित हुआ था, परन्तु उस समय वह सब प्रकार से सरकार का ही आपेक्षित हो गया था। ललित कलाओं के मूल सिद्धान्तों को अलंकार और उपयोगिता दोनो की दृष्टि से समझने, उनके गुणदोष को ग्रहण करने तथा उस विषय की अच्छी रुचि उपजाने की चेष्टा करना ही इस भवन का प्रधान उद्देश्य था। इसके अतिरिक्त नकशा तयार करनेवाले, ढांचा खड़ा करनेवाले, इञ्जिनियर, ढालने, लोथो करने औरखोदने वाले कारीगरों की जो आवश्यकता है उसका पूरा करना भी उस भवन का काम था। * जब सर रिचार्ड टेम्पल बंगाल के छोटेलाट थे तब हुगली, ढाका, पटना और कटक में सर्वे (पैमाइश करने के लिये) स्कूलों की स्थापना कर औद्योगिक शिक्षा का विस्तार किया गया था। परन्तु इस प्रकार की शिक्षा का उस समय

* Bengal Under Lieutenant Governors, Vol I, p 289.

देश में आदर न था। शिल्पी अपने बच्चों को जहां तक सिखा सकते थे वहीं तक की कला का प्रचार उस समय था। बढ़ई अपने बेटे को बढ़ई के काम की शिक्षा देता था इत्यादि। स्कूलों में जो नियमानुकूल औद्योगिक शिक्षा मिलती है उसकी कदर नहीं थी। जो हो आज कल इस शिक्षा का आदर है, और जिन स्कूलों में ऐसी शिक्षा मिलती है उनकी संख्या बढ़ती जाती है। इस विषय का अनुसन्धान करने के लिये मार्च १८०२ में जो कमिटी बैठी थी उसने जिन १२३ कला-भवनों की सूची तैयार की थी, उनमें से अधिकांश हाल के थे। कुछ बड़े बड़े विद्यालय सरकारी हैं, कुछ म्युनिसिपल और लोकल बोर्ड द्वारा स्थापित किये गये हैं और शेष मिश्नरियों वा गैर सरकारी सज्जनों की सहायता से चलते हैं। * औद्योगिक शिक्षाप्रणाली को सुधारने का प्रश्न कुछ दिनों से सरकार के सामने है, और कुछ पढ़े लिखे विद्यार्थियों को योरप वा अमेरिका भेजकर औद्योगिक शिक्षा प्राप्त करने का प्रबन्ध किया गया है। † कलकत्ता विश्वविद्यालय में भी वैसी सुविधायें की गई हैं; सरकार ने भी मन्तव्य प्रकाश कर एक कलाभवन (Technological Institute) स्थापित करने का आशय प्रकट किया है।

---

* Imperial Gazetteer of India, Vol. IV, p 406.

† Ibid p. 438.

इंजिनियरिंग कालेजों में वैज्ञानिक रीति पर उच्चकक्षा की औद्योगिक शिक्षा मिलती है। मद्रास, बम्बई, बंगाल और युक्तप्रदेश में ऐसे कालेज वर्त्तमान हैं। युक्तप्रदेश में रुड़की तथा बंगाल में शिवपुर और बम्बई में पूना का कालेज सबसे बड़ा है। बम्बई में विक्टोरिया जुबिली-टेकनिकल इन्सटिट्यूशन में इंजिनियरों, मेशीनवालों और ड्राफ्टस्मेन (नकशा बनानेवालों) को शिक्षा दी जाती है।

कलकत्ता, मद्रास, बम्बई, लाहौर, लखनऊ में स्थापित मेडिकल कालेजों और स्कूलों में डाक्टरी की शिक्षा मिलती है। ये सब स्कूल सरकारी हैं।

कलकत्ता और मद्रास के मेडिकल कालेज १८४५ और १८६० में स्थापित हुए थे। धर्मसम्बन्धी दुराग्रह के कारण पुराने समय में लोग विलायती दवा से घृणा करते थे; कलकत्ता मेडिकल कालेज का वह विद्यार्थी जिसने पहले पहल मुर्दों को चीरफाड़ की थी, बड़ा साहसी गिना जाता था। जिसमें लड़के उस कालेज में पढ़ने आवें इसके लिये वृत्ति देनी पड़ी थी। अभी हालमें गैरसरकारी मेडिकल स्कूल और अस्पताल खुले हैं, उन्हें अब क्रमशः सर्वसाधारण और सरकार से सहायता मिलने लगी है, जिससे देश में डाक्टरी शिक्षा के अभाव की बड़ी पूर्त्ति हो रही है।

मद्रास, बम्बई और लाहौर में केन्द्रीय (सेन्ट्रल) 'ला' कालेजों में कानूनी शिक्षा मिलती है। बंगाल और युक्तप्रदेश में आर्टस् (साधारण) कालेजों में ही कानून की शिक्षा का भी प्रबन्ध होता था। हाल ही में कलकत्ते में, भूतपूर्व वाइसचान्सलर, मा० सर आशुतोष मुखरजीके उद्योग से विश्वविद्यालय की ओर से एक केन्द्रीय ला कालेज स्थापित हुआ है। यहां प्राय: १६०० लड़के पढ़ते हैं, इसके साथ एक बहुत ही अच्छा, सब अवयवों से पूर्ण, छात्रनिवास है, जो विश्वविद्यालय के योग्य, सर्वप्रिय चान्सलर लाट हार्डिंग के नाम पर बना है।

नार्मल कालेज तथा मास्टरों को शिक्षा देने के लिये जो सरकारी ट्रेनिंग स्कूल हैं, तथा व्यापारिक शिक्षा के लिये जो क्लास वा स्कूल खोले जा रहे हैं उनका नामोल्लेख मात्र ही यथेष्ट होगा। बम्बई में व्यापारिक शिक्षा के स्कूलों की अच्छी उन्नति है, बंगाल में भी इसका प्रचार बढ़ रहा है।

कृषिशिक्षा के लिये कालेज वा उसका अंश पहले मद्रास, बम्बई, युक्त प्रदेश और मध्य प्रदेश में खोला गया था। पहले बंगाल में जो कलकत्ते के पास शिवपुर में कृषिशिक्षा के लिये क्लास खुले थे। परन्तु आज कल उनके स्थान में एक सेन्ट्रल कृषिकालेज खुला है जो सम्पूर्ण भारतवर्ष के लिये है। यहां पर कृषि प्रयोगशाला तथा खेती और पशुपालन के लिये 'फार्म' (प्रयोग क्षेत्र) बने हैं; यह कालेज बिहार के

दरभंगा जिले के पूसा नामक स्थान में हैं। बंगाल के लिये एक कृषि कालेज सबौर, जिला भागलपुर, में भी खुला है।

सुन्दरता का आदर्श जाति जाति के लिये भिन्न होता है, ललित कला की शैली विशेष कर भिन्न होती है। विज्ञान सारे संसार में एक ही होता है, परन्तु ललित कला जाति के अनुसार भिन्न होती है। यहां पर कलकत्ता, बम्बई, मद्रास और लाहौर में जो आर्ट्स स्कूल (ललित कला के विद्यालय) हैं वे सब के सब सरकारी हैं। मद्रास का स्कूल १८५० में, कलकत्ते का १८५४ और बम्बई का १८५७ में खुला था। गैरसरकारी आर्ट स्कूल भी खुले हैं जिनको सर्वसाधारण और सरकार से सहायता मिलती

विद्याप्रचार और अन्वेषण करने की शक्ति के विकाश के लिये स्कूल कालेजों के अतिरिक्त पुस्तकालय और वस्तु-संग्रहालय के ऐसी संस्थायें भी स्थापित हुई हैं। कलकत्ते की इम्पीरियल लाइब्रेरी सरकारी चीज है। बहुत से सरकारी कालेजों में भी अच्छे अच्छे पुस्तकालय हैं। विद्वानों की संस्थाओं के पुस्तकालयों को भी सरकारी सहायता मिलती है; पुरानी पुरानी अप्राप्य पुस्तकों को संग्रह करने, उनकी सूची बनाने के लिये भी सरकारी सहायता दी जाती है। कलकत्ता विश्वविद्यालय की जो 'दरभंगा लाइब्रेरी' है वह शीघ्रता से बढ़ रही है साथ साथ उसके महत्व और उपयोगिता की भी वृद्धि होती जाती है।

कलकत्ते के 'इकानमिक म्यूज़ियम' (सम्पत्ति से सम्बन्ध रखनेवाली वस्तुओं का संग्रहालय) की प्रतिष्ठा छोटेलाट, सर जार्ज कैम्बेल ने की थी। देशजात वस्तुओं के पूर्णज्ञान की उपयोगिता का अनुभव करते हुए आपने देशजात उपयोगी वस्तुओं की पूरी रिपोर्ट बनवाने की इच्छा प्रगट की थी। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिये आपने पहले एक ऐसा स्थान बनवाना उचित समझा कि जहां देश में उत्पन्न होनेवाली वनस्पतियों, द्रव्यों तथा अन्य वस्तुओं के नमूने एकत्र किये जा सकें और जहां सर्वसाधारण को जाने का अधिकार हो। 'इकानमिक म्यूज़ियम' ही ऐसा स्थान बन गया। यह आज कल 'इंडियन म्यूज़ियम' (भारत के अजायबघर) का अंश मात्र है। वहां कच्चे और तैय्यार दोनों तरह के माल रखे गये हैं जो श्रेणियों में विभक्त हैं। लखनऊ और बम्बई में भी 'इकानमिक म्यूज़ियम, हैं। वनस्पति वा पशु संग्रहालय (चिड़ियाखाना) भी शिक्षा में सहायता देते हैं।

स्कूल कालेजों को स्थापित करने, सुधारने वा बढ़ाने तथा विद्याबुद्धि-विकाश के अन्य साधनों की संयोजना से शिक्षा प्रचार का कार्य इस तेजी से बढ़ रहा है कि उसके विस्तृत वर्णन से कोई विशेष लाभ न होगा। आज का वर्णन छ महीनों के बाद पुराना हो जायगा। परन्तु इंगलैण्ड जिन मूल सिद्धान्तों पर भारत में शिक्षा विस्तार कर रहा है उनका पूर्ण ज्ञान हो जाना आवश्यक होगा।

यह पहले कहा जा चुका है कि अंगरेजी राज के आरम्भ में देशी ढंग पर पढ़ाने लिखाने की चाल चलती रही, सरकार से उत्साह और सहायता भी मिलती रही। परन्तु कुछ ही दिनों बाद यह सन्देह होने लगा कि क्या केवल देशी शिक्षा से ही भारत के शिक्षाविषयक अभाव दूर हो जांयगे और भारतवासियों को आधुनिक आदर्श पर ज्ञानवृद्धि के उत्तमोत्तम साधन मिलने लगेंगे। अब इस विषय में वादविवाद होने लगा और दो दल होगये। यह साधारणतः स्वीकार किया गया कि देशी भाषा की शिक्षा का विस्तार हो। पूर्वीय शिक्षा के पक्षपाती चाहते थे कि देशी भाषा की शिक्षा के साथ साथ संस्कृत, फारसी, अरबी जैसी श्रेष्ठ भाषाओं की भी शिक्षा मिले क्योंकि देशी साहित्य व्यवहार और धर्म शास्त्र इन्हीं भाषाओं में लिखे गये हैं। अंगरेजी भाषा द्वारा शिक्षा देनेके पक्षपातियों का कहना था कि उच्च शिक्षा अंगरेजी भाषा में ही दी जावे, क्योंकि साहित्य पढ़ने के लाभों के अतिरिक्त अंगरेजी भाषा से पाश्चात्य ज्ञान विज्ञान की कुंजी मिल जायगी। इस दल में देशी समाज के अगुआ भी सम्मिलित थे जिनमें से राजा राम मोहन राय का नाम विशेष उल्लेख योग्य है। अंगरेजी शिक्षा के पक्षपातियों की ही जीत हुई। इस दल के जय का प्रधान कारण लार्ड मेकाले का दृढ़ निश्चय और योग्यता थी। आप उस समय 'लीगल मेम्बर' और शिक्षा परिषद के

सदस्य थे। बड़ेलाट बेंटिङ्क ने भी लाट मेकाले की राय को पसन्द की; यह १८३५ के प्रसिद्ध मन्तव्य (मिनट) में दी हुई है, और उसके बाद ही सरकार ने पाश्चात्य शिक्षा के पक्ष में मन्तव्य प्रकाशित किया। यह इसी निर्णय का फल है कि आज तक अंगरेजी भाषा में ही उच्च शिक्षा दी जा रही है, जिससे शिक्षितों के जीवन और विचार में बड़े बड़े परिवर्त्तन हुए हैं, और उन शिक्षितों के द्वारा अन्य भारत-वासी सज्जनों के विचार भी बदल गये हैं। इससे पश्चिमीय देशों के उन्नत से उन्नत विचारों के साथ भारत का संयोग हुआ है, यहां के विचारों में एक नये जीवन का संचार हुआ है और यहांवालों की बुद्धि और कार्यकारिणीशक्ति के विकाश के साथ साथ ज्ञान और राजनीति सम्बन्धी उच्च अभिलाषाओं का भी जन्म हुआ है। शिक्षा के पाठक्रम में देशी भाषाओं को भी उचित स्थान मिला है, परन्तु उसके गुणों का पक्षपात नहीं किया गया है। ग्राजुयेट और अण्डर ग्राजुयेट के लिये देशी भाषा की विधिवत् शिक्षा अनिवार्य कर दी गई है। कलकत्ता विश्वविद्यालय ने हाल ही में बंगला भाषा के लिये एक 'रीडरशिप' और एक 'फेलोशिप' कायम किया है।

इस देश में सरकार वा मिश्नरी वा भारतवर्ष के शिक्षित समाज के लोगों द्वारा जगह जगह स्कूल कालेज खोले गये थे। परन्तु १८५३ तक शिक्षा का विस्तार अधिक नहीं

था। १८५४ में उसमें नवीन जीवन का संचार हुआ। सर चार्लस् उड् (जो पीछे लाट हालिफाक्स के नाम से मशहूर हुए) निरीक्षक सभा (Board of Control) के सभापति थे। कम्पनी की शासक सभा (Court of Directors) ने निश्चय किया कि सरकार भारतवर्ष में सब प्रकार की शिक्षा का विस्तार और विधिपूर्वक उन्नति करे। उपर्युक्त चार्लस् उड् महोदय ने सकौन्सिल बड़ेलाट के नाम में एक खरीता भेजा जो बहुत ही प्रसिद्ध है और जिसमें सर्वसाधारण की शिक्षाविधि तथा उसके शासन, उसकी सहायता और उसके प्रबन्ध इत्यादि बातों का संक्षेप वर्णन किया गया था। जब कम्पनी का राज्य महारानी के हाथ चला गया तब भी १८५८ ई० में शिक्षा की उक्त नीति को ही स्वीकार किया गया था, और आज तक भी सरकार विशेष कर उसी नीति के अनुसार भारतवासियों को शिक्षा देनेका प्रयत्न कर रही है। * इस खरीते में बहुत सी बातों के अलावे हर प्रान्त में "डिपार्टमेण्ट आफ पबलिक इन्सट्रक्शन" (शिक्षा विभाग) और प्रेसिडेन्सी शहरों में विश्वविद्यालय स्थापित करने का आदेश दिया गया था।

भारतवर्ष के इतिहास में यह सब से पहला अवसर है जब कि सब वर्ण, धर्म और मतवालों को सब प्रकार की

---

* Imperial Gazetteer of India, Vol. IV, p 413.

शिक्षा—प्राथमिक से लेकर उच्चतम तक—मिलने लगी है। हिन्दुओं की प्रथा के अनुसार 'टोल' में जो शिक्षा मिलती थी वह उच्च जातिवालों के लिये ही थी। मुसलमानों की पाठशाला में हिन्दू पढ़ सकते थे, परन्तु वहां की पढ़ाई बिरले ही किसी हिन्दू को अच्छी लगती थी; और मुसलमानों की उच्च शिक्षा का पाठक्रम जिसमें धर्म का अंश अधिक था केवल मुसलमानों के लिये रुचिकर होसकता था। यह केवल अंगरेजी राज में सम्भव है कि पढ़नेवाला, चाहे किसी वर्ण, धर्म जाति का क्यों न हो, समाज में उसका पद कैसा ही क्यों न हो, स्कूल कालेजों में बेरोकटोक पढ़ सकता है। जिस प्रकार कानून की दृष्टि में सब कोई बराबर हैं उसी प्रकार शिक्षा में भी है। इस सिद्धान्त के कारण सब जाति के लोगों में शिक्षा का प्रचार तो हुआ ही है इसके अतिरिक्त भी यहां के अधिवासियों की विचार-शैली में बहुत कुछ परिवर्त्तन होगया है; इसीके कारण लोग अब जात-पांत, धर्म वा सामाजिक पद की विभिन्नता पर उतना ध्यान नहीं देते।

स्कूल कालेजों में सब कोई पढ़ सकते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी स्कूल हैं जिनसे जाति विशेष को ही लाभ होता है। जैसे निम्नजाति के बालकों की शिक्षा के स्कूल इत्यादि। ऐसे स्कूल अधिकतर गैरसरकारी (विशेष कर क्रस्तान तथा अन्य मिश्नरी संस्थाओं के ही) हैं, परन्तु उन्हें सरकार से

उत्साह मिलता है। ऐसा अंगरेजीराज में ही सम्भव है, अन्यत्र नहीं। राजकुमारों के लिये भी कई कालेज खुले हैं, ये सब सरकारी हैं, इनमें से अजमेर, राजकोट और लाहौर के कालेज प्रसिद्ध हैं। इनका उद्देश्य राजकुमारों और रईसों के लड़कों को उनके अवस्थानुकूल शिक्षा देना है।

सरकार धार्मिक विषयों में तटस्थता का सिद्धान्त स्वीकार करती है, तथा स्कूल, कालेजों में सब वर्ण धर्म के विद्यार्थियों को पढ़ने का समान अधिकार देती है, इन कारणों से स्कूल कालेजों में धार्मिक विषयों में बिलकुल उदासीनता दिखाई जाती है। यह सिद्धान्त, जैसा कि आगे कहा जा चुका है, १८५४ के खरीते में ही स्पष्टरूप से कह दिया गया था। गैर सरकारी स्कूलों के अधिकारियों को अपने इच्छानुसार धार्मिक शिक्षा देनेसे कोई नहीं रोकता, परन्तु सरकारी स्कूल कालेजों में किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा नहीं दी जासकती है। यदि सच पूछा जाय तो सरकार अपने धर्म को छोड़ कोई दूसरा धर्म नहीं सिखा सकती है। परन्तु जिनका वह धर्म नहीं है उन्हें वह धर्म कैसे सिखाया जाय। फिर भी, कोई ऐसा धर्म भी स्कूलों में नहीं पढ़ाया जासकता जिसे सब लड़के मानने को तैयार न हों। हाल में ऐसा प्रस्ताव हुआ है कि भिन्न भिन्न जातिवालों को अपने धर्म की शिक्षा का प्रबन्ध करने

में सहायता मिले, जिसमें बच्चों की नैतिक शिक्षा की पूर्त्ति होवे।

शिक्षा विस्तार वा यों कहिये कि यहां के अधिवासियों की बुद्धि के विकाश के लिये सरकार जितने किसिम का तथा जिस रीति का प्रबन्ध कर रही है उससे अधिक और कुछ नहीं हो सकता। बड़ेलाट हार्डिंग की सरकार ने शिक्षा के विषय में जो मन्तव्य हाल ही में प्रकाशित किया है उससे इसका सजीव चित्र खिंच जाता है। स्कूली शिक्षा का, चाहे वह प्राथमिक, सेकण्डरी वा उच्चतर हो, देशी भाषा में हो वा अंगरेजी में—अधिक से अधिक अंश सरकार द्वारा परिचालित है। सरकार ने बहुत सी छात्रवृत्तियां भी स्थापित की हैं। सरकारी स्कूल कालेज तो हैं ही, उनके अतिरिक्त भी बहुत से गैरसरकारी स्कूलों को सरकार से सहायता मिलती है। उद्योगधन्धे, विज्ञान ललितकला सम्बन्धी विशेष प्रकार की शिक्षा का भार भी सरकार ही लिये हुए है। स्त्रीशिक्षा विशेष कर सरकार के हाथ है। एक ओर आदिमनिवासी वा निम्न जाति और दूसरी ओर राजा महाराजा और रईसों के लड़कों की शिक्षा का भार भी सरकार पर ही है। सरकार की अध्यक्षता और सहायता से ही विज्ञों की संस्थाओं की वृद्धि होती है तथा पुस्तकालय स्थापित होते हैं। सरकार ही अजायबघर खोलती और चलाती है। जिसमें शासकों को भविष्यमें सहायता मिले,

और इतिहास लिखनेवालों को सामग्री मिले इस हेतु सरकार कागजपत्र सावधानी से बचा कर रखती है। सरकार इम्पीरियल (साम्राज्य के लिये) तथा प्रादेशिक ओरियेण्टल इन्सटीट्यूट (पूर्वीय विद्याभवन) खोलने का विचार कर रही है। सरकार विज्ञ ग्रन्थकारों के ग्रन्थ को प्रतियां खरीद कर उनकी सहायता करती है। तत्व के अनुसन्धान के लिये सरकार ने अपनी संस्थायें खोल रखी हैं, तथा गैर सरकारी संस्थाओं वा सज्जनों को भी ऐसा करने के लिये सहायता देती है। जब कभी अवसर उपस्थित होता है तो सरकार अपने अफसरों को खास खास विषय का अनुसन्धान करने के लिये नियुक्त करती है। उसने विश्वविद्यालयों को अनुसन्धान (खोज) कराने का अधिकार दिया है और तदर्थ सहायता भी देती है। शिमला के पास कसौली में जो केन्द्रीय प्रयोगशाला है उसका उद्देश्य अनुसन्धान (खोज) करना है। वैज्ञानिक रीति से जो सर्वे किया गया है, और जिसका वर्णन अन्यत्र किया जायगा, वह भी एक प्रकार का अनुसन्धान ही है। समय समय पर जो मनुष्यगणना की जाती है, वह भी इसी श्रेणी में है।

यहां जिन जिन कार्यों का वर्णन किया गया है, उन्नत देशों में उनमें से अधिकांश का सम्पादन सर्व साधारण द्वारा ही हुआ करता है। बहुत दिनों से क्रिस्तान पादरियों ने स्कूल पुस्तकालय स्थापित कर अंगरेजी वा देशी भाषाओं में

पाठपुस्तक लिखकर वा अन्य साहित्य ग्रन्थ छाप कर उपकार किया है। यद्यपि वे लोग सरकारी सहायता के बिना भी इतना काम कर सकते थे, तथापि यह स्मरण रखना चाहिये कि पादड़ियों को जो यहां इतनी संख्या है वह केवल अंगरेजी सरकार के ही कारण है; और वे लोग जो कुछ कर सकते हैं वह सब सरकार की नीति के कारण ही। अगर सरकारने अंगरेजी शिक्षा देने का निश्चय न किया होता तो अंगरेजी में किताबें बहुत कम लिखी जातीं। हाल में शिक्षा का कुछ भार भारतीय सज्जनों ने भी उठाया है। पण्डित ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, बम्बई के मि० रायचन्द प्रेमचन्द, बाबू प्रसन्न कुमार ठाकुर, बाबू गुरुप्रसन्न घोष, सर तारक नाथ पालित, सर रासबिहारी घोष और ताता जैसे देश हितैषी सज्जनों ने बड़े उत्साह से शिक्षा विस्तार में सरकार की सहायता की है। पर तौ भी शिक्षाप्रचार का विशेष भार सरकार पर ही रहा है, उसीने शुरु से मार्ग दिखाया है।

षष्ठ अध्याय।

साम्पत्तिक उन्नति।

कृषि—कृषि के प्रधान द्रव्य—खाद्य द्रव्य—चावल, गेंहू, बाजड़ा—जूट—रेशम का कीड़ा पालना—चाय, काफी, सिनकोना—नील—कृषि सम्बन्धी सरकार के कार्य्य—स्वावलम्ब की आवश्यकता—उद्योग की स्वच्छन्दता—प्रदर्शनी—आविष्कार की रक्षा—अबाध वाणिज्य—आमदनी रफ्तनी पर का टैक्स—उसका इतिहास—कृषकों को कर्ज—दिहाती बंक—सेविंग बंक—लगान के कानून—अकाल—उसका कारण—उसके रोकने और उससे बचने के उपाय—विदेशी व्यापार की उन्नति।

कितने युगों से कृषि ही भारत का प्रधान व्यवसाय रहा है और अब भी है; आजकल विशेष कर धान, गेंहू, बाजड़ा, मकई, जव, जई, दलहन, तेलहन, ऊख, खजूर, रूई, पाट, नील, अफीम, तम्बाकू, तूंत, चाय, काफी, सिनकोना इत्यादि पदार्थों की खेती होती है। अन्य द्रव्यों की अपेक्षा धान की खेती अधिक होती है। निम्न बर्म्मा और बंगाल की बड़ी बड़ी नदियों द्वारा जलप्लावित प्रान्तों (डेल्टाओं) में, गोदावरी कृष्णा और कावेरी की डेल्टाओं, सम्पूर्ण समुद्र-तट तक फैले हुए जमीन के लम्बे, पतले टुकड़े, त्रावंकोर,

मालाबार, कनारा और कोंकण की नीची जमीनों में सफलता पूर्वक धान की खेती करने के सब सामान मिलते हैं, और येही धान की खेती के सबसे बड़े इलाके हैं। * शेष भारतवर्ष में लोग धान की खेती से अनभिज्ञ नहीं तो उसे दूसरा नम्बर तो अवश्य देते हैं। आसाम को छोड़ भारत के भीतरी प्रदेशों में धान के स्थान में बाजड़े की खेती होती है। सर विलियम हण्टर लिखते हैं कि "यदि सम्पूर्ण भारतवर्ष की बात कही जाय तो कहना पड़ेगा कि साधारणतः उसका प्रधान खाद्य न चावल है न गेंहू, बरन बाजड़ा।"

पाट की खेती बंगाल (विशेष कर उत्तर और पूरब बंगाल) को छोड़ प्रायः और कहीं नहीं होती। हुगली, ब्रह्मपुत्र, मेगना इन तीन नदियों के जल द्वारा प्लावित प्रान्तों में पाट की खेती सब से अच्छी होती है। पाट की खेती और व्यवसाय की उन्नति अंगरेजी राज में हो हुई है। ज्यों ज्यों अंगरेजों के साथ गल्ले का—विशेष कर गेंहू का— व्यवसाय बढ़ता गया त्यों त्यों बोरे (बस्ते) की मांग भी बढ़ती गई और इससे पाट की खेती को बड़ी उत्तेजना मिली। † पाट के व्यवसाय में लाभ बहुत है,

---

* पी, एन्. बोस कृत हिन्दू सभ्यता का इतिहास, भाग २, पृ० १७५।

† पी, एन्, बोस कृत इतिहास, पृ० १८९।

इससे पाट की खेती बढ़ती जाती है और धान की खेती का क्रमशः ह्रास हुआ जाता है।

रेशम के लिये कीड़ों को पालने का व्यवसाय भारत में बहुत पुराना है। परन्तु यह प्रायः निर्विवाद है कि न तूंत और न रेशम का कीड़ा ही भारत का देशजात पदार्थ है। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने जब बंगाल में व्यापार की कोठियां स्थापित की थीं उस समय रेशम का व्यवसाय उठता जाता था, उसे पुनर्जीवित करने के लिये कम्पनी ने बड़ी चेष्टा की थी। बंगाल सब दिन से तूंत की खेती में अगुआ रहा है; इस कारण कम्पनी ने कई कोठियां खोलीं जहां सूत बनवाने के लिये रेशम के कोए (Cacoons) को गरम करने के अनगिनत गमले पड़े थे, और जहां किसान रेशम के कोए लाकर बेचा करते थे। १७६८ में कम्पनी ने इटाली से कुछ कारीगर मंगाये जो यहां के कारीगरों को इटाली की प्रथा के अनुसार कोए से सूत निकालना सिखाते थे। कुछ ही दिनों में बंगाल के रेशम का व्यापार बढ़ गया और योरप के बाजारों में इसकी ही बिक्री होने लगी। १८३३ तक इसके अच्छे दिन रहे, उसके बाद कम्पनी ने व्यापार करना छोड़ दिया, और रेशम का व्यापार मामूली व्यापारियों के हाथ चला गया। तब से रेशम के लिये कीड़ा पालना बराबर घटता ही जाता है। जितने का रेशम का माल यहां से बाहर जाता है उससे अधिक का कच्चा रेशम यहां विदेश

से आता है। आज कल जापान, चीन तथा भूमध्यसागर के किनारे के देशों का रेशमी माल योरप और भारत के बाजारों को अपने अधिकार में रखे हुए है। * चाय, काफी और सिनकोना की उपज से बंगाल के किसानों को कोई सम्बन्ध नहीं है। योरप के महाजन ही इन तीनों पदार्थों की खेती में रुपया लगाते हैं, वे लोग इनकी खेती में अपनी बुद्धि लगाते हैं और काफी को छोड़ और सब की खेती अंगरेज सरकार की मदद से ही हिन्दुस्तान मे शुरु हुई है। †

बंगाल में जो नील की खेती और नील तैय्यार करने के व्यवसाय की वृद्धि हुई है वह ईस्ट इण्डिया कम्पनी की प्रशस्त नीति का ही फल है। कम्पनी ने ही वेस्ट इण्डीज़ से होशियार निलहे साहबों को बुला कर और रुपये अगोड़, (आग्रिम) देकर उत्साहित किया था। उसी तरह से वेस्ट इण्डीज़ से ऊख के खेतिहरों को बुला कर ऊख की खेती की उन्नति करने की चेष्टा की गई थी, पर वह सफल न हुई। ‡

एक जानकार (विज्ञ) लेखक ने सरकार के कृषि सम्बन्धी कार्यों का इस प्रकार वर्णन किया है। §

---

* पी, एन्, बोस कृत सभ्यता का इतिहास, भाग २, पृ० १९९।

† पी, एन्, बोस कृत सभ्यता का इतिहास भाग २, पृष्ठ २००

‡ वही, पृ० १९२।

§ वही, पृ० २०८–९।

"ईस्ट इण्डिया कम्पनी के समय से ही सरकार ने देशी कृषि की उन्नति और प्रचार की चेष्टा की है। यह बात बंगाल के रेशम के व्यवसाय के इतिहास से स्पष्ट है। करोलिना का धान, अमेरिका की रूई, चाय और सिनकोना भारत में उपजाने, पटसन से सन निकालने और वेष्ट इण्डीज़ के ढांचे पर ऊख की खेती करने के यत्न भी उक्त कथन की पुष्टि करते हैं।

"लेकिन १८७२ तक इन कामों के लिये कोई खास महकमा न था। उसी साल भारत सरकार की मातहत में लगान, कृषि और व्यवसाय का एक महकमा खुला। + + + यह विभाग आगे चल कर उठा दिया गया, पर लाट रिपन ने उसे पुनर्जीवित किया। उनके समय में ही कृषि की उन्नति का मार्ग और प्रशस्त कर दिया गया।

"प्रान्त प्रान्त में प्रयोग क्षेत्र (Model farms) खोले गये हैं, जिनका निरीक्षण कृषि विभाग के हाथ है। कुछ का खर्च सरकार देती है और कुछ स्थानीय जमीन्दारों वा राजाओं के रुपये से चलते हैं। बंगाल में शिवपुर का सरकारी फार्म (यह अब बन्द होगया है), बर्द्धमान राज फार्म, और बिहार में डुमरांव राजफार्म हैं (इन दोनों का खर्च क्रमशः बर्द्धमान और डुमरांव राज से मिलता है)। पश्चिमोत्तर प्रदेश (अब संयुक्त प्रान्त कहलाता है) में कानपुर का प्रयोग क्षेत्र सरकारी है। मद्रास सेदापेट में भी सरकारी

फार्म है। बम्बई खान्देश में, मध्यप्रदेश के नागपुर में सरकारी फार्म हैं। पंजाब, आसाम, बर्मा में भी छोटे छोटे फार्म हैं।"

कृषि विद्या की शिक्षा में सरकार ने क्या किया है उसका वर्णन किया जाचुका है। इस देश के लिये कृषि की कैसी आवश्यकता है इसको वे लोग ऐसी अच्छी तरह से समझते हैं कि इसकी चिन्ता को मन से कभी अलग नहीं होने देते। उनकी सहायता का अन्त नहीं हुआ है, वह अब तक चली जाती है। आज कल मिश्र देश के कपास को भारत में उपजाने का विचार हो रहा है। सरकारी अफसर सवेशी और पौधों की बीमारी तथा तरह तरह के खाद की उपयोगिता का अध्ययन कर रहे हैं। इन विषयों में बहुत कुछ लाभ होचुका है और अधिक की आशा है।

रोजगार, वाणिज्य, व्यवसाय इत्यादि मनुष्य जीवन के ऐसे कार्य हैं जिनमें स्वावलम्ब की अत्यन्त आवश्यकता है। रोजगार की उन्नति के लिये श्रम और धन (पूंजी) आवश्यक हैं, परन्तु साथ साथ यह भी कहा जा सकता है कि किसी जाति के व्यापार वाणिज्य की उन्नति के लिये कतिपय मानसिक, नैतिक और सामाजिक गुणों तथा कला कौशल के ज्ञान की भी आवश्यकता है; जैसे, उद्यम, साहस, ईमानदारी, परस्पर का विश्वास रखना, कार्य निर्माण की (सृजनी) शक्ति, परस्पर मिलकर कार्य करना तथा व्यवहारिक बुद्धि इत्यादि। पूंजी

देकर वा मजदूर इकट्ठा कर किसी रोजगार की प्रत्यक्ष सहायता करना सरकार के लिये सम्भव नहीं है। सरकार सर्व साधारण के साथ साझे में रोजगार नहीं कर सकती, क्योंकि राजा प्रजा के बीच ऐसा सम्बन्ध स्थापित नहीं हो सकता। आज कल भारत में ऐसा होना और भी असम्भव है क्योंकि अब राज्य-प्रबन्ध व्यापारियों के हाथ से निकल कर ब्रिटिश सम्राट के हाथ चला गया है। हां, सरकार अप्रत्यक्ष रूप से सहायता कर सकती है, और ऐसी सहायता मुक्तहस्त होकर की गई है। जैसा कि अगले अध्याय में कहा गया है, सरकार लोगोंको व्यवहारिक शिक्षा दे रही है, और अब आज कल उसको बढ़ाने का विचार किया जा रहा है। भारत सरकार का एक पृथक विभाग (महकमा) है जो व्यापार वाणिज्य की सहायता करता है। इधर कई वर्षों से रोजगार की तरक्की करने में बहुत तरह से उत्साह दिखाया गया है। भद्र-पुरुष व्यवसाय वाणिज्य की ओर अधिक झुकने लगे हैं और सरकार भी इसमें उनकी सहायता करती है। सरकार यहां के बाजारों में सामान खरीदने का यथासम्भव प्रयत्न करती है, देश में बनी वस्तुओं को अधिक पसन्द करती है। किसी जाति वा संस्था विशेष पर अनुग्रह न कर सब किसी को बराबर देखती है। व्यापार वाणिज्य में स्वतन्त्रता पूर्वक कार्य करने के अधिकार से बढ़कर कोई दूसरा अधिकार किसी सरकार से नहीं मिल सकता है, और वह अधिकार

हमलोगों को मिला हुआ है। नील का व्यवसाय जिसपर बहुत दिनों तक निलहे साहबों का एकाधिपत्य अधिकार था, क्रमशः देशी कृषकों और महाजनों के हाथ चला गया है। मद्रास में विशेष कर ऐसी अवस्था हुई है। जब से रसायनिक प्रक्रिया से नील बनने लगा है तब से देशी नील का रोजगार दब गया है। चाय बागान भी किसी समय विदेशियों ही के हाथ थे; परन्तु हाल में देशी सज्जनों की कई कम्पनियां इस काम के लिये कायम हुई हैं। खान का रोजगार भी कुछ कुछ भारतवासियों के हाथ में आया है। देशी पूंजी से पुतलीघर (मिल) और कारखाने खुल रहे हैं। देशी सज्जन व्यापार वाणिज्य के लिये जो प्रयत्न कर रहे हैं सरकार उसके विरुद्ध कभी नहीं खड़ी होती।

रोजगार की बातों को फैला कर, दर्शकों को नई बातें सुझा कर और प्रदर्शित वस्तुओं की मांग बढ़ाकर प्रदर्शनियां व्यापार वाणिज्य की सहायता करती हैं। ऐसी प्रदर्शनियों का सरकार ने हमेशे पक्ष लिया है और इनके संयोजकों को सहायता और उत्साह दिलाया है। बंगाल के सर्वप्रथम गवर्नर, लाट करमाइकेल ने हाल ही में कलकत्ते की एक प्रदर्शिनी में इस विषय का उत्तम रूप से वर्णन किया था।

देश के कानून के अनुसार आविष्कर्त्ताओं को अर्थात् नये नये कल, पुर्जे बनानेवालों को उत्साह प्रदान किया जाता है, उन्हें अपने परिश्रम का फल उपभोग करने का

अधिकार दिया जाता है। जब किसी चीज को पेटेण्ट करा लिया जाता है तब किसी दूसरे व्यक्ति को उसकी नकल करने का अधिकार नहीं रहता। ऐसा न किया जाय तो लोग नकल करने लगेंगे और नकली माल कम दाम में बेचने लगेंगे। आविष्कर्त्ता को अपने परिश्रम का कुछ भी फल न मिलेगा, और भविष्य में आविष्कारों की नकल नहीं होने देनेसे लोगों का उत्साह बढ़ता है, तथा देशके व्यवसाय की उन्नति होती है।

माल की आमदनी रफ्तनी पर जो कर बैठाया जाता है उससे भी व्यापार पर बहुत प्रभाव पड़ता है। बहुत दिन हुए कि इंगलैण्ड ने वाणिज्य में उन्मुक्तद्वार की नीति का अवलम्बन किया था, अर्थात् उसने निश्चय किया था कि इंगलैण्ड में आने तथा जाने वाले माल पर किसी प्रकार का टैक्स न बैठाया जायगा। इस नीति का सम्बन्ध दूसरे देश के साथ के व्यापार से है, देश के भीतरी व्यापार से नहीं। हिन्दुस्थान में हाल तक माल की आमदनी रफ्तनी पर कर बैठाया जाता था। बाहर से जो माल आता था उसपर विदेश जानेवाले माल की अपेक्षा अधिक कर लगाया जाता था। समय समय पर विदेश जानेवाले माल पर का टैक्स उठता गया, यहां तक कि १८७५ में सिर्फ चावल, नील और लाख की रफ्तनी पर टैक्स रह गया। इंगलैण्ड से जो सूती माल आता था उसपर भी टैक्स बैठाया जाता था।

१८७६ में भारत सचिव ने यह कर उठा देना चाहा, १८७७ में कामन्स महासभा ने भी इसे स्वीकार कर लिया। भारतवर्ष में भी दो वर्षों तक बहुत किसिम के सूती और अन्य माल की आमदनी पर से टैक्स उठा कर उस नीति के अनुसार कार्य होता रहा। १८८२ में दो वस्तुओं को छोड़ कर शेष सब प्रकार के माल की आमदनी पर से टैक्स उठा लिये गये। सिर्फ बाहर से आनेवाले नमक और शराब पर टैक्स रखे गये, क्योंकि उतना ही टैक्स देश में बननेवाले नमक और शराब पर भी बैठाया जाता है। आगे चलकर राजनीतिक कारणों से आनेवाले अस्त्रशस्त्र और गोले बारूद पर टैक्स लगाया गया। रूस और अमेरिका से जो पेट्रोलियम (किरोसिन का तेल) आता है उसपर भी थोड़ा कर लगाया गया है। अतः बहुत दिनों तक भारतवर्ष में विदेश से आनेवाले माल के विषय में उन्मुक्तद्वार की नीति का अवलम्बन किया गया था। तो भी, इंगलैण्ड में भारत से जानेवाले काफी और चाय पर टैक्स बैठाया जाता है। बर्मा के चावल की रफ्तनी पर टैक्स है, जो तीन आने मन के हिसाब से लगाया जाता है।

१८९४ ई० में धनाभाव के कारण भारत सरकार को नीति में परिवर्त्तन हुआ। उन्मुक्तद्वार की नीति को छोड़ना पड़ा। "जिस प्रकार १८७५ में बहुमूल्य धातुओं को छोड़, विदेश से आनेवाले सब प्रकार के माल पर सैकड़े पांच रुपैया

टैक्स बैठाया जाता था, उसी प्रथा का कुछ अदल बदल कर फिर से प्रचार हुआ। * चांदी पर कर लगाया गया; सूती माल पर भी आगे चलकर टैक्स बैठाया गया। १८९६ में सूत पर से टैक्स उठाया गया। बाहर से आनेवाले सूत के कपड़े पर मूल्य के अनुसार सैकड़े ३॥. रुपैया टैक्स लगाया गया, और उतना ही टैक्स भारत की मिलों में बने सूती कपड़ों पर भी बैठाया गया। † १०८ किसिम के ऐसे पदार्थ हैं जिनपर टैक्स बैठाया जाता है। इनमें से बहुत से ऐसे पदार्थ हैं जिनसे बहुत कम आय है। सूती माल से ही सब से अधिक आमदनी है। उसके बाद स्पिरिट में बने शराब, पेट्रोलियम, चीनी, चांदी इत्यादि धातुओं की गिनती है।

कृषकों की सहायता के लिये—विशेष कर उनको कर्ज के बोझ से बचाने के लिये—सरकार ने बहुत से उपाय किये हैं। उनमें से सरकार की तरफ से बैल वा बीया खरीदने के लिये कर्ज देने की प्रथा सब से अधिक महत्व की है और यह चारो तरफ फैली हुई भी है। इस कर्ज़ के लिये गांव-वालों को सम्मिलित तथा व्यक्तिगत दायित्व भी स्वीकार करना पड़ता है। योरप के कृषक बंक के ढांचे पर दिहाती बंक (समवाय समिति) खोलने का प्रयत्न किया जा रहा है, और इसका बहुत कुछ प्रचार भी हो चुका है। इन बंकों

---

* सर जान स्ट्राची कृत इण्डिया, पृ० १८३।

† वही, पृ० १८४। अध्याय १२ पढ़ो।

का पधान उद्देश्य मितव्यय सिखाना, कर्ज देने के लिये पूंजी इकट्ठा करना, सम्मिलित दायित्व स्वीकार कर (सबखा बढ़ा कर) सूद का दर कम करना है। मद्रास, युक्तप्रदेश, बंगाल और पंजाब में इसकी थोड़ी बहुत परीक्षा हो रही है। *

सेविंग बंक का भी उद्देश्य मितव्यय सिखाना है। १८८२—८३ तक कलकत्ता, मद्रास और बम्बई के शहरों में प्रेसिडेन्सीबंकों में और मुफस्सिल में सरकारी खजानों में सेविंग बंक का काम होता था। परन्तु यह सफल न हुआ। यह काम क्रमशः धीरे धीरे बढ़ता गया। जब से डाकघरों में सेविंग बंक खुल गये हैं तब से जमा करानेवालों की संख्या और अमानत की रकम बहुत बढ़ गई है। ये बंक कृषकों को सहायता पहुंचाने के उद्देश्य से नहीं खुले थे, समाज के और और लोग इससे लाभ उठाते हैं। †

रैयतों को लाभ पहुंचानेवाले कार्यों में लगान के कानूनों का उल्लेख किया जा सकता है। प्रत्येक प्रान्त की स्थानीय अवस्था और लगान की प्रथा के अनुसार भिन्न भिन्न कानून बने हैं। परन्तु इस सब कानूनों का यही उद्देश्य

---

* इम्पीरियल गजेटियर, भाग ४, पृ० ५२३।

अब तो इन दिहाती बंकों का प्रचार सम्पूर्ण भारतवर्ष में हो रहा है। कोई प्रदेश इससे खाली नहीं। अनुवादक।

† इम्पीरियल गजेटियर, भाग ४, पृ० ५२४।

है कि रैय्यत से मनमाना मालगुजारी न वसूल की जावे, उसपर और किसी प्रकार का उत्पीड़न न होवे, उसके स्वत्व और दायित्व निश्चित हो जावें, मालगुजारी वसूल करने में सुगमता हो और साथ ही साथ न जमीन्दारों को रुपया वसूलने में ही व्यर्थ झंझट उठाना पड़े और न उनके स्वत्व में ही किसी प्रकार को बाधा पहुंचे।

अकाल इस देश के लिये एक बहुत बड़ी आफत है। खाद्यद्रव्यों के नहीं उपजने से ही अकाल पड़ता है। नहीं उपजने के कारण अनावृष्टि या अतिवृष्टि हैं। उपज नहीं होने वा कम होने से खाद्य द्रव्यों का मूल्य बहुत बढ़ जाता है, और कृषकों तथा छोटे छोटे रोजगारियों को बहुत कष्ट पहुंचता है। ये लोग बहुत ही दरिद्र हैं, अच्छे दिनो में भी इनकी आय बहुत थोड़ी है, तिसपर भी इनके कुटुम्बियों की संख्या बढ़ती जाती है, अपव्यय करना तो मानो इनका स्वभाव है, कभी कभी मुकद्दमेंबाजी भी कर लेते हैं जिन सब का परिणाम यह होता है कि अच्छे दिनों (सुकाल) में भी आमदखर्च बराबर ही होता है, एक कौड़ी की बचत नहीं होती। जब अकाल पड़ता है तब तो कोई सहारा न रहने पर दुख ही दुख दिखाई देता है। देश में अन्न रहते हुए भी इनके पास इतना धन नहीं कि उसे खरीदें, और उन्हें सहायता न दी जावे तो वे लोग या तो भूखों मर जायंगे वा तज्जनित बीमारियों के शिकार हो जायंगे। अनावृष्टि,

अतिवृष्टि वा अन्य भौतिक तापों से जो अन्नकष्ट होता है, वह खाद्य द्रव्यों को रफ्तनी और देश में एक जगह से दूसरी जगह आने जाने के खर्च और असुविधासे और भी बढ़ जाता है। लोगों को अपने अभाव जताने की आदत नहीं है, और जब तक कष्ट चरमसीमा तक नहीं पहुंचता तब तक इसको खबर ही नहीं होती। तब सरकार और देश की तरफ से कष्ट निवारणके कार्य्य किये जाते हैं, कभी कभी इंगलैण्ड तथा अन्य देशों से भी सहायता मिलती है।

सरकार अकाल रोकने के लिये किन किन उपायों का अवलम्बन करती है, और जब अकाल पड़ जाता है तब उससे हानि होने से बचाने में किस प्रकार से सहायता देती है—इनका उल्लेख मात्र यथेष्ट होगा। अकाल रोकने के कामों में नहर जिससे जलका अभाव दूर होता है; और रेल जिसका काम अकाल पीड़ित प्रदेशों में अन्न पहुंचाना है, इन दोनो का नाम लिया जा सकता है। जब सचमुच में अकाल पड़ जाता है तब सरकार कुछ लोगों को मुफ्त में अन्न बांटती है, और कुछ लोगों के लिये 'रिलीफ वर्फ' (इमदादी काम) खोलती है। सड़क, पोखर इत्यादि, जैसे सर्व साधारण के लाभ के कामो, का शुरु करना और अकाल पीड़ितों, परन्तु काम करने लायक मजदूरों को लगाना ही 'रिलीफ वर्क' खोलना कहलाता है। कभी कभी आवश्यकता पड़ने पर कुल

वा थोड़ी बहुत लगान माफ कर दी जाती है, और वाजिब सूद पर कर्ज भी दिया जाता है। कभी कभी सरकार हिन्दुस्थान या विलायत में अकाल पीड़ितों के लिये चन्दा इकट्ठा करने में भी उत्साह दिलाती है। हाल में बंगाल के बर्द्धमान और दूसरे दूसरे इलाकों में जो सत्यानाशी बाढ़ आया था उस समय सरकार और सर्व साधारण को साथ साथ मिल कर पीड़ितों और दुखियों को सहायता करने का बहुत अच्छा मौका मिला था। उस समय स्वयंसेवकों ने, जिनमें बहुत से विद्यार्थी भी थे, ऐसा अच्छा काम कर दिखाया कि उसकी प्रशंसा श्रीमान् चान्सलर से लेकर सर्व साधारण तक सब किसी को करनी पड़ी।

१८ वीं शताब्दी के पिछले २५ वर्षों में तीन बड़े बड़े अकालों ने भारत को सताया। यह काल दक्षिण भारत के १८७६-७८ वाले दुर्भिक्ष से आरम्भ होकर १८९६-७, और १८९९-१९०० के अकाल से खतम होता है। १८७६ ई० से अकालनिवारण में प्रायः १ करोड़ रुपया साल का खर्च हो रहा है। यह तो हुआ अकाल निवारण का खर्च, परन्तु कुल नुकसान उससे भी अधिक है, क्योंकि लगान की हानि के अतिरिक्त अकाल रोकने के कामों में भी बहुत खर्च होता है। १८७८ में, जब लाट लिटन भारत के बड़े लाट थे, तब यह निश्चय हुआ था कि अकाल निवारण (Famine Insurance) में हर साल डेढ़ करोड़ खर्च किया जाय।

जब दुर्भिक्ष पड़ता है तब सब से पहले इसी रुपये से सहायता दी जाती है। उससे जो बचत होती थी वह ऐसे सर्वसाधारणोपयोगी कार्यों में लगाई जाती थी जिससे आगे चलकर कुछ लाभ की आशा तो होती थी परन्तु उस कार्य को आरम्भ करने के लिये कर्ज की जरुरत होती थी। परन्तु अब १८८१ से बचत के रुपये वैसे उपयोगी कामों में लगाये जाते हैं जिनसे भविष्य में दुर्भिक्ष रोकने में सहायता मिल सकती है।

आगे चलकर प्रोटेक्टिभ और प्रोडक्टिभ (अर्थात् अकाल से बचानेवाले तथा व्यापार की दृष्टि से लाभप्रद) कार्यों का भेद उठगया, और आगे कहे गये बचत के रुपये से वैसी रेल लाइन भी बनने लगी जिसका अकालसे कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध न था। १८९९ में इस चाल को रोकना पड़ा। अकालसे बचानेवाले सर्वोपयोगी कार्योंमें अब ३।४ करोड़से अधिक खर्च नहीं हो सकता और इस श्रेणीमें सिर्फ वैसी नहर और रेललाइन की गिनती हो सकती है जिनका आरम्भ केवल अकाल निवारणार्थ हुआ है। *

सर जान स्ट्राचीने १९०३ में लिखा था: † "पिछले ५० वर्षोंमें भारतका विदेशी व्यापार बहुत बढ़ गया है। इससे भारतकी साम्पत्तिक स्थितिकी उन्नतिका पता लगता है।

---

* इम्पीरियल गजेटियर, भाग ४, पृ० १८८-९।

† स्ट्राची कृत इण्डिया, पृ० १९६।

१८४० में सब प्रकारके सामुद्रिक व्यापारका मूल्य २०,०००,००० पा० था ; १८५७ में (कम्पनीके हाथ से राज्य निकलने के एक वर्ष पहले) ५५,०००,००० पा० तथा १९००-०१ में प्राय: १५२,०००,००० पा० । १९वीं शताब्दीके मध्यमें युनाइटेट किंगडम (इंगलैंड, स्काटलैंड और आयरलैंड) का जितना विदेशी व्यापार था, भारतका वर्त्तमान विदेशी व्यापार उससे अधिक है । ‡

			रु०
‡	१८७५।७६—१८८४।८५		
	आमदनी	...	६९, ५९,००,०००
	रफ्तनी	...	८५,२३,००,०००
	१८८५।८६—१८९४।९५		
	आमदनी	...	८३,११,००,०००
	रफ्तनी	...	११७,१४,००,०००
	१८९५।९६—१९०४।५		
	आमदनी	...	१४३,९२,००,०००
	रफ्तनी	...	१७४,२६,००,०००
	१९११।१२		
	आमदनी	...	१९७,५३,००,०००
	रफ्तनी	...	२३८,३६,००,०००

सप्तम अध्याय।

देशकी आभ्यन्तरिक उन्नति।

निर्माण-कार्य—सरकार और प्रजाके कर्त्तव्य—सड़क—रेल—तार—सर्वे—विकोणमितिक—चुम्बक—वर्णनामूलक—जंगलकी पैमाइश—सीमाप्रान्त तथा सीमान्त देशोंकी पैमाइश—राजस्वके लिये सर्वे—वर्णनामूलक सर्वे—गावोंका सर्वे—जायदाद जागीरका सर्वे—भारतका सर्वे विभाग—विशेष विशेष आवश्यकताओंके लिये पैमाइश—सामुद्रिक—भूगर्भविद्या विषयक—वनस्पति विषयक—पुरातत्त्व सम्बन्धी—मिल और पुतलीघर—बंगालका व्यवसाय—खनिज पदार्थ—पड़ती जमीन का आबाद करना—कूंए, तालाब—किलेबन्दी—डक—बन्दरगाह—उतरनेकी जगह—पुल—जंगलकी रक्षा—सिञ्चन कार्य—स्वास्थ्यरक्षाके कार्य—अस्पताल—दवाखाना—पागलखाना—स्त्रियोंकी चिकित्साकी व्यवस्था—कुष्ठाश्रम—बीमारियोंको फैलनेसे रोकना—रोग सम्बन्धी अन्वेषण—जीवन मरणकी रिपोर्ट—टीका।

इङ्गलैण्ड ने भारतके उपकारके जितने कार्य किये हैं उनमें से सर्वसाधारणके उपयोगी निर्माण-कार्य (Constructive works) ही अधिक दृष्टिगोचर होते हैं। पाश्चात्य देशोंकी तरह उन्नत देशोंमें जो सब सर्वसाधारणोपयोगी कार्य प्रजाद्वारा किये जाते हैं, भारतवर्षमें वे सरकार को ही करने पड़ते हैं। जान स्टुआर्ट मिल ने लिखा है: "किसी युग वा किसी जाति की अवस्था विशेषमें ऐसा अवसर

अवश्य आन उपस्थित होता है जब कि सर्वोपयोगी कार्योंमें से कोई भी ऐसा कार्य नहीं होता है जिसका स्वयं करना सरकारके लिये वाञ्छनीय वा आवश्यक न समझा जावे। इसका कारण यह नहीं है कि यदि वे काम सर्वसाधारण पर छोड़ दिये जावें तो अच्छी तरह से नहीं किये जांयगे, परन्तु यह कि उनपर छोड़ देने से वे लोग उन कामों को कभी करेंगे ही नहीं। कोई ऐसा भी समय वा देश हो सकता है जहां यदि सरकार न करे तो कोई सड़क, डक, बन्दर, नहर वा सिंचाई के दूसरे काम, अस्पताल, स्कूल, कालेज, छापाखाना इत्यादि कुछ भी न बन सकेंगे। वहां की प्रजा या तो इतनी गरीब होगी कि उसे धनाभावके कारण उन उपयोगी कार्यों को छोड़ देना पड़ेगा, वा इतनी मूर्ख होगी कि इनकी उपयोगिताको ही न समझ सकेगी, या उसे मिल कर काम करना ही नहीं आता होगा कि जिससे बड़े बड़े कार्य सम्भव हों। यह अवस्था कम वा बेशी, परन्तु सर्वत्र प्रायः वैसे सब देशोंमें पाई जाती है जहांके लोग अनियन्त्रित राजतन्त्र से परिचित हैं। यह अवस्था विशेष कर वैसे देशमें पाई जाती है जहां पर शासक और शासितकी सभ्यतामें वैसा अन्तर रहता है जैसा कि उन विजित देशों में जहां विजेता अपने पराक्रम और बुद्धि से देशको वशमें रखता है।*" सम्भव है कि इन वाक्योंको लिखते

* पोलिटिकल इकानमीके सिद्धान्त, भाग २, पृ० ५५१।

हुए मिल का ध्यान भारतवर्ष पर रहा हो; इतना तो अवश्य सत्य है कि इसमें वर्णित अवस्था भारतमें उपस्थित हुई थी। सरकार ने वैसे कामोंका स्वयंकरना आवश्यक समझा है जो अन्य देशोंमें जिनकी अवस्था यहां से भिन्न है, प्रजाद्वारा सम्पादित होते।

अङ्गरेजी राज्यके पहले भारतमें आजकलकी अपेक्षा सड़कें कम थीं। "कोई देशी राजा सड़क नहीं बनवाता था। हम लोगोंके राज्यस्थापन होके पहले सम्पूर्ण भारत में नाम लेने को भी कोई सड़क न थी। हम लोगोंके पहले के देशी राज्योंमें (मैं यहां १८८० के अकाल कमिशन के सदस्योंके वाक्यों को उद्धृत कर रहा हूं) मार्गोंके दोनो पार्श्वोंमें गाछ लगाने और कभी कभी गड़हों को मिट्टी भर कर बराबर करनेके अतिरिक्त और कुछ न किया जाता था। जो दो एक पुल थे वे भी ऐसे जमीन्दारों वा शासकों के धन से बने थे जिन्हें संसारमें सुनाम छोड़ने की अभिलाषा थी।" * अधिकांश भारतवर्षमें सूखे समयमें ही सुगमता से यात्रा करना सम्भव था, वर्षमें तीन चार महीनों (चौमासे भर) तक पानी की राह छोड़ अन्य मार्गसे व्यापार बिल्कुल बन्द हो जाता था। † लाट डलहौसीके शासनकाल में इन बुराइयोंके दूर करने में बहुत यत्न किया गया

---

* सर जान स्ट्राची कृत इण्डिया पृ० २१२।

† वही, २१३।

था। पश्चिमोत्तर प्रदेश और पञ्जाबमें पक्की सड़कें, पुल और अन्य उपयोगी निर्माण-कार्य किये गये थे। ग्रांडट्रङ्क रोड बनना शुरु हो गया था। गङ्गा की नहर, जो बड़े महत्व की है, १८५४ में खोली गई थी। लाट कैनिंग के शासनकाल का अन्त होते होते (१८६१-६२) बंगालमें ग्यारह इम्पोरियल ट्रङ्क रोड (राजकीय प्रशस्त मार्ग) बन चुके थे वा बन रहे थे जिनकी लम्बाई १९९४ मील से भी अधिक थी और जिनकी शाखाएं कुल ११४५ मीलमें फैली हुई थीं। कलकत्ते से कर्मनाशा तक का ग्रांडट्रङ्क रोड प्रायः तैयार हो चुका था। *

पहले पहल मि० मैकडोनल्ड स्टीफेन्सनने, १८४३ ई० में रेल खोलने का प्रस्ताव भारत सरकारके समीप उपस्थित किया। १८४९ में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने ईस्ट इण्डियन रेलवे कम्पनीको अधिक से अधिक दस लाख पाऊण्ड लगा कर परीक्षार्थ एक रेलवे लाइन खोलनेका ठेका दिया। १८५१ में बर्द्धवान और राजमहलके बीच रेलकी सड़कके लिये जमीन नापी गई। दूसरे वर्ष इलाहाबाद (प्रयाग) तक गई। १८५३ में लाट डलहौसी की सरकार ने शासक सभाको भारतीय रेल विषयक प्रश्न पर अपनी सम्मति लिख भेजी। उससे इस सभाको भारतवर्षमें पूर्णरूप से

---

* सी० ई० बकलैंड कृत—Bengal Under the Lieutenant Governors. भाग १, पृ० २९।

रेलका विस्तार करनेका परामर्श दिया गया था। १८५६ में लाट डलहौसी ने इस विषय पर अपना अन्तिम मन्तव्य लिखा। १८५८ में ईस्ट इण्डियन रेलवे खुली, और धीरे धीरे दिसम्बर, १८६२ में बनारस तक (५४१ मील) पहुंच गई। * प्राय: इसी समय और दो बड़ी बड़ी लाइनें खुलीं— पहली ग्रेट इण्डियन पेनिनसुलर रेलवे जो बम्बईसे निकलती है और पश्चिम भारत में फैली हुई है, तथा दूसरी मद्रास रेलवे जो मद्रास से निकल कर दक्षिण भारतमें फैल गई है। ये लाइनें गैरसरकारी कम्पनियों द्वारा खुली थीं, परन्तु सरकारने उन्हें लागत पर कम से कम सैकड़े पांच का लाभ पूरा कर देने का बचन दिया था। †

पहले पहल लाट डलहौसीके समय तार बिछे थे। आजकल वे सब प्राय: रेलकी लाइनके साथ साथ भारतवर्षमें फैले हुए हैं।

भिन्न भिन्न रीति से पृथक पृथक अभिप्रायके लिये देशका सर्वे (पैमाइश) हुआ है। नियम पूर्वक खोज करनेसे भौगोलिक, आर्थिक और वैज्ञानिक ढंगकी बहुत सी सच्ची बातें मालूम हुई हैं। ये सब अधिकांशत: ब्रिटिशकाल में हुए हैं। अकबरके राजत्वकालमें, १६ वीं

---

* वही, पृ० २९।३०।

† स्ट्राची कृत इण्डिया, पृ० २१५।

शताब्दीके शेषभागमें उसके राज्यकी आय, मनुष्यसंख्या और उपजका जो हिसाब लगाया गया था, और आईन-ए-अकबरीमें जो भिन्न भिन्न प्रदेशों (सूबों) का वर्णन तथा अन्य वृत्तान्त पाया जाता है—इन सबको सर्वेका नाम दे सकते हैं, परन्तु इनमें आजकलके सर्वे को सी न यथार्थता पाई जाती है और न व्यापकता।

भूगोलके ज्ञाता डी० एनविल नामक एक फ्रान्सीसी सज्जन ने अपने समय के प्राप्य वृत्तान्तके आधार पर १७५१-५२ ई० में आधुनिक भारतका यथार्थ मानचित्र बनानेका सब से पहला पयत्न किया था। यहां यह कह देना उचित होगा कि अकबरके समयमें जिन बातोंका पता लगाया गया था उनके आधार पर नक्शा तैयार करनेका कभी प्रयत्न नहीं किया गया। उससे जो ज्ञान प्राप्त हुआ उसकी वृद्धि मेजर जेम्स् रेनेल ने की; यह क्लाईव की अधीनता में काम कर चुका था। यह 'भारतके भूगोल'का जन्मदाता कहा गया है। उसका 'बंगालका मानचित्र' जिसे उसने सर्वे करनेके अनुभव पर बनाया था, १७८१ में प्रकाशित हुआ था। १७८८ ई० में 'भारतके मानचित्रका इतिहास' प्रकाशित किया। १८ वीं सदीके शेषमें मद्रासके कर्नल कौल और बम्बईके कर्नल रेनल्डस्ने भारतके दो मानचित्र (पुस्तकाकार) बनाये, पर वे कभी प्रकाशित न हुए, और न अब उनकी कोई प्रति पाई जाती है।

१८०० ई० में कर्नल लैम्बटन ने मद्रास सरकारकी आज्ञा और सहायता से भौगलिक सर्वेकी एक नई रीति दक्षिण भारतमें चलाई। इसका नाम पड़ा "त्रिकोणमितिक सर्वे" अर्थात् त्रिभुजोंकी सहायता से मापने की रीति। १८०२ ई० से इससे काम लेना शुरु हुआ। १८१८ ई० में यह विभाग बड़े लाटके अधीन चला गया, तब से कलकत्ता इसका प्रधान कार्य्यालय हो गया। १८२३ में कर्नल लैम्बटनकी मृत्यु हुई, परन्तु उनकी चलाई रीति से आजतक काम चल रहा है। इस त्रिकोणमितिक सर्वे से पृथ्वीके आकार जानने के लिये स्वीकृत तत्त्व मिले हैं।

'भारत और बर्म्माका चुम्बक सर्वे' का प्रारम्भ रायल सोसाइटीके द्वारा अध्यापक रूकर, एफ० आर० एस० ने १८९७ में किया था। यह पूर्णतया वैज्ञानिक रीति पर अवलम्बित है। १९०१ से इसके अनुसार कार्य हो रहा है।

मद्रासके कुछ अंश तथा अधिकांश बर्म्माको छोड़ सम्पूर्ण भारतवर्षका वर्णनामूलक सर्वे हो गया है। १९ वीं शताब्दीके पहले इसको कोई नहीं जानता था। दक्षिण भारतमें जब त्रिकोणमितिक सर्वेका प्रारम्भ हुआ था उसी समय कर्नल कोलिन मैकेञ्जी ने वर्णना मूलक सर्वे चलाया। एक को दूसरी रीति से परस्पर सहायता मिलती थी। पहले जो सर्वे होता था उसके साथ साथ उस देशके इतिहास,

भौगलिक वर्णन तथा मनुष्यसंख्या इत्यादि अन्य जानने योग्य बातोंका भी विवरण रहता था। सर्वे की उन्नति क्रमशः धीरे धीरे हुई है। पहला सर्वे देशी राज्यों और ग़ैर कानूनी इलाकों में हुआ था। १९ वीं शताब्दीके मध्य-भाग के पहले यह काम सिलसिले से नहीं होता था, पिछले तीस वर्षों से ही यह काम जोर शोर से हो रहा है। इधर भारतवासियोंने भी सर्वे का काम सीख लिया है, अब तो सर्वे करनेवालों में भारतवासियोंका भी दल रहता है। अन्य महकमों (विभाग) के ऐसा सर्वे विभाग भी भारतीय और प्रान्तीय इन दो शाखाओं में बांट दिया गया है। पहिले विभाग का नियम है कि उसमें रायल इञ्जिनियर (Royal Engineer) वा इण्डियन आर्मी (Indian Army) के लोग ही बहाल किये जांयगे, प्रान्तीय विभाग के लिये भारतमें कर्मचारी बहाल किये जाते हैं जिन्हें इस विभागके कुछ बड़े बड़े पद भी मिल सकते हैं। निम्न कर्मचारियोंका भी एक विभाग है, जिसमें वस्तुतः केवल भारतवासी हैं। *

१८७२ ई० में जङ्गल सर्वे का खास महकमा खुला जो टापोग्राफिकल सर्वे (जिसमें देश का सविस्तर वर्णन रहता है) की शाखा थी। यह शाखा 'सर्वे आफ इण्डिया' में मिला दी गई। (१९००)

---

* इम्पीरियल गजेटियर, भाग ४, पृ० ४९४।

कभी कभी भौगलिक अन्वेषण तथा सरहद ठीक करनेके लिये भारतकी सीमाके बाहर भी सर्वे करना पड़ा है। १८७८-८० के अफगान युद्धों तथा अफगान सीमा कमिशनके समय इस प्रकार का सर्वे हुआ था। सीमाप्रान्त तथा उसके बहिर्गत प्रदेशों का सर्वे छोटे छोटे दलों वा सीमा कमिशन वा सीमा की चढ़ाई से संलग्न किसी खास अफसर द्वारा किया जाता है। "इन लोगों ने अफ्रिकाके न्यासालैंड, उगंडा, अबीसीनिया से लेकर फारस और अफगानिस्तान होते हुए, कुछ छोड़ कर सम्पूर्ण तिब्बत, नैपाल तथा बर्म्मा की उत्तर और पूर्व सीमा तक के विस्तृत प्रदेशोंका सर्वे किया है।" †

"कप्तान मौटंगुमरी जब काश्मीर का सर्वे कर रहे थे, उस समय उन्हें यह युक्ति सूझी कि भारतकी सीमाके बाहर के वैसे देशोंका जहां कोई अङ्गरेज कर्मचारी नहीं जा सकता, भौगलिक वृत्तान्त जानने और अन्वेषण करने के लिये हिन्दुस्तानियों को सर्वे की मामूली बातोंका सिखाना उचित होगा। उनकी इच्छा थी कि हिन्दुकुश, औक्सस की उपत्यका और तुर्किस्तान के लिये किसी पठान और तिब्बत तथा चीन साम्राज्यकी सीमाके लिये किसी भुटिया वा तिब्बतीको सर्वे सिखाया जावे।" ‡

---

† वही, पृ० ४९०।

‡ इम्पीरियल गजेटियर, भाग ४, पृ० ४९९।

सेटिलमेण्ट (बन्दोवस्त) और राजस्व विभागका सम्पूर्ण कार्य्य रेवेन्यू सर्वे पर स्थित है। यह १८२२ में यमुना के पश्चिम, दिल्ली, पानीपत और रोहतक के जिलों में आरम्भ हुआ था। कर्नल ट्रेलियर की अध्यक्षता में पञ्जाब, अवध, सिन्ध, मध्य-प्रदेश और बंगाल का सर्वे हुआ था। यह काम १८४७ से आरम्भ हो कर तीस वर्ष तक चलता रहा। इस रेवेन्यु सर्वे को तीन श्रेणियां थीं; प्रथम, वर्णनामूलक, द्वितीय, गांवों का सर्वे, और तृतीय अचल सम्पत्ति से सम्बन्ध रखने-वाला जिसमें जिले भर की जायदाद तथा अन्य वस्तुओं का वर्णन रहता था। पिछला १८७१ में आरम्भ हुआ था। भारतके कुछ प्रदेशों और जिलों में किसी स्थानीय संस्था द्वारा किये गये सर्वे पर विश्वास कर ही सेटलमेंटका काम किया गया है। भारत सरकार का रेवेन्यु-सर्वे-विभाग उच्च और निम्न मण्डलों (सार्कलों) में बांट दिया गया है। उच्च मण्डल में पञ्जाब, युक्तप्रदेश और सिन्ध शामिल हैं; निम्न मण्डलके अन्तर्गत बंगाल, बिहार, उड़ीसा, आसाम और बर्म्माके इलाके हैं। मद्रास और बम्बई की प्रेसिडेन्सियों का रेवेन्यु सर्वे खास महकमें के द्वारा हुआ है। पहले पहल सर्वे की ये तीनों—त्रिकोणमितिक (Trigonometrical), वर्णनामूलक (Topographical), और रेवेन्यु—शाखायें अलग अलग थीं। परन्तु १८७८ में ये तीनों सर्वे आफ इण्डिया के नाम से एक साथ मिला दी गईं, इसके कर्मचारी किसी

प्रकार का सर्वे कर सकेंगे और सब के सब 'सरवेयर जेनरल' के अधीन रहेंगे।

सर्वे आफ इण्डिया के अधीन जितने प्रकारके सर्वे हैं उनके अतिरिक्त भी कई प्रकार के सर्वे हुए हैं। जैसे—(१) सामुद्रिक सर्वे; (२) भूगर्भविद्या विषयक सर्वे। इस विभाग का पहला काम भारतका भूगर्भविद्या-विषयक मानचित्र बनाना है। (३) वनस्पतिक सर्वे। इस विभाग द्वारा तथा इसके अर्थ बहुत से वृक्षोंका संग्रह किया गया है। इस विभाग के अन्य कार्यों में से भारत में गेहूं की उन्नति, ऊख की बीमारियों का अध्ययन, रूई की खेती की अजमाइश—इत्यादि बातों का उल्लेख किया जा सकता है। (४) पुरातत्त्व सम्बन्धी सर्वे। इस विभाग का काम पुरानी इमारतों का संरक्षण करना, खुदाईका काम करना, शिला लेखोंकी प्रतिलिपि उतारना तथा इसी प्रकार का अन्य कार्य करना है। १९०५।६ में प्रायः १२०० शिला लेखों की प्रतिलिपि ली गई थी, और आगरा, अजमेर, दिल्ली, लाहौरके मुगल समयकी इमारतों की रक्षा में प्रायः ३ लाख रुपये खर्च हुए थे। * लाट कर्जन ने इस बात पर बहुत जोर दिया था कि पुरानी इमारतों का सम्भाल करना सरकारी काम है, और तब से यह स्वीकार भी कर लिया गया है।

---

* Moral and Material Progress and Condition of India for 1906-07, pp. 54-55.

भारतवर्ष के मिल और पुतलीघरोंका काम अभी नया है। १८५१ के पहले सूती कपड़े की मिलें देश में न थीं। अभी हाल में देश में, विशेष कर बम्बई प्रान्त में, बहुत भी मिलें खुली हैं। दिन दिन उनकी संख्या और उनका कार्य बढ़ता ही जाता है। इन मिलों की बनी चीजें भारतके अतिरिक्त, चीन जापान इत्यादि एशियाके अन्य देशोंमें भी बिकती हैं। बंगाल की जूट मिलें (चटकल) भी बढ़ रही हैं; इनसे देशमें अच्छा रोजगार होता है। कलकत्तेसे जूट के कच्चे और तैयार माल की रफ्तनी अधिक है, और दिन पर दिन बढ़ती जाती है। उत्तर भारत में ऊनी कपड़े की मिलों की दशा अच्छी है। कागज़ की मिलें उन्नति कर रही हैं, बर्म्मा की चावल और लकड़ी की मिलों की संख्या तथा विस्तार बढ़ रहा है। इधर कई वर्षों में खान, दस्तकारी के व्यवसाय की अच्छी उन्नति हुई है।

सरकारी विवरण † में लिखा गया है कि :—"बंगाल के बन्दरगाहों में विदेशी व्यापार का परिमाण अवश्य बढ़ा है, परन्तु यह खान और दस्तकारी (Manufacture) की उन्नति की तुलना में कुछ भी नहीं है। इस उन्नति के कारण राजनगरी (कलकत्ता) के उपकण्ठों में उद्योग धंधो का बड़ा भारी केन्द्र स्थापित हो गया है। हुगली नदी के उत्पत्तिस्थान की ओर (उजान) जाने से मन में जो भाव उदय

† स्टाची लिखित इण्डियामें उद्धृत एल० पी० शिरीस का लेख। पृ० १८८।

होंगे उनका परिचय मिलों वा कारखानों की संख्यामात्र के परिचय से न होगा। नदी के दोनों किनारे मिलों और पुतलीघरों से भरे हुए हैं; ज्यों ज्यों आगे बढ़ते जांयगे त्यों त्यों मिलों की नई पंक्ति दिखाई देगी।.....चाय से सम्बन्ध रखनेवाले मिलों को छोड़ अन्य मिलों और पुतली घरों की संख्या ८८१ (१८८१-२ ई०) से १७१८ (१९००-१) हो गई है। ये सब बड़े कारखाने हैं जो प्रायः श्रेणियों में विभक्त किये गये हैं; इनमें से कुछ हड्डी चूरने की मिले हैं, कुछ सिमेंट बनाने, लाह तैयार करने, तेल पेरने, बरतन तैयार करने, खपड़ा बनाने, चीनी तैयार करने के कारखाने, चमड़ा, चावल, मैदा की कलें, रेशम, रस्सी के कारखाने इत्यादि शामिल हैं।" पिछले कई वर्षों में छोटे छोटे धन्धों की भी अच्छी उन्नति हुई है।

जे० जो० कमिङ्ग, आई० सी० एस० की लिखी रिपोर्ट में बंगाल के उद्योगधन्धों का सब से हाल का सविस्तर वर्णन पाया जाता है।*

लेखक ने लिखा है :—

"वैसे कारखाने जिनमें बहुत कुछ कलपुर्जों का काम रहता है अधिकांश हुगली नदी के दोनों किनारे पाये जाते हैं, ये अधिकतर योरप की पूंजी और युरोपियनों की बुद्धि की सहायता से परिचालित हैं। बंगाल में सरकार

* कलकत्ता गजट का अतिरिक्त पत्र, अगस्त, २६, १९०८।

हो बहुतों को रोजी देती है, और अपने कारखानों में बहुत सी चीजें बनाती है। जैसे इच्छापुर में अस्त्र शस्त्र, दमदम में गोला बारूद, काशीपुर और इच्छापुरके विस्फोरक गोले (Shells) के कारखाने, कंचड़ापाड़ा, बेलियाघट्टा, सियालदह, और चितपुर के रेलगाड़ी के कारखाने, खिदिरपुर का स्टीमर का कारखाना, अलीपुरका कपड़ेका कारखाना, भवानीपुर का तारका गुदाम, पटने में अफीम और अफीम के बक्स का कारखाना; डेहरी (सोनका किनारा) मेदिनीपुर, कटक और कलकत्ते के नहर के सामान के सरकारी कारखाने इत्यादि।"

"अभी तक इस बातका पूरा पता नहीं लग सका है कि बंगाल में ऐसे कितने प्रकार के व्यवसाय होते हैं जिनमें से कुछ में भारतवासियों को पूंजी आजकल की अपेक्षा अधिक परिमाण में लगाई जा सकती है। व्यवसाय सम्बन्धी समाचार देने के लिये जो विभाग है, वह उन कारखानों की गणना नहीं करता जहां ५० से कम मजदूरे काम करते हैं। इस हिसाब से भी बंगाल में नीचे लिखे अनुसार बहुत से व्यवसाय मिलेंगे जैसा कि १९०७ में तैयार की गई संख्या से विदित है; यह संख्या उन कारखानों की है जो १९०५ में बंगाल में चलते थे।

"(१) कपड़े—बिनौला निकालने और रूइ ओंटने की मिलें, सूत की मिलें, जूट की मिलें, जूट प्रेस, रस्से और रेशमके कारखाने।

"(२) खनिज—कोयले की खान, लोहे की खान, अबरख की खान, अबरख तैयार करने के कारखाने, शोरे की कोठियां और पीतल के कारखाने।

"(३) वाहन—जहाज के कारखाने (डक), रेल, ट्राम के कारखाने।

"(४) फुटकर—हड्डी चूरने का कल, सिमेण्ट का कारखाना, रसायनिक पदार्थ का कारखाना, शराब की भट्ठी, दूध, मखन का कारखाना, मैदे की कल, बर्फ और सोडा पानी की कलें, चीनी, गैस, नील, किरोसिन, टिन और लाह के कारखाने ; तेल पेरने, कागज बनाने, मिट्टी के बरतन तैयार करनेके कारखाने, छापाखाना, साबुन का कारखाना, चमड़ा तैयार करने का कारखाना, खपड़ा इत्यादि के फुटकर सरकारी और गैर सरकारी कारखानें।"

भारतके खनिज पदार्थों में सोना, कोयला, लोहा, पेट्रोलियम, नमक, शोरा, मंगनीज़, अबरख, चूनी, नीलम, तथा कुछ दूसरे धातुओं की गिनती है। ताता का लोहे का कारखाना जो अभी हाल में खुला है, प्रशंसनीय उत्साह और व्यवसायात्मिका बुद्धि का ज्वलन्त प्रमाण है।

१९०१ का खान सम्बन्धी कानून सम्पूर्ण ब्रिटिश भारत के लिये है। इसीसे खान सम्बन्धी सब बातों का परिचालन होता है। इस कानून से सम्बन्ध रखनेवाली खानों क संख्या १९०६ में प्राय: ७५० थी, जिनमें से ३०० कोयले की खाने थीं, जो प्राय: बंगाल में ही थीं।

खान, विशेषकर कोयले की खान का व्यवसाय हाल का है। कुछ दिनों के पहले तक व्यवसायी केवल खान पर ही भरोसा कर जीविका निर्वाह नहीं कर सकते थे। परन्तु अब यह अवस्था बदलती जाती है। अब तो खानों का काम करनेवाली एक श्रेणी वा जाति के बनजाने के लक्षण दीख पड़ने लगे हैं। खान सम्बन्धी प्राय: सब कामों में दक्षता प्राप्त करने की क्षमता भारतवासियों में दिखाई देती है। *

अंगरेजी राज्य के आरम्भ से ही पड़ती जमीन को आबाद करने की चेष्टा की जारही है। जो कोई इस तरह पड़ती जमीन को आबाद करता है उसे बहुत तरह से सहायता दी जाती है।

सर्वसाधारण के पीने के जल के लिये तालाब, कूआं खोदे गये हैं, सरकार ने जितने तालाब इत्यादि बनवाये हैं उनसे अधिक सरकार के कहने से लोगों ने बनवाये हैं।

---

* Moral and Material progress and condition of India during 1906–07 p. 115.

कहीं कहीं पर गैरसरकारी तौर से तालाब इत्यादि बनवाने में सहायता दी गई है। और कहीं कहीं स्थानीय संस्थाओं को इन कार्यों के लिये बाध्य किया गया है।

देश की रक्षा के लिये आवश्यक समझ कर जल और स्थल मार्ग के वैसे वैसे स्थानों में किलेबन्दी की गई है जहां से शत्रु का आना सम्भव है। कलकत्ते और बम्बई में जहाज मरम्मत करने के लिये डक हैं, इन शहरों को छोड़ मद्रास, करांची, और चटगांव में भी बन्दरगाह हैं। कलकत्ते से दो चार घण्टों की राह पर, दक्षिण ओर डायमण्ड हारबर (बन्दर) है। माल ढाल-उभार करने तथा मुसाफिरों के सुभीते के लिये सब बन्दरों पर 'जेटी' (गुदाम) बनाये गये हैं। नदी के किनारे के स्थानों पर चढ़ने उतरने का ऐसा अच्छा प्रबन्ध किया गया है कि जैसा और कभी नहीं हुआ था। बहुत बड़े २ पुल वर्त्तमान हैं, जैसे रोड़ी सक्कर पुल, सोन का पुल, यमुना का पुल, हुगली नदी का जुबली पुल, बनारस डफरिन पुल। सारा पुल की तरह कुछ तो बन रहे हैं और कुछ का बिचार हो रहा है। *

देश के धन की वृद्धि के लिये जितने लाभदायक कार्य्य किये गये हैं उनमें से सब से अधिक उत्तम कार्य जंगलों का बचाना है। इस विषय के कानून बने हैं,

---

* सारा का पुल अब खुल गया, उसका नाम पड़ा है 'हारडिंग ब्रिज'—अनुवादक।

एक खास सरकारी महकमा भी कायम किया गया है। पिछली शताब्दी के मध्य तक भारत के जंगलों की न कोई खबर लेता था, न कोई उनकी देखभाल ही करता था, फल यह होता था कि जिन प्रान्तों से बड़ी २ लकड़ियां बाजार लाई जा सकती थीं वहां गैरसरकारी फाटकेवाले उन लकड़ियों को बरबाद करते थे। दूसरी जगहों में जब आबादी करने के लिये घास में आग लगाई जाती थी तब लकड़ियों का सत्यानाश हो जाता था। कहीं कहीं हिमालय की तराइयों में पहाड़ के जंगल के कट जानेसे पानी की बाढ़ का जोर नहीं रुक सकता था और खेतीबारी को नुकसान पहुंचता था। प्रायः चालीस बर्ष हुए कि इस सत्यानाशी अपव्यय को हटाने का उपाय किया गया था। अब यह नाशकारी कार्य रुक गया है, और जंगल की रक्षा तथा उन्नति की बहुत ही अच्छी प्रणाली तैयार हो गई है जो सारे भारतवर्ष में प्रचलित है। †

जिस प्रान्त में (जैसे युक्त प्रदेश) नहरों की बड़ी आवश्यकता है वहां बहुत बड़ी नहरें खोदी गई हैं। युक्त-प्रदेश में गंगा और यमुना नदियों के बीच जो दोआब है उसकी रक्षा बड़ी बड़ी नहरों द्वारा होती है, ये नहर इन दो नदियों के जलसे वहां की भूमिका सिंचन करती हैं। गंगा

---

† Indian Polity—By Sir George Chesney, 3rd. Edition, p. 160.

के जलको दो बड़ी बड़ी नहरें चारो तरफ पहुंचाती हैं, और हिमालय का जो कुछ जल यमुना द्वारा बहता है उसे तीन छोटी छोटी नहरें दूर दूर तक फैलाती हैं। ये नहर पृथ्वी पर जितनी नहरें पाई जाती हैं उन सब से बड़ी हैं। बिहार प्रान्त में सोन नदी के जल से नहर का काम होता है। बंगाल में इन कृत्रिम उपायों से जल सिंचन की आवश्यकता नहीं है। वहां केवल छोटी छोटी नहरें पाई जाती हैं। उड़ीसा में भी प्रसिद्ध २ नहरें हैं। पंजाब में सतलज का जल सरहिंद की नहर से बहता है, चनाब में भी एक नहर है। नहरों के जलसे जितनी भूमि पंजाब में पटती है उसका उपनिवेश देश भर में प्रसिद्ध है। मध्य और दक्षिण भारत की अधिकांश भूमि झील वा जलाशयों के जल से पटती है। मद्रास में कृष्णा और गोदावरी के जलका उपयोग करने के लिये कुछ ऐसा उपाय किया गया है जो पंजाब और युक्तप्रदेश में प्रचलित नहीं है। "ये नदियां जब समुद्र में गिरती हैं उसके पहले ही उनके मुहाने के आर-पार बहुत बड़ा बांध बांधा जाता है। जिसे यहां पर 'अनिकट' (Anicut) कहते हैं। तब इन नदियों का जल नहरो वा नालियों द्वारा खेतों में पहुंचाया जाता है, कभी कभी बड़ी बड़ी नहरों से नाव भी आती जाती हैं। * तंजोर में कावेरी के मुहाने पर भी यही प्रबन्ध

वही, पृ० २२१।

किया जाता है। ब्रिटिश राज्य में नहरों तथा सिञ्चन करने की अन्य नालियों की लम्बाई प्रायः ४६०,०० मील है। और इनसे प्रायः १ करोड़ ७० लाख एकड़ भूमि पटती है। सिंचाई का काम एक ऐसा विषय है जिस ओर सरकार का ध्यान आज कल भी लगा हुआ है, विशेष कर लाट कर्जन के समय से तो इस ओर बहुत ही उत्साह दिखाया जाता है, और बहुत कुछ उन्नति की आशा की जाती है।

सरकार ने स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्य्यों (अर्थात् सर्वसाधारण के स्वास्थ्यसुधार और स्वास्थ्यरक्षा) का भार अपने ऊपर लिया है। इसी अभिप्राय से मेडिकल (चिकित्सा) और सैनिटरी (स्वास्थ्य) विभागों का संगठन किया गया है। अस्पताल, दवाखाना, और पागलखाना खोला गया है; जीवन मरण की संख्या जानने का प्रबन्ध किया गया है, साधारण सास्थ्य, टीका, चिकित्सा-कानून (Medico-legal) कीटाणु तथा अन्य वैज्ञानिक अनुसन्धान का प्रबन्ध किया गया है। जिसमें विदेश वा दूर देश से आकर कोई बीमारी न फैल जावे इसको रोकने के लिये बन्दरगाहों के स्वास्थ्य की रक्षा करने तथा मुसाफिरों तथा जहाज के मल्लाह मांझियों पर दृष्टि रखने का प्रबन्ध किया गया है। प्रेसिडेन्सी शहरों में रोगियों की सहायता करने के लिये संस्थायें बहुत दिन हुए खुली थीं। मद्रास में १६७८ में साधारण अस्पताल खुला था, १८०० से १८२० तक और चार अस्पताल

खुले। कलकत्ते का प्रेसिडेन्सी जेनरल अस्पताल १७९५ में स्थापित हुआ और मेडिकल कालेज का बुखारवाला अस्पताल १८५२—३ में खुला। १९ वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में प्रसिद्ध प्रसिद्ध स्थानों में—जहां के निवासी इस काम में सहायता देने को तत्पर थे, और जब डाक्टर मिल सकते थे—अस्पताल तथा औषधालय खोलने में बंगाल सरकार ने भी सहायता दी थी। आगे चलकर सरकार ने कुछ ऐसे डाक्टरों का प्रबन्ध करना स्वीकार किया जो स्थानीय चन्दे पर निर्भर करसकते थे। सरकार ने दवा और औजार देने का भी वादा किया था।

जब से म्युनिसिपल और डिस्ट्रिक्टबोर्डों की सृष्टि हुई है तब से चिकित्सा के प्रबन्ध करने में स्थानीय संस्थाओं का उत्साह बढ़ता ही गया है। १९०२ में, † प्रेसिडेन्सी शहरों के बाहर, ब्रिटिश भारत में सर्व साधारण के लिये २४०० अस्पताल और दवाखाने थे जिनका निरीक्षण सरकार करती थी, और प्रायः ५०० गैरसरकारी अस्पताल थे, और ५०० से अधिक वैसे अस्पताल थे जिनका सम्बन्ध केवल पुलिस रेल इत्यादि खास संस्थाओं से था। ‡ बम्बई, अपरबर्मा और मध्यप्रदेश को छोड़ कर अन्य प्रदेशों में सरकार

---

† १९१० में इनकी कुल संख्या २६८५ थी।

‡ Imperial Gazetteer, vol IV, p. 462.

बहुत कम अस्पतालों का खर्च देती है। प्रायः सब प्रान्तों में अधिकांश अस्पतालों का खर्च म्युनिसिपल और बोर्ड से मिलता है। कहीं कहीं सरकार अफसरों से सहायता करती है, कहीं कुछ धन देकर वा अन्य रूप से सहायता करती है, और साधारणतः प्रधान डाक्टर का वेतन, यद्यपि वह सरकारी नौकर होता है, स्थानीय फण्ड से दिया जाता है। * सब प्रकार के अस्पतालों की रिपोर्ट से विदित होता है कि १९०२ में दो करोड़ साढ़े छः लाख रोगियों को सहायता मिली। परन्तु इससे यह नहीं समझना चाहिये कि केवल इतने व्यक्तियों को ही सहायता मिली, क्योंकि एक ही रोगी साल में कई बार अस्पताल की सहायता ले सकता है। † लेडी डाक्टर (स्त्री डाक्टर) और उनकी सहायता करनेवाली स्त्रियों को शिक्षा तथा देशी धात्रियों को स्थानीय अस्पतालों में सिखाने का विशेष प्रबन्ध किया जा रहा है। इस सम्बन्ध में काउन्टेस डफरिन ने १८८५ में "भारतीय महिलाओं को चिकित्सा सम्बन्धी सहायता पहुंचाने की जातीय संस्था" स्थापित कर बहुत कुछ काम किया है। यह संस्था सरकारी मदद और स्वेच्छानुसार दिये गये धन की सहायता से चलती है। १९०१ में, इस संस्था द्वारा संचालित अस्पतालों में और तथा अपने घरों पर प्रायः

---

* वहीं, पृ० ४६२—६३।

† वही पृष्ठ—४६४

बीस लाख स्त्रियों ने लाभ उठाया। * देशी धात्रियों की शिक्षा के लिये प्रायः सात लाख रुपया लेडी कर्जन ने इकट्ठा किया था (१९०१-२)। लेडी मिण्टो ने 'सुश्रुषा गृहों' को बड़ी सहायता पहुंचाई, लेडी हारडिंग अस्पतालों में भद्रपुरुषों के निवास गृहों की उन्नति की ओर दृष्टि रखती थीं, इसका फल यह हुआ है कि भद्र पुरुष जो पहले अस्पतालों में जाने से हिचकते थे अब इन गृहों को पसन्द करने लगे हैं। लेडी हार्डिंग ने दिल्ली में स्त्रियों के लिये एक मेडिकल कालेज की नीव डाली है।

पशुचिकित्सालयों की संख्या और प्रसिद्धि देश में बढ़ रही है। कुछ ऐसे भी पशुचिकित्सक हैं जिनका काम गांवों में जाना और पशुओं की चिकित्सा करना है। १९११-१२ में कम से कम ९७,६७४ वस्तियों का दौरा किया गया था, और ४६४,७३६ पशुओं की चिकित्सा हुई थी। सहृदय व्यक्तियों ने बूढ़े, बीमार पशुओं की चिकित्सा के लिये पिंजरापोल खोल रखा है, और घर के पशुओं की रक्षा और उन्नति के लिये भी उपाय किये जा रहे हैं।

---

* १९११ में सरकारी, स्थानीय संस्थाओं वा गैरसरकारी सज्जनों की सहायता से चलने वाले १२८ रोगियों के अस्पताल थे, जिनमें २८९५ रोगी स्त्रियां रह सकती थीं। १९०१ में सिर्फ १०९ अस्पताल और १९४२ रोगियों के रहने के स्थान थे।

† वही पृष्ठ ४६५।

पागलखानों का शासन १८४८ के कानून से होता है। इसमें पागलों के भरती करने, उनको छोड़ने तथा दर्शकों द्वारा पागलखानों के शासन की व्यवस्था है। जितने पागलखाने हैं सब सरकार के अधीन हैं। अभी हाल ही में निश्चय हुआ है कि केन्द्रस्थान में पागलखाने बनें, और दिन रात काम करनेवाले अफसर उनका निरीक्षण करें। यह व्यवस्था मद्रास, बंगाल, बम्बई, युक्तप्रदेश और पंजाब में की गई है। छोटे छोटे पागलखानों की संख्या कम करने का निश्चय हुआ है। १९११ की मनुष्यगणना में ३१॥० करोड़ की आबादी में ८१००६ मनुष्यों की पागलों में गणना हुई थीं। *

* पिछली चार मर्दुमशुमारियों के पागलों की संख्या नीचे दी जाती है।

१९११	१९०१	१८९१	१८८१
८१,००६ अर्थात् प्रतिलाख २६	६६२०५ अर्थात् प्रति लाख २३	७४२७९ अर्थात् प्रति लाख २७	८११३२ अर्थात् प्रति लाख ३५

बहुत जगह कोढ़ियों के रहने और चिकित्सा के लिये कुष्ठाश्रम बने हुए हैं। १८८०-१ के कमिशन ने भारतवर्ष के कोढ़ियों के विषय में जांच किया था। उसकी रिपोर्ट के बाद यह निश्चय हुआ कि कोई ऐसा कानून बने जिससे उन कोढ़ियों को रोका जा सके जो अपने घावों को दिखा कर मनुष्यों के मन में दया उत्पन्न कराना चाहते हैं; तथा कोढ़ियों को ऐसे रोजगारों को करने से भी रोका जावे जिनका सम्बन्ध खाद्यद्रव्य और पहरने के बस्त्रों से है, उन्हें सर्व साधारण के तालाब और कूंए भी व्यवहार न करने देना चाहिये। *

भारत के कुष्ठाश्रमों की कुल संख्या ७३ है, जिनमें प्रायः पांच हजार कोढ़ी रहते हैं, अर्थात् जितने कोढ़ी हैं उनमें सैकड़े ४.७ को रहने को जगह मिली है। †

लोगों में फैलनेवाली बीमारियों का रोकना मेडिकल और स्वास्थ्यरक्षा विभाग का प्रधान कार्य्य है। जहां हैजा, चेचक वा बुखार बहुत ज्यादे फैलने लगता है वहां खास अफसर बीमार को चिकित्सा करने तथा बीमारी को रोकने के लिये भेजे जाते हैं। ‡ प्लेग, बेरीबेरी, काला-

---

* वही पृष्ठ ४६६।

† मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट (१९११) अध्याय १०।

‡ गजेटियर भाग ४, पृष्ठ ४७५।

ज्वर इत्यादि संहारक बीमारियों को रोकने का यत्न किया जाता है। रोग तथा कीटाणु सम्बन्धी अन्वेषण के लिये प्रयोगशालायें स्थापित हुई हैं। कसौली का भारतीय पाश्चूर इन्सटीट्यूट जहां पागल जानवरों के काटे हुए मनुष्यों की चिकित्सा होती है, गैरसरकारी प्रबन्ध से चलता है, परन्तु सरकार भी सहायता करती है। जिसमें कसौली से दूर रहनेवाले व्यक्तियों की चिकित्सा ठीक समय पर हो सके इसके लिये १९०७ में मद्रास के कन्नूर नामक स्थान में दूसरा पाश्चूर इन्सटिट्यूट खोलने की मंजूरी हुई है। देश के प्रायः सभी अच्छे अच्छे प्रान्तों में जन्म और मरण की रजिस्टरी करने का प्रबन्ध हुआ है। चेचक से बचने के लिये प्रायः सम्पूर्ण भारतवर्ष में टीका लगाना नियम करदिया गया है। हैजा, प्लेग, यक्ष्मा, काश इत्यादि रोगों के लिये भी टीका लगाने की प्रथा का प्रचार हो रहा है। जिन महल्लों में छोटे छोटे झोपड़े हैं उनको तोड़ कर परिष्कार करने का प्रयत्न किया जाता है। कलकत्ते में कितने स्थान हैं जो बहुत ही घने और गन्दे हैं, उनको साफ करने के लिये १९११ में कलकत्ता इम्प्रूवमेण्ट ऐक्ट पास हुआ था। यह बम्बई में १३ वर्ष पहले जो नियम बना था उसी के आधार पर बना है। १९१२ की दूसरी जनवरी से कलकत्ता इम्प्रूवमेण्ट ट्रस्ट का काम आरम्भ होगया।

अष्टम अध्याय।

नागरिकों के अधिकार।

नागरिकों के अधिकार—इण्डियन सिविल सर्विस—सिविल सर्विस के विभाग—उसके अंगरेजी और हिन्दुस्थानी अंशों की शक्ति—कतिपय बड़े बड़े पदों पर भारतवासी—मेडिकल सर्विस—इञ्जिनियरिंग सर्विस—पेशा—कानून चिकित्सा और इञ्जिनियरिंग—अवैतनिक पद—आवेदन पत्र देने और सभा करने के अधिकार—इनकी रुकावटें—समाचारपत्र—उसकी स्वतन्त्रता—समाचारपत्रों की वृद्धि—उसकी वृद्धि के कारण—नागरिकों के अधिकार मागने की शर्त्तें।

कुछ सामान्य बातों को छोड़ अन्य सब विषयों में भारतवासी नागरिकों के अधिकार अंगरेज नागरिकों के समान ही हैं। जब कभी निर्वाचन की कोई स्कीम (तजवीज) तैयार होती है तब अंगरेजों को अपनी जाति के कारण भारतवासियों से अधिक वोट देने का अधिकार नहीं मिलता है। विचारकार्य्य में भी, कानून की दृष्टि में, अंगरेजों को भारतवासियों से अधिक अधिकार नहीं है। * पेशे वा

---

* केवल एक विषय को छोड़ कर जिसका उल्लेख आगे किया जा चुका है।

सरकारी नौकरियों को प्राप्त करने में अंगरेजों तथा भारत-वासियों को एक ही नियम पालन करना पड़ता है। विचार तथा कथन की स्वतन्त्रता में अंगरेजों और भारतवासियों की अवस्था समान है। सर्व साधारण के दुखों की पुकार सुनाने तथा वैध आन्दोलन करने की अंगरेजों और हिन्दु-स्थानियों को समान स्वतन्त्रता है। नागरिकों के अधिकार के नाते अंगरेजों और भारतवासियों का दर्जा बराबर ही नहीं है बरन ये अधिकार प्रायः विलायतवासी अंगरेजों के अधिकार के समान ही विस्तृत हैं; तथा साधारणतः और किसी दूसरे देश के नागरिकों के अधिकार से अधिक हैं।

पौर सम्बन्धी बड़े बड़े पद अधिकतर इंडियन सिविल सर्विस (Indian Civil Service) वालों को मिलते हैं। १८५३ तक इस सर्विस के कर्मचारियों की भरती ईस्ट इण्डिया कम्पनी के संचालक (डाइरेक्टर) ही किया करते थे। यह हाल तक शर्तबन्धी सिविल सर्विस के नाम से पुकारा जाता था। परन्तु उस साल से यह अधिकार संचालकों से ले लिया गया, और सिविल सर्विस में भरती करने का अधिकार सर्व साधारण की प्रतियोगिता परीक्षा पर छोड़ दिया गया। सम्राट की सब प्रजा को (Natural-born Subjects) इस प्रतियोगिता परीक्षा में भाग लेने का अधि-कार है, इसमें भारतवासी भी शामिल हैं। जिस कमिशन ने प्रतियोगिता परीक्षा के फल के अनुसार ही सिविल सर्विस

के कर्मचारियों के भरती होने की सलाह दी थी उसका लाट मेकाले भी एक सदस्य था, उन्होंने सिफारिश उठाकर प्रतियोगिता परीक्षा आरम्भ करने के लिये जिस जोर से बहस किया था उसी तरह भारत के युवकों को उस प्रतियोगिता में शामिल होनेका स्वत्व देने के लिये भी यत्न किया था। इस सर्विस के सदस्यों के लिये कौन कौन पद अलग रखा गया है इसकी तालिका एक अंगरेजी कानून में दी हुई है। * इसमें सरकार के सेक्रेटरी, हिसाब विभाग के अध्यक्ष, दीवानी और दौरा जज, कानूनी प्रान्तों के जिला मजिस्ट्रेट और कलक्टर, ज्वांयण्ट तथा सहायक मजिस्ट्रेट और कलक्टर, रेवेन्युबोर्ड के सदस्य और सेक्रेटरी (मन्त्री), रेवेन्यु कमिश्नर तथा अन्य कई पद शामिल हैं।

सम्पूर्ण सिविल सर्विस में, अर्थात् पौर कर्मचारियों की उस गोष्ठी में जिसमें पौर सम्बन्धी सब पद के लोग हैं, तीन विभाग हैं। यथा:—इण्डियन सिविल सर्विस, इसके सदस्य इंगलण्ड में नियुक्त होते हैं। प्रान्तीय (प्रोविन्शियल) और निम्न (सबार्डिनेट) सर्विसें, इनके प्राय: सब कर्मचारी भारतवासी हैं और भारत में ही बहाल होते हैं। इंडियन सिविल सर्विस के कर्मचारी जिन पदों पर रहते हैं उनके

---

* 24 & 25 Vict. C. 54 (1861)। फेहरिश्त में सब पदों का नाम दिया हुआ है।

नीचे के शासन विचार तथा अमलदारी के सब अच्छे अच्छे पदों पर प्रान्तीय सर्विस वाले ही रहते हैं। निम्न सर्विस वाले छोटे छोटे ओहदों पर रहते हैं।

लाट कार्नवालिस के समय में देशी कर्मचारियों के अयोग्य तथा भ्रष्ट (रिश्वतखोर) होनेका दुर्नाम प्रचलित था। उन्होंने राजकर्मचारियों का जो पुनर्गठन किया था उसमें अच्छे अच्छे पद अंगरेजों को दिये गये थे। शिक्षा विस्तार तथा अंगरेज अफसरों के प्रभाव और सुशासन से देशी पौर कर्मचारियों का स्वभाव बदल गया है, यह ब्रिटिश शासन का एक बहुत ही अच्छा सन्तोषदायक परिणाम है। जैसे जैसे देशी सज्जनों की योग्यता बढ़ती गई है वैसे वैसे उन्हें देश शासन में अधिक भाग मिलता गया है। अब वे लोग देश शासन, रक्षा और विचार सम्बन्धी विभागों के प्रायः सब निम्न पदों पर बिठाये गये हैं। *

सर जान स्ट्राची ने, १८०३ में लिखते हुए कहा है "८६४ पौर पदों को छोड़कर जिसमें इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्य ही नियुक्त किये जाते हैं, तथा छोटे छोटे मामूली पदों को छोड़कर, जिनमें प्रायः सब के सब देशी कर्मचारी ही बहाल किये जाते हैं, ३७०० ऐसे कर्मचारी हैं जो शासन और विचार सम्बन्धी विभागों की उच्च शाखा के पदों पर हैं, इनमें

* इम्पीरियल गजेटियर भाग ४, पृष्ठ ४२।

केवल १०० के लगभग युरोपियन हैं, और शेष सब हिन्दुस्थानी.....राजस्व से सम्बन्ध रखनेवाले कुल विभागों तथा भूमिसम्बन्धी विविध अधिकारों का प्रबन्ध अधिकतर देशी कर्मचारियों के ही हाथ है। मजिस्ट्रेट के अधिकांश कार्यों का प्रबन्ध देशी अफसरों द्वारा ही हुआ करता है। सम्पूर्ण भारतवर्ष में दीवानी अदालतों का कार्य्य, अपील के कामों को छोड़, प्रायः पूर्णतया देशी जजों के ही हाथ हैं। प्रत्येक हाइकोर्ट में देशी जजों को स्थान मिला हुआ है।.....सम्भवतः इंगलैण्ड को छोड़, सम्पूर्ण योरप में कोई भी ऐसा देश नहीं है जहां के शासन और विचार विभाग के कर्मचारियों को भारतीय सिविल सर्विस (उच्च विभाग) के बराबर वेतन मिलता हो।" *

हाल में कुछ देशी सज्जन प्रान्तीय तथा भारत सरकारों के अधीन कई विभागों के अण्डर-सेक्रेटरी (उपमन्त्री) बनाये गये हैं। एक देशी सज्जन भारत सरकार क अधीन शिक्षा विभाग के स्थानापन्न ज्वांयण्ट सेक्रेटरी का कार्य्य कर रहा है। एक बंगाली सज्जन 'बोर्ड आफ् रेवेन्यु' का सदस्य नियुक्त किया गया था। आज कल दो देशी सज्जन भारत सचिव की कौन्सिल के सदस्य हैं। वाइसराय की कार्य्यकारिणी (शासक) सभा के "ला मेम्बर" के पद पर एक देशी सज्जन नियुक्त है। तथा बंगाल, मद्रास, बम्बई और बिहार

* इण्डिया तीसरा संस्करण, पृष्ठ ८३--४।

की शासक सभाओं में भी देशी सज्जनों को स्थान मिलता है, जिनका सविस्तर वर्णन अन्यत्र दिया जायगा। एक से अधिक देशी सज्जनों ने एडवोकेट जेनरल, स्टैंडिंग कौन्सल, भारत के विश्वविद्यालयों के वाइस्-चान्सलरों का पद प्राप्त किया है। आज कल कलकत्ता हाईकोर्ट में ६ भारतीय सज्जन जज के पद पर नियुक्त हैं, लाट हार्डिंग ने सर्व प्रथम गैरसरकारी सज्जन को कलकत्ता विश्वविद्यालय का वाइस्-चान्सलर नियुक्त किया है।

ब्रिटिश भारत के चिकित्सा और स्वास्थ्य विभागों के अफसर कई प्रकार से बहाल किये जाते हैं; इम्पीरियल सर्विस, इण्डियन मेडिकल सर्विस, सिविल मिलिटरी असिस्-टण्ट सर्जन; सिविल मिलिटरी हौस्पिटल असिसटंट। इण्डियन मेडिकल सर्विस का मार्ग भारतवासियों के लिये खुला हुआ है, इसमें इस विभाग के सबसे बड़े कर्मचारी रहते हैं। इसके कर्मचारी प्रधानतः फौज़ी कर्मचारी हैं, इसके सदस्य फौज़ी मनसबदार होते हैं। इसके कार्य्य प्रधानतः देशी सिपाहियों से ही सम्बन्ध रखते हैं। मिलिटरी असिसटंट सर्जन के पद पर अधिकांश युरोपियन वा युरेशियन ही बहाल होते हैं। सिविल असिसटंट सर्जन तथा दोनों प्रकार के हौस्पिटल असिसटंट देशी सज्जन ही होते हैं।

कोई ऐसा कानून नहीं है जिससे किसी भारतवासी को इञ्जिनियरिंग सर्विस के किसी पद से अलग रखा जा

सके। तो भी इस सर्विस के सब से बड़े पदों पर वैसे व्यक्ति बैठाये गये हैं जिन्होंने विलायत में शिक्षा प्राप्त कर विशेष ज्ञान लाभ किया है, उदाहरणार्थ रायल इञ्जिनियर वा सिविल इञ्जिनियर जिन्हें कूपरहिल कालेज में शिक्षा मिलती है। यह कालेज अब उठा दिया गया है। मकान, सड़क, नहर और रेल के कामों के लिये इञ्जिनियरिंग का जो उच्च विभाग है उसमें चीफ, सुपरिनटेंण्डिंग, एक्सिक्युटिव और सहायक इञ्जिनियरिग् काम करते हैं। जिन भारत-वासियों ने देशी कालेजों में शिक्षा पाई है उन्हें भी कभी कभी इन उच्च पदों पर बैठने का मौका मिला है, उन्हें भी कभी कभी सुपरिन्टेण्डिंग इञ्जिनियर, एक्सिक्युटिव इञ्जिनि-यर तथा स्थापत्य (इञ्जिनियर) विभाग के अण्डर-सेक्रेटरी का पद मिला है। अभी हाल ही में एक बंगाली सज्जन बंगाल सरकार का स्थानापन्न चीफ इञ्जिनियर और सेक्रेटरी नियुक्त हुआ था। इसके नीचे प्रान्तीय इञ्जिनियरों की श्रेणी है, ये सब भारतवर्ष के इञ्जिनियरिंग कालेजों में पढ़े और यहीं काम सीखे हुए कर्मचारी हैं। इस श्रेणी के कर्मचारी उच्च श्रेणी के कर्मचारियों के पद पर भी पहुंच सकते हैं। सब-इञ्जिनियर और सुपरवाइजर यहीं के कालेजों में शिक्षा प्राप्त युवकों में से नियुक्त किये जाते हैं।

वकील, डाक्टर और इंजिनियर अपने अपने विभाग के सरकारी पद पर नियुक्त होसकते हैं और स्वतन्त्र रूप से

भी अपना अपना व्यवसाय कर सकते हैं। सरकार ने इन लोगों को अपना अपना व्यवसाय स्वतन्त्रता पूर्वक करने का अधिकार दिया है ही, इसके अतिरिक्त भी वह उन्हें इन व्यवसायों को स्वीकार करने में उत्साह प्रदान करती है। एक समय लोगों को डाक्टरी पढ़ने से कैसी अनिच्छा थी उसका उल्लेख किसी अगले अध्याय में किया जा चुका है। आज कल भी जिसमें युवक इंजिनियरिंग और टेकनोलौजी (कला कौशल) की शिक्षा की ओर झुकें इसके लिये उत्साह दिलाया जा रहा है।

कानूनी पेशा में कई दर्जे के लोग हैं, जैसे 'इंगलिश बार' के सदस्य (बारिस्टर), हाइकोर्ट के वकील, सालिसिटर; छोटी अदालतों के प्लीडर और मुख्तार। 'इंगलिश बार' का मार्ग भारतवासियों के लिये सब दिन से खुला हुआ है। कानूनी पेशा के अन्य दर्जों के सदस्यों की शिक्षा का प्रबन्ध बहुत दिनों से चला आरहा है। जिस प्रकार अन्य प्रदेशों में व्यवस्था हुई है उसी प्रकार बंगाल के भी कुछ चुने हुए वकीलों को 'अडवोकेट' बनाने की व्यवस्था होने वाली है।

डाक्टरी पेशा नियमित रूप से शिक्षा पाये, पास किये और सनद (प्रमाण पत्र) प्राप्त डाक्टरों के अतिरिक्त वैसे सज्जनों के लिये भी खुला हुआ है जो भिन्न २ देशी प्रथा के अनुसार ही चिकित्सा करते हैं। भारत में इंजिनियरिंग का काम वैसे आदमी भी कर सकते हैं जिन्हें किसी प्रकार

का प्रमाणपत्र नहीं है, परन्तु १८१२ में बम्बई का मेडिकल ऐक्ट पास कर डाक्टरी करने वालों को लाइसेन्स देने के सम्बन्ध में उत्तम प्रबन्ध किया गया है। "इस ऐक्ट से एक मेडिकल कौन्सिल बनाने तथा सनद प्राप्त डाक्टरों की रजिस्टरी करने की व्यवस्था की गई है। हां, इससे हकीम वैद्यों को अपना व्यवसाय करने में किसी प्रकार की बाधा नहीं होगी"। इसी प्रकार का एक कानून हाल ही में बंगाल में भी पास हुआ है।

कुछ ऐसे भी पद हैं जिनसे यद्यपि कोई आर्थिक आय नहीं है तथापि पदमर्यादा की वृद्धि होती है। यथा आनरेरी मजिस्ट्रेट, स्वायत्तशासन संस्थाओं के सदस्य, व्यवस्थापक सभाओं के मेम्बर, विश्वविद्यालयों के फेलो इत्यादि। सब नागरिकों को इन पदों पर बैठने का समान अधिकार है, अलबत्ते इसके लिये कुछ योग्यता की आवश्यकता होती है।

कष्टों के निवारण करने अथवा अधिकार प्राप्त करने के लिये अधिकारियों के पास आवेदन पत्र भेजने तथा इनके लिये सर्व साधारण की सभा करने अथवा सर्व साधारण के लाभ की वस्तुओं के विचार करने के लिये सभा करने का महत्व का स्वत्व है। अंगरेजों को इन्हीं स्वत्वों के प्राप्त करने के लिये अपने देशमें लड़ना झगड़ना पड़ा था। भारतवर्ष में न सरकार ने ही स्पष्ट रूप से इन स्वत्वों को प्रदान किया है, और न प्रजा ने ही प्राप्त किया है, बरन

दोनों पक्ष ने मान लिया है कि ये स्वत्व भारत में भी प्रचलित हैं। जहां पर उनके विरुद्ध में कोई बातें नहीं कही गई हैं वहां उन स्वत्वों का रहना समझा जाता है। कुछ ऐसी अवस्थाओं का स्पष्ट वर्णन किया गया है जिन अवस्थाओं में इन स्वत्वों पर प्रतिबन्धक डाला जा सकता है वा वे छीन ली जा सकती हैं। इससे यह आशय सहज ही प्रगट होता है कि अन्यथा उन स्वत्वों को स्वतन्त्रता पूर्वक व्यवहार कर सकते हैं। उदाहरणतः यदि कोई ऐसी सभा जुटी हो जिसका अभिप्राय कानून के विरुद्ध कोई कार्य्य करने का हो, अथवा जिस सभा में बहुत हो गोलमाल होता हो अथवा जहां शान्तिभंग होने का भय हो वैसी सभा रोक दी जा सकती है। अवस्था विशेष में पुलिस वा मजिस्ट्रेट को सर्व साधारण की सभा वा जुलूस (शोभायात्रा) निकालने के समय और स्थान के विषय में हस्तक्षेप करने दिया जा सकता है। यदि उपयुक्त भाषा में आवेदनपत्र न लिखा गया हो अथवा उपयुक्त अधिकारियों द्वारा न भेजा गया हो, या उपयुक्त अधिकारी के नाम से न प्रेरित हो तो उस पत्र पर कोई काररवाई नहीं भी की जा सकती है। परन्तु इन शर्त्तों से उन स्वत्वों पर किसी प्रकार का व्याघात नहीं पहुंचता। अर्थात् सर्व साधारण की सभा में जन समुदाय से सम्बन्ध रखनेवाले विषयों पर मत प्रकाश करने, अपने अभावों को दूर करने के लिये आवेदनपत्र भेजने और

प्रार्थना करने के अधिकारों में किसी प्रकार की कमी नहीं होती।

अंगरेजी राज के पहले भारत में किसी समाचारपत्र का रहना नहीं पाया जाता है। पहले पहल जब अखबार जारी हुए थे उस समय अंगरेजी राज को जमे हुए बहुत दिन हो चुके थे। इससे यह स्पष्ट होता है कि अंगरेजों के पहले सर्वसाधारण की कोई संगठित शक्ति न थी और न जन-समुदाय से सम्बन्ध रखनेवाले प्रश्नों की मीमांसा करने अथवा सरकार के कार्यों की समालोचना करने की कोई समाचारपत्र ही था। अंगरेजी राज और अंगरेजों के नागरिक जीवन के संघर्ष से अखबार निकालने की इच्छा हुई। जिस राज्य की वह समालोचना करता है उसी राज्य की कृपा से अखबार-नवीसों की सृष्टि हुई है। प्रजा को राजा के कर्त्तव्यों की समालोचना करने तथा उनके विषय में सर्वसाधारण में मत प्रकाश करने का अधिकार है। इन अधिकारों का आधुनिक रूप अंगरेजों से लिया गया है। इसका पहला उदाहरण अंगरेजों ने ही सिखाया था। यहां की देशी भाषा में जो सबसे पहला समाचारपत्र निकला था वह सिरामपुर के क्रस्तान पादरियों द्वारा, ३१वीं मई, १८१८ में बंगला में निकाला गया था। * तत्कालीन

* कैरी मार्शमान, वार्ड का जीवनचरित और उनका समय भाग २, (१८५९) पृ १६३ ; जिसका पी, एन्, बोस रचित 'हिन्दू सभ्यता' भाग ३, पृ० ४९ में उल्लेख है।

गवर्नरजनरल लाट मायरा (मार्क्विस आफ् हेस्टिङ्गस) ने उस पत्र को साधारण महसूल की एक चौथाई पर ही प्रचार करने को आज्ञा देकर सहायता की थी। अंगरेजी अखबारों के प्रति भी उन्होंने वही उदारता दिखाई थी और लाट वेल्सली ने उन पर जो 'सेन्सरशिप' कायम की थी उसे उठा दी थी। परन्तु सम्पादक किन विषयों वा कैसे सज्जनों की समालोचना कर सकते हैं इन विषयों में उन्होंने बहुत ही कठिन नियम बनाये थे; इनका जो कोई उल्लङ्घन करता था वह देश से निकाल दिया जाता था। परन्तु जब इस कानून के अनुसार पहले पहल 'कलकत्ता जरनल' के विरुद्ध सुप्रीम कोर्ट में दरखास्त दी गई तब अदालत ने फौजदारी चलाने की आज्ञा देना अस्वीकार किया; और गवर्नर जेनरल भी अपने शासन की समालोचना करने के कारण एक सम्पादक को देशनिकाले की सजा देने के दुर्नाम को लेना नहीं चाहते थे। इस कारण समाचारपत्र की कठिनाइयों का कानून मृतप्राय रहा, और समाचारपत्र सब प्रायः स्वतन्त्र होगये। * तौ भी समाचारपत्रों को १८३५ तक पूर्णरूप से स्वतन्त्रता नहीं मिली, परन्तु उसी साल लाट मेकाले के इन बाधाओं को हटाने के लिये जोर से बहस करने के कारण, बड़ेलाट, सर चार्लस मेटकाफ ने दोषी सम्पादकों

---

* मिल और विलसन कृत भारत का इतिहास भाग ८, पृ० ४१५, पी, एन्, बोस कृत हिन्दू सभ्यता भाग ३, पृष्ठ ५० में उल्लिखित।

को निर्वासन करने की क्षमता भारत सरकार से छीन ली। लाट लिटन के समय में, १८७८ के कानून से, शासकों को अवस्था विशेष में देशी भाषा के समाचारपत्रों को रोकने की क्षमता मिली; उसी कानून से राजविद्रोह सूचक लेख लिखने के कारण प्रान्तीय सरकारों की आज्ञा से समाचारपत्रों के छापाखाना और अन्य सामान जब्त कर लिये जा सकते हैं। लाट रिपन ने यह कानून उठा दिया था, परन्तु हाल ही में एक नया 'प्रेस ऐक्ट' बना है।

अब भारत में समाचारपत्रों की संख्या और क्षमता भी बढ़ गई है। १९०१—२ में † ७०० से भी अधिक पत्र प्रकाशित होते थे, और दूसरे दूसरे सामयिक पत्रों की संख्या प्राय: ६०० थी। और सब दूसरे छापेखाने स्वतन्त्र हैं। इस स्वतन्त्रता का यह अर्थ नहीं है कि जो चाहे जिसके विरुद्ध मनमाना मत प्रकट कर वा दोषारोपण कर इन छापेखानों से छाप कर प्रकाशित करे। जैसा कि सब प्रकार की स्वतन्त्रताओं के विषय में सत्य है उसी प्रकार समाचारपत्रों की स्वाधीनता भी मर्य्यादित होनी चाहिये, क्योंकि ऐसा करने से ही न्याय और समाज की मर्यादा की रक्षा हो सकती है। आज कल के सबसे अधिक उदारविचारवाले तत्वदर्शी भी इससे

---

† प्रकाशित समाचारपत्रों की संख्या (११९०—२ में) ७०८ से बढ़कर ७५३ (१९०७—८) हो गई। परन्तु १९११—१२ में घट कर ६५९ रह गई।

अधिक व्यक्तिगत स्वाधीनता का दावी नहीं करते हैं। उनका कथन है कि प्रत्येक व्यक्ति मनमाना कार्य कर सकता है, परन्तु ऐसा करते हुए वह किसी दूसरे के स्वत्व वा अधिकार का उल्लङ्घन नहीं कर सकता है। अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति की स्वाधीनता दूसरे व्यक्ति की स्वाधीनता से मर्यादित होनी चाहिये। उसी तरह जो मन में आये उसे लिख मारने के अधिकार की सीमा निर्द्धारित होनी चाहिये, क्योंकि दूसरों को अपने सुनाम और चरित्ररक्षा का भी उतना ही अधिकार है। दूसरे की मानहानि करने का किसी को अधिकार नहीं हो सकता, और न किसी को दूसरे को मारडालने के लिये लोगों को उभाड़ने का ही अधिकार हो सकता है, क्योंकि यदि उसे मनमाना लिखने का अधिकार है तो दूसरों को भी जीनेका उतना ही अधिकार है। उसी तरह, समाज की मर्यादारक्षा के ख्याल से, किसी को सरकार के विरुद्ध असन्तोष वा विद्रोह फैलाने का अधिकार नहीं है। यदि स्वतन्त्रता पर ये बन्धन न हों तो समाज के मंगल को कौन कहे, स्वयं समाज का ही लोप हो जा सकता है। यदि क, ख को मार डालने के लिये लोगों को भड़काने के अधिकार का दावी करे तो ख भी वही अधिकार क के विरुद्ध मांग सकता है क्योंकि प्रत्येक नागरिक को समान अधिकार मिलना चाहिये। फल यह होगा कि समाज में अराजकता फैल जायगी। इसीलिये जब यह कहा जाता

है कि भारत के समाचारपत्र स्वतन्त्र हैं, तो उसका यही आशय है कि उनकी स्वतन्त्रता को अन्याय पूर्वक नहीं रोका गया है। यह स्वतन्त्रता अमर्यादित नहीं है। ये रुकावटें इण्डियन पीनल कोड और कतिपय विशेष कानूनों में पाई जाती हैं। परन्तु समाचारपत्रों के लिये कोई 'सेन्सर' नहीं है।

नागरिकों के स्वत्वों के विषय में एक साधारण सिद्धान्त का स्मरण रखना चाहिए। जब कि प्रजा योग्य हो जाती है तब बिना मांगे भी कभी कभी अधिकार दिये जाते हैं। परन्तु यदि लोग उन अधिकारों का अपव्यवहार करें वा वे लोग उन अधिकारों के अयोग्य ठहरें तो वे अधिकार कम कर दिये वा छीन लिये जा सकते हैं। यहां क्या, सभी देश में नागरिकों के स्वत्वों का यही इतिहास रहा है। इंगलैण्ड की भी यही हालत है, जहां स्वतन्त्रता का सब से अधिक विकाश है। जब प्रजाको कोई अधिकार दिया जाता है तो वह जन्म जन्मान्तर और बिना किसी रुकावट के नहीं, बरन उतने दिनों तक के लिये जब तक कि उसका सदव्यवहार होता रहे। यदि साधारण सभाओं में हमेशा शान्तिभंग हो हुआ करे तो यहां भी सभा करने का अधिकार उसी प्रकार रोक दिया जायगा जिस प्रकार कि दूसरे देशों में। दूसरे अधिकारों के विषय में भी यही बातें लगती हैं। नये नये जुर्मों के लिये नये कानून बनाने पड़ते हैं; यदि

अधिकारों का अपव्यवहार होता है तो उन्हें छीनलेना पड़ता है। व्यक्तियों वा समूहों के अधिकार का यह अर्थ नहीं है कि वे दूसरे व्यक्ति वा समूह के अधिकार पर व्याघात पहुंचावें। वे तो राज्य की भलाई के लिये हैं। यदि उनसे सर्वसाधारण के मंगल में वाधा पहुंचने लगे तो वे रोक दिये जांयगे।

नवम अध्याय।

शासन के स्थूल सिद्धान्त और परिणाम।

शान्ति—जानमाल की रक्षा—अमन चैन के गुण—ठगी डकैती का रोकना—एक ऊंचे दर्जे की शासनपद्धति—सरकार के कामों की असाधारण बहुलता—लोगों पर प्रभाव— जीवन तथा भाव में उत्तेजना—राष्ट्रीय जीवन की जाग्रति।

पूर्व वर्णित अध्यायों से तो यह स्पष्ट हो ही गया होगा कि ब्रिटिश सरकार के कार्य सब कितने बड़े और भांति भांति के हुए हैं। अंगरेजी राज से भारत को जितने लाभ हुए हैं उनमें से सब से प्रत्यक्ष और शायद सबसे अधिक लाभ दायक शान्तिस्थापन है। भारतवासियों ने अंगरेजों को राज्य स्थापन में सहायता दी थी, ऐसा करते हुए उन सब की यही लालसा थी कि शान्ति स्थापित हो। उन लोगोंने समझ लिया था कि एक ऐसे शक्तिशाली न्यायी तथा अचल राज्य की आवश्यकता है जो उनके देश को शान्ति दे सकेगा। कुछ देशवासियों की सहायता से ही अंगरेजी राज स्थापित हुआ था। जब मुट्ठीभर अंगरेज, एक बहुत ही मामूली सेना लेकर देशका शासन कर रहे थे, जब इंगलैण्ड और

भारतवर्ष के बीच आना जाना बहुत मुश्किल से और देर से हुआ करता था उस समय भी कभी विद्रोह के लक्षण नहीं दिखाई देते थे। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्रजा सन्तुष्ट और कृतज्ञ थी, क्योंकि उसने अन्त को ऐसा राज्य पाया था जो उसकी सहायता से उसकी रक्षा करने को समर्थ था और जो उसके देश को शान्ति दे सकता था, अर्थात् उसके जान-माल की रक्षा कर सकता था। जब बहुत दिनों तक शान्ति का राज्य रह चुका है, और सुखशान्ति एक साधारण बात होगई है तब लोग उसको और उसको स्थापित करने वाले उपकरणों को वैसा ही साधारण और तुच्छ समझेंगे जैसा कि उन शक्तियों को जिनके द्वारा प्रकृति की विशाल सम्पत्ति जीवित रहती है। परन्तु जैसा कि प्रकृति के विषय में वैसा ही शान्ति के विषय में यह सत्य है कि निश्चित कारणों से ही अमन चैन की उत्पत्ति होती है। कोई आदमी कार्यवश वा मन बहलाने के लिये विदेश जाता है और अपने परिवार और सम्पत्ति को घर पर छोड़ता जाता है। वह कुछ घंटो, वा होसकता है कि कुछ दिन वा महीनों के बाद घर लौटता है और घर पर सब चीज ज्यों का त्यों पाता है; न किसी व्यक्तिको कोई शारीरिक क्षति उठानी पड़ती है, न घर पर ही चढ़ाई होती है। पुरुष वा स्त्री पैदल वा किसी सवारी पर एक स्थान से दूसरे स्थान जाते हैं, पास में रुपये वा बहुमूल्य वस्तु भी साथ लिये जाते

हैं। सुख शान्ति से यात्रा शेष हो जाती है और न कोई अनजान पुरुष किसी के शरीर वा सम्पत्ति पर हो हाथ लगाता है। टूटी-फूटी और अत्यन्त अरक्षित झोपड़ियों में भी लोग हर-रात को सुख से सोते हैं, उन्हें इस बात का पूरा निश्चय रहता है कि उनकी सब वस्तु रात में सुरक्षित रहेंगी। इन दृष्टान्तों में वह कौन सी वस्तु हैं जिसके कारण शरीर और सम्पत्ति की रक्षा होती है और मनुष्यों को रक्षा का पूरा भरोसा रहता है? यह सरकार की शक्ति और न्यायप्रियता है। देश में ऐसे कानून और शासन की ऐसी ऐसी व्यवस्थायें हैं जिनके कारण अपराधी पकड़ा जाकर विचारालय से दण्ड पाता है। इस कारण, जालिम और बदमाशों को छोड़ सब कोई जुर्म करने से डरते हैं। यदि कानून अपर्याप्त होते, शासन व्यवस्था अनुपयुक्त होती और विचारालय बिगड़े हुए वा अयोग्य होते या यदि देशमें बदमाशों की संख्या अधिक होती तो शान्ति और अमनचैन नहीं होता।

किस उद्देश्य से कानून बनाये गये हैं इसका कुछ परिचय दिया जाचुका है, अब आगे चलकर उन उपकरणों का वर्णन किया जायगा जिनसे कानून का उपयोग होता है। किसी प्रकार की उन्नति क्यों न हो उसके लिये सामाजिक शृङ्खला और शान्ति की बड़ी आवश्यकता है। यदि किसी समाज के लोग दिन-रात इसी डर से डरते हों कि कहीं कोई आकर उनके शरीर पर हमला न करे, या उनको

सम्पत्ति छीन न ले जाय, तो वे लोग न किसी प्रकार का मानसिक कार्य ही कर सकेंगे और न उनमें किसी कार्य को उत्साह पूर्वक करने की शक्ति ही रहेगी। ऐसी अवस्था में मेधा शक्ति जाती रहती है, उद्यम के अंग ढीले पड़ जाते हैं, परिश्रम का उद्देश्य हो जाता रहता है। अतएव वह समाज मानसिक, नैतिक, धार्मिक, साम्पत्तिक वा राजनैतिक किसी प्रकार की उन्नति नहीं कर सकता। कुछ सोचने, कार्य करने वा अपनी शक्तियों को उन्नत करने के पहले प्रत्येक पुरुष को मन को शान्ति मिलनी चाहिए। यही जन-समुदाय के विषय में भी सत्य है, उन्नति के लिये सब से पहले शान्ति के राज्य की आवश्यकता है, अशान्ति से सब प्रकार की उन्नति का नाश होता है।

कई प्रकार के जुर्म हर देश में पाये जाते हैं। इस देश में भी दो विशेष प्रकार के संगीन जुर्म थे जैसे ठगी और डकैती। ठगों के दलमें औरत मर्द दोनों शामिल थे, ये लोग अकेले वा छोटा-मोटा दल बांध कर लोगोंको फांसी लगाकर या और किसी प्रकार से मारते थे और जो कुछ मिलता था ले लेते थे। ये लोग अधिकतर अकेले बटोही को ही अपना शिकार बनाते थे। इन ठगों का मामूली ढंग यही था कि मुसाफिरों से मिलें, उनसे मीठी मीठी, सहानुभूति सूचक बातें करें और उनपर अपना विश्वास जमावें फिर मौका पा अचानक उनके गलेमें रूमाल वा

गमछा डाल ऐसा कसें कि जान निकल जाय। अब तो इस किस्म का जुर्म एकदम बन्द होगया है। "इस ठगों को बन्द करने का श्रेय अवश्य ही लार्ड बेंटिङ्क और कर्नल स्लीमैन के बांटे पड़ेगा। ये ठग पुश्तैनी हत्यारे थे, गलेमें फांस लगाना ही उनका पेशा था। + + + दोष स्वीकार करनेवालों के इजहार से क्रमशः इन हत्यारों की मण्डली टूट गई। * डकैती बिलकुल नहीं उठ गई है, पर तो भी बहुत कम गई है। कुछ लोग कहते थे कि किसी समय डकैती बंगाल में मामूली बात थी। डकैत उनका नाम है जो दल बांध कर जबरदस्ती चोरी करते हैं, कभी कभी खून-खराबी भी कर डालते हैं। डकैती में खून भी हो सकती है। सरकार का एक खास महकमा था जिसका का काम ठगों, डकैती रोकने का था; किसी समय डकैती का एक खास कमिश्नर था जिसका काम सिर्फ इन जुर्मों को रोकना था।

भयंकर अपराधों को रोकने और सम्पूर्ण देश में सुख-शान्ति के स्थापित करने के अतिरिक्त भी एक ऐसी शासन व्यवस्था स्थापित की गई है जो सचाई और कार्य-कुशलता के लिये प्रसिद्ध है। भयंकर अपराधों का समूल नाश नहीं हुआ है क्योंकि कानून ऐसा करने को समर्थ नहीं है, परन्तु अपराधियों को पकड़ने और दण्ड देने की व्यवस्था से इनकी

* इम्पीरियल गजेटियर १८८६, भाग ६, पृ० ४०५।

संख्या बहुत कम गई है। उस शासन व्यवस्था का सविस्तर वर्णन आनेवाले अध्यायों में किया जायगा। यहां इतना लिखना आवश्यक है कि इस व्यवस्था की विशुद्ध चरित्रता, योग्यता और कार्य-कुशलता ही अंगरेजी राज्य के विशेष लक्षण हैं। फलतः लाभ-दायक उपयोगी कार्यों और देश की उन्नति के अतिरिक्त देशवासियों के आदर्श भी ऊंचे होगये हैं। मनुष्यों को सिलसिले से और नियमित समय पर कार्य करने की शिक्षा मिली है, और मातहत में तथा मिलकर कार्य करने का अभ्यास हुआ है। यह तो लिखा जा चुका है कि सिविल सर्विस के भारतीय सदस्यों ने शिक्षा प्राप्त करने तथा युरोपियन शासकों के उदाहरण से कितनी उन्नति की है। यह भी कहा जा सकता है कि यहां के लोग ऊंचे दर्जे की शासन प्रणाली से इस प्रकार परिचित होगये हैं कि अब इससे नीचे दर्जे की प्रणाली को किसी प्रकार सह्य नहीं कर सकेंगे। लोगों ने अंगरेजी शासन प्रणाली को अब अपना लिया है। वे लोग इन प्रणालियों को अब अपने कामों में भी बरतने लगे हैं। अंगरेजी कायदे और ढाचे पर ही सुधार की पुकार करने लगे हैं। अतः अंगरेजी शासन प्रणाली लोगों की शिक्षा का कारण हुई है।

सरकार को भारत में जितना अधिक तथा जितने प्रकार का काम करना पड़ा है उतना शायद ही दुनिया में किसी

सरकार को करना पड़ा है। उसको देशवालों को जीविका निर्वाह के धंधो से लेकर राजनैतिक अधिकार और नागरिकों के कर्त्तव्य ज्ञान की भी शिक्षा देनी पड़ी है। इसे कृषि तथा शिल्प शिक्षा के लिये स्कूलों का प्रबन्ध करना पड़ा है; अधिक सूद लेनेवालों से किसानों को बचाने के लिये सेविंग बंक खोलना पड़ा है; महाजनों से पिसने से तथा उत्पीड़क जमीनदारों से बचने के लिये किसानों के लिये कानून बनाना पड़ा है; जमीन पर के जंगल को बचाने और नीचे नीचे खान खोदने के लिये कानून बनाना पड़ा है; समाज का स्वास्थ्य किस प्रकार बना रहसकता है उसके नियमों की शिक्षा देना और लोगों को डाक्टरी शिक्षा की ओर तथा टीका लेने वा स्वच्छ जल का प्रबन्ध करने की ओर खींचना पड़ा है; लोगों को केवल पाश्चात्य ज्ञान विज्ञान की शिक्षा ही नहीं, बरन अपने देश के प्राचीन साहित्य, दर्शन और धर्म की शिक्षा के लिये भी कालेज खोलना पड़ा है; सड़क, पुल और नहर खोदने पड़े हैं, साथ ही साथ दासत्व और शिशुहत्या जैसी कुप्रथाओं को भी उठाना पड़ा है; हरतरह से देश का सर्वे करना और नक्शा (मानचित्र) तैयार करना पड़ा है और उसके साथ साथ जूरी तथा स्वायत्त-शासन जैसी प्रथाओं के द्वारा देश को राजनैतिक शिक्षा भी देनी पड़ी है; कारखाने और पुतलीघर खोलने पड़े हैं; विज्ञान सम्बन्धी खोज भी किये गये हैं, पुरानी इमारतों की रक्षा की गई

है और साथ ही साथ पशुओं और वृक्षों को रोग और कीड़ों से बचाने का भी प्रबन्ध करना पड़ा है।

सरकार के इन व्यापक कार्यों का प्रभाव प्रजा पर पड़ा है। कुछ लोगों ने तो स्कूल कालेजों में दी जानेवाली साधारण व्यवसाय वा उद्योग धंधो की शिक्षा पाई है। कुछ लोगों ने तो सरकारी वा सर्वसाधारण के कार्यों को करते करते अपनी कार्यकारिणी शक्ति की उन्नति की है। इनके अतिरिक्त बहुत से लोगोंको अंगरेज शासकों के उदाहरण और अंगरेजी शासन नीति से उत्साह मिला है। सब किसी के सामने नये विचारों का एक संसार ही खड़ा होगया है। सुख तथा जीवन निर्वाह का आदर्श ऊंचा होगया है। कानूनी तथा राजनैतिक अधिकारों के ज्ञान की सृष्टि हुई है। मामूली से मामूली किसान, दरिद्र से दरिद्र कुली वा नौकर भी समझने लगे हैं कि उन्हें भी कुछ स्वत्व हैं, और जब चाहें उनके पाने के लिये हठ कर सकते हैं। वे किसी प्रकार के उत्पीड़न को बुरा मान सकते हैं, यदि उनकी शारीरिक स्वच्छन्दता की हानि हो वा शर्तनामे में स्वीकार किये गये अधिकार छीन लिये जांय तो कानून की शरण ले सकते हैं। व्यक्तिगत वा अहम् का भाव प्रचारित हुआ है। इसके साथ साथ जीवन तथा विचार सम्बन्धी प्रत्येक विभाग में जिज्ञासा और समालोचना के भावों का उदय हुआ है।

सामाजिक दृष्टि से कभी कभी यह भी कहा जाता है कि ये नये भाव न सब तरह से अच्छे ही हैं और न इनका प्रयोग ही वांछनीय है। इस पर सम्मति प्रकट करने की यहां आवश्यकता नहीं। परन्तु इतना तो अवश्य निर्विवाद है कि सचमुच में अंगरेजी राज्य में यहां के लोगों के विचार की सीमा तथा कार्यक्षेत्र की वृद्धि हुई है। पाश्चात्य साहित्य, दर्शन और विज्ञान ने मन को उत्साहित किया है, ज्ञान की शक्ति को जगाया है और उच्चाकांक्षा को बहुत सी दिशाओं में फैलाया है। नौकरी से हो वा पेशा, या दिन रात उन्नति करने वाले तरह तरह के वाणिज्य व्यवसाय से नित नये नये लाभदायक मार्ग खुलने लगे हैं। सार्वजनिक जीवन का भी, जो प्रधानतः ब्रिटिश राज्य का फल है, दिन दिन विस्तार हो रहा है, जिससे कौन्सिलों में वा बोर्ड में, सेनेट में या मन्त्री मण्डल में, लिखने में या वक्तृता देने में, हर जगह काम करने तथा नाम प्राप्त करने का अवसर मिलने लगा है। पाश्चात्य जीवन तथा विचार प्रणालियों के संसर्ग से एक नये ढंग का नैतिक और सामाजिक आदर्श बहुत से आदमियों के मन में खिंच गया है, और लोग अब उसके ही अनुसार अपने सामाजिक जीवन को संस्कृत और पुनर्जीवित करने की उच्चाकांक्षा से उत्तेजित हो रहे हैं।

यह प्रतीत होता है कि डेढ़ सौ वर्ष व्यापी ब्रिटिश राज्य का सब से बड़ा फल जातीय जीवन की जागृति की आकांक्षा

है। यह फल ऐसे महत्व का है कि इसके लिये शासक शासित दोनों को धन्य मानना चाहिये। शताब्दियों से भारतवर्ष में भिन्न भिन्न जाति के लोग बस रहे हैं, उनका धर्म पृथक पृथक रहा है, उनकी भाषायें भिन्न और उनका इतिहास पृथक रहा है। इस विभिन्नता का लोप नहीं हुआ है। परन्तु एक प्रकार की शिक्षा-प्रणाली ने—जो कि सब जगह अंगरेजी भाषा द्वारा ही दी जाती है—एक प्रकार के कानूनों ने और सम्पूर्ण भारतवर्षव्यापी शासन-प्रणाली की प्रथा ने देश में समान विचार, समान सहानुभूति और समान आकांक्षा का बहुत कुछ प्रचार किया है। जिन्होंने अंगरेजी शिक्षा पाई है, वा जिन पर और किसी तरह से अंगरेजी विचारों वा अंगरेजी संस्थाओं का प्रभाव पड़ा है, उन सब का सामाजिक विभिन्नताओं के रहते हुए भी, अन्यत्र नहीं तो कम से कम राजनैतिक क्षेत्र में तो अवश्य ही एक सम्मिलित समूह बन गया है। जब वे राजनैतिक क्षेत्र में आकर जुटते हैं तब उनके मनमें एक जातीय जीवन का उमंग आये बिना नहीं रहता। अंगरेजी शिक्षा ने, यहां शिक्षा का अर्थ बहुत विस्तृत है, सब किसी को एकत्रित कर दिया है। उनकी यह भी धारणा है कि उस शिक्षा के प्रभाव से वे लोग सर्वसाधारण को उनकी गिरी हुई दशा से उठा सकेंगे, जिसमें अन्तमें एक राष्ट्र की सृष्टि होजावेगी। सामाजिक विभिन्नतायें कुछ ऐसी नहीं हैं कि राजनैतिक

सम्बन्ध को तोड़ सकें। जाति और धर्म एक हुए बिना केवल राजनैतिक भाव और सम्बन्ध एक होनेसे ही एक राष्ट्रीयता की सृष्टि हो सकती है या नहीं इसमें मत भेद है। हां, इतना तो अवश्य सत्य है कि यदि ब्रिटिश शासन का प्रभाव बना रहा तो जिस एकता का भाव उदय हुआ है वह दिनो दिन बढ़ता हो जायगा। स्वायत्त-शासन की वृद्धि के साथ साथ लोगों की राजनैतिक क्षमता भी बढ़ती जायगी, यदि शासक और शासित के परस्पर का विश्वास बढ़ता गया तो कोई कारण नहीं कि यहांवाले भी आगे चलकर सामरिक कार्यों में उसी प्रकार बहाल किये जांय जिस प्रकार नागरिक कार्यों में। यदि ऐसा हो तो इङ्गलैण्ड और भारत दोनोंके साथ साथ प्रयत्न करने से भारतवर्ष को संसार की शक्तियों में कला तथा समर दोनों के लिये स्थान मिल सकता है। सामाजिक प्रश्नों का हल करना एक विदेशी सरकार का कार्य नहीं है। लोगोंको मनमाना कार्य करने की स्वतन्त्रता है। परन्तु भारतवासी, जिनकी आकांक्षायें पाश्चात्य होगई हैं, राजनैतिक क्षेत्र में जिस राष्ट्रीय जीवन की सृष्टि के लिये उत्सुक हो रहे हैं, उसमें जब जीवन का संचार होजायगा तब इंगलैण्ड भी समझेगा कि उसका उद्देश्य सफल हुआ और भारत भी समझेगा कि उसका प्रारब्ध पूरा हुआ।

द्वितीय खण्ड

भारत की शासन व्यवस्था ।

प्रथम अध्याय।

प्रारम्भिक बातें।

शासन व्यवस्था—उसका अर्थ—उसकी अवस्थायें—उसके उद्देश्य—उसके विभाग—पौर—सामरिक—धर्म सम्बन्धी। पौर विभाग के उप-विभाग—व्यवस्थापक—न्याय सम्बन्धी—शासन सम्बन्धी—आयव्यय—अमलों का।

किसी देश की शासन व्यवस्था को राज्यव्यवस्था वा शासनपद्धति भी कह सकते हैं। इनका देशके उन प्रबन्धों से तात्पर्य्य है जिनका शान्तिरक्षा तथा उन्नति के लिये होना आवश्यक है। जिस देश में एक ऐसी सर्व शक्तिमती संस्था नहीं है जिसकी आज्ञा सर्वत्र पालन की जाती है और जिसका प्रबन्ध सर्वथा शिरोधार्य्य है, उस देशमें कोई राज्य-व्यवस्था वा शासनपद्धति नहीं है, ऐसा ही कहना पड़ेगा। उस सर्वशक्तिमती राजनैतिक संस्था में एक ही व्यक्ति हो सकता है, वा वह एक वा अधिक मनुष्य गोष्ठियों से बन सकती है। यह स्वयं सब प्रबन्ध कर सकती है, वा अपने अधीनस्थ कर्मचारियों द्वारा करा सकती है, वह कुछ अधि-

कार इन कर्मचारियों के हाथ भी हस्तान्तरित कर सकती है। सम्पूर्ण देशको इसकी शक्ति को स्वीकार करना पड़ेगा, इसकी व्यवस्था को मानना पड़ेगा और इसकी आज्ञा के आगे सिर झुकाना पड़ेगा। एक ओर शक्तिमती राजनैतिक संस्था का होना और दूसरी ओर उस संस्था की आज्ञा को पालन करने का भाव होना प्रत्येक राज्यव्यवस्था के लिये अनिवार्य है। कभी कभी राज्यपद्धति का उपयोग विशेष अर्थ में भी किया जाता है, उस समय इसका तात्पर्य्य शासक-संस्था के गुण और अधिकार की सीमा से है, और जहां इस संस्था के कई अङ्ग हैं, वहां इन अङ्गो के परस्पर सम्बन्ध से है।

किसी देश की शासन व्यवस्था एक दिन में नहीं बन जाती है और न कभी वह ऐसा रूप ही धारण कर सकती है जिसका कभी परिवर्त्तन ही न हो, इसे सतत देश की आवश्यकताओं तथा निवासियों के आचरण, योग्यता और जीवनचर्या के अनुसार बदलना पड़ता है। जैसे जैसे अधिवासियों की संख्या और उनके कार्य बढ़ते जांयगे वैसे वैसे शासनव्यवस्था भी जटिल होती जायगी। इस कारण ऐतिहासिक दृष्टि से ही इसका उत्तम रूप से अध्ययन हो सकता है। परन्तु इस छोटीसी किताब में केवल वर्त्तमान शासनव्यवस्था का संक्षेप वर्णन मात्र दिया जायगा, इतिहास सम्बन्धी बातों का उल्लेख तभी किया जायगा जब वे विशेष रोचक होंगी वा उनसे

वर्त्तमान व्यवस्था पर अधिक प्रकाश पड़ेगा। शासनव्यवस्था का उद्देश्य सिलसिला बनाये रखना है, परन्तु केवल सिलसिला से ही उसके गुण दोष की परीक्षा नहीं हो सकती है। उदार तथा नियन्त्रित राज्य में जिस प्रकार का सिलसिला पाया जाता है उसी तरह का सिलसिला एक अनियन्त्रित, उत्पीड़नकारी राज्य में पाया जा सकता है। अतएव शासनव्यवस्था के गुण दोष की मीमांसा करने में इन बातों पर भी ध्यान रखना पड़ेगा कि वहां किस प्रकार का सिलसिला है, और किन अवस्थाओं के कारण वह सिलसिला बना रहता है। यह भी देखना पड़ेगा कि वह राजकीय संस्था सुख-शान्ति के अभावों को कहां तक पूरा कर सकती है; व्यक्तिगत और सामाजिक स्वतन्त्रता, परस्पर के न्याय, साम्पत्तिक समृद्धि अर्थात् देशकी सर्वाङ्गीन उन्नति और प्रजाके सुख को कहां तक पूरा करने में समर्थ है। पुस्तक के पूर्वार्द्ध में सरकार की उन नीति और कार्यों का वर्णन किया गया है जिनका अवलम्बन उसने इन उद्देश्यों की पूर्त्ति के लिये किया है। इस खण्ड में शासन व्यवस्था के उन अङ्गो वा अवयवों का वर्णन किया जायगा जिनकी सृष्टि उस नीति और कार्यों की पूर्त्ति के लिये धीरे धीरे की गई है।

भारत की वा यों कहिये कि प्रत्येक देश की शासनव्यवस्था दो भागों में बांटी जा सकती है—(१) पौर, (२)

सामरिक। जिन देशों में राजको धर्म से भी सम्बन्ध है वहां एक तीसरा विभाग—धर्म सम्बन्धी—पाया जाता है। पौर विभाग को पुनः तीन खण्डों में विभक्त कर सकते हैं; यथा:—व्यवस्थापक, न्याय तथा शासन विभाग। व्यवस्थापक विभाग का कर्त्तव्य कानून बनाना और उनका प्रचार करना है। न्याय विभाग का कार्य्य उन कानूनों का यथार्थ अर्थ बतलाना और प्रत्येक अभियोग में उपयुक्त कानूनों का प्रयोग करना; अर्थात् न्याय करना है; शासन विभाग का कर्त्तव्य उन कार्य्यों का करना है जिनकी आवश्यकता राज्यव्यवस्था में, तथा सिलसिला बनाये रखने में होती है। राजस्व प्रबन्ध को या तो शासक विभाग में ही रख सकते हैं, वा आयव्ययसम्बन्धी एक पृथक विभाग बना सकते हैं। एक और दूसरा विभाग है जो ऊपर लिखे गये तीन विभागों में से किसी में सम्मिलित नहीं हो सकता है, परन्तु इस देशमें वह बहुत ही आवश्यक है। इसे आमिलाना (राज कर्मचारी से सम्बन्ध रखने वाला) विभाग कह सकते हैं। इसमें डिपार्टमेण्ट (अधिकरण, महकमा) और सक्रेटेरियट शामिल हैं। शासक विभाग का अधिकांश कार्य इन्हीं के द्वारा हुआ करता है, परन्तु उन्हें अपना अपना भी काम है। जैसे; शिक्षा, स्वास्थ्य, रजिस्ट्रेशन इत्यादि महकमों का काम करना।

द्वितीय अध्याय।

सामरिक (फौजी) प्रबन्ध।

भारतीय सेना—उसकी वृद्धि—बंगाल, बम्बई, मद्रास की पल्टनें—कण्टिनजेण्ट पंजाब सीमा की फौज—ब्रिटिश सरकार के हाथ राज्यशासन जाने के अनन्तर फौजी प्रबन्ध में किया गया परिवर्त्तन—१८८५ में सेना की संख्यावृद्धि—फौजी हाकिम—प्रादेशिक नेतृत्व—१९०६ का प्रबन्ध विषयक परिवर्त्तन—फौजी विभाग और फौजी सामान विभाग—पिछला विभाग अब उठा दिया गया है—'रिजर्व' के सिपाही—सहायक सेनायें—देशीराज्यों की सेना—देशी फौज के अफसर—सिपाही विद्रोह का भारतवासियों की अवस्था पर प्रभाव—देशरक्षा के कार्य्य—किले और बन्दरगाह—रायल इण्डियन मेरीन।

भारत के सामरिक प्रबन्ध का संक्षेप में साधारण वर्णन कर देना यथेष्ट होगा। भारतीय सेना नामक संस्था का क्रमशः विकाश हुआ है। जब जैसी आवश्यकता हुई है वैसे ही इसकी शक्ति और संगठन में परिवर्त्तन होता गया है। १६६८ की सनद से ईस्ट इण्डिया कम्पनी का "पहला युरोपियन रेजिमेण्ट" बम्बई में बना। इसमें सम्राट की सेना के वैसे अफसर और सिपाही थे जो उस समय बम्बई

द्वीप में थे और जिन्हों ने स्वेच्छा से कम्पनी की नौकरी कबूल की थी। कम्पनी की देशी सेना का आरम्भ १७४८ ई० से कहा जा सकता है जब कि फ्रांसीसियों की देखादेखी देशी सिपाहियों का एक छोटा सा दल मद्रास में खड़ा किया गया था और जिसका अभिप्राय मद्रास के इलाके को उस युद्ध के समय बचाने का था जो १७४४ ई० में इंगलैण्ड और फ्रान्स के बीच छिड़ा था।* उसी समय एक छोटी सी युरोपियन सेना भी खड़ी की गई थी। मेजर स्ट्रिङ्गर लारेन्स जो इन फौजों का नायक बनाया गया था "भारत की सेना का जन्मदाता" कहा गया है। १७७१ ई० में बने पार्लिमेण्ट के कानून से कम्पनी को सिपाही भरती करने का अधिकार मिला, और १७८८ के कानून ने पुनः कम्पनी को विलायती सिपाही भरती करने और उनको फौजी कायदा मानने को वाध्य करने की क्षमता दी।* कुछ दिनों में बंगाल, मद्रास और बम्बई की प्रेसिडेन्सियों में पृथक पृथक तीन सेनायें बन गईं। इनके अतिरिक्त कई एक ऐसी भी फौजें (कण्टिन्जेण्ट) थीं जो देशी राज्यों की रक्षा के लिये थीं, और जिनका व्ययभार देशी राज्यों पर था। 'बंगाल आर्मी' में कोई बंगाली न था, और इसका एक छोटा सा हिस्सा ही बंगाल में रहा करता था। १८४६ में, अर्थात्

---

* Chesney, Indian Polity. 3rd Edition, p. 205.

* इलबर्ट कृत—भारत सरकार पृ० ६३ और ७४।

सिपाही विद्रोह के एक वर्ष पहले, बंगाल आर्मी बहुत बढ़ गई थी, इसकी संख्या अन्य दो प्रेसिडेन्सियों की सम्मिलित सेनाओं से भी अधिक थी। यह विशेष कर अवध, और कुछ कुछ पश्चिमोत्तर प्रदेश के ब्राह्मण, राजपूत और मुसलमान जवानों से बनी थी। बम्बई और कुछ देशी राज्यों की सेना (कंटिन्जेंण्ट) भी इन्ही लोगों से बनी थी। मद्रास प्रेसिडेन्सी के लोग ही मद्रास सेना में थे। पंजाब सीमा की फौज ऐसे घुड़सवार और पैदल सिपाहियों से बनी थी जो मामूली फौज़ के नहीं थे (Irregular) और वहीं आसपास के लोगों से ही भरती किये जाते थे। अधिकांश तोपखाने का प्रबन्ध देशी सिपाही के हाथ था। १८५६ ई० में कम्पनी की फौज में ३८००० युरोपियन और २,१५,००० देशी सिपाही थे। इनके अतिरिक्त देशी राज्यों की फौज़ (कंटिन्जेंट) थी जिनका उल्लेख किया जा चुका है।

१८५७ में बंगाल की प्रायः सम्पूर्ण फौज़ ने गदर (विद्रोह) मचाया। पंजाब सीमा की फौज़ बराबर राजभक्त बनी रही और साथ ही साथ विद्रोह दमन करने में अत्युत्तम सहायता भी दी। हैदराबाद की सहायक सेना और कुछ छोड़ कर मद्रास, बम्बई की सारी सेना राजभक्त बनी रही। जब राज्य प्रबन्ध कम्पनी के हाथ से महारानी के हाथ चला गया तब सम्पूर्ण सैनिक प्रबन्ध बदल दिया गया। बंगाल की सेना का तो लोप हो ही चुका था। स्थानीय गोरी सेना

भी उठा दी गई और उसके स्थान में ब्रिटिश रेजिमेण्ट भरती किये गये। गोलन्दाज प्रायः सब के सब अंगरेज ही रक्खे गये। गोरी फौज की संख्या बढ़ाकर ६२ हजार और देशी पल्टन की संख्या घटाकर १३५ हजार कर दी गई। विद्रोह के पहले देशी फौज से पुलिस का काम भी लिया जाता था, परन्तु अब से पुलिस का खास प्रबन्ध हुआ, इस कारण कुल देशी फौज की संख्या घट जाने से भी लड़नेवाली सेना की शक्ति का उतना ह्रास न हुआ। *

सेना के तीनों विभाग पृथक पृथक नाम से अवश्य जारी रहे। जैसे जैसे समय व्यतीत होता गया है वैसे वैसे सैनिकों की योग्यता की उन्नति की चेष्टा की गई है। जाति के अनुसार दलों में बांटने की प्रथा का प्रचार बंगाल की पैदल सेना में भी किया गया है। अब यहां के एक बटालियन (दल) में एक ही जाति के सिपाही रखे जाते हैं, अर्थात् ब्राह्मण, जाट, राजपूत इत्यादि के लिये पृथक पृथक बटालियन हैं। १८८५ ई० में जब रूस की चढ़ाई का डर बढ़ रहा था उस समय भारत के सैन्यबल पर पूर्ण विचार हुआ था और गोरी तथा देशी फौज की वृद्धि की गई थी। १९०० में सब प्रकार के सिपाहियों और अफसरों की संख्या २ लाख २३ हजार के लगभग थी जिनमें ७६ हजार से भी अधिक गोरे सिपाही थे। †

---

* स्ट्राची कृत भारत, पृ० ४३७-३८। ‡ वही, पृ० ४४०, ४४५।

कानून द्वारा सकौन्सिल बड़े लाट को भारत की सेना पर पूर्ण अधिकार दिया गया है; हां, इन्हे भारत सचिव सम्राट की ओर से जो हुक्म भेजेंगे उन्हें मानना पड़ेगा। बड़ेलाट की शासक सभा (Executive Council) का जो सैनिक सदस्य है वह सेना विभाग का काम सम्हालता है। सम्राट को सब प्रकार की सेना के सब से बड़े अफसर जंगीलाट हैं। परन्तु उन्हें सकौन्सिल बड़े लाट के शासन में रहना पड़ता है। पहले मद्रास और बम्बई की पल्टनों के लिये प्रादेशिक जंगीलाट रहते थे। परन्तु १८८३ के विलायती कानून से इन प्रान्तिक सेनापतियों का पद उठ गया, और बम्बई तथा मद्रास की सरकार को फौजी शासन के जो सब अधिकार थे वे भारत सरकार को दे दिये गये। इस कानून के अनुसार जो व्यवस्थायें हुई थीं उनके अनुसार एप्रिल १, १८८५ से काम होने लगा। *

"जब से १८८५ से प्रेसिडेन्सियों की पृथक पृथक सेना उठा दी गई तब से भारत की सेना चार विभागों में बांटी गई हैं प्रत्येक का नाम प्रदेश के नाम के अनुसार पड़ा है, जैसे पंजाब, बंगाल, मद्रास, बम्बई; बर्मा का उपविभाग १८०३-४ में मद्रास से पृथक कर अन्य चार विभागों की नाईं एक पांचवां विभाग बना दिया गया। ये विभाग फिर फौजी जिलों में बांट दिये गये थे।"

---

* स्टाची कृत 'भारत', पृ० ४४६—४४८।

"लाट किचनार ने, १९०४ में सेना के पुनर्गठन और पुनर्विभाग का जो सिलसिला शुरू किया था उससे बहुत से छोटे छोटे जिलों को उठाकर बड़ी बड़ी छावनियों में सेना को इकट्ठा करना पड़ा। सम्पूर्ण सेना तीन 'आरमी कोर'—पूर्वी, पश्चिमी, उत्तरी, विभागों—में बांटी गई जिनमें आठ उपविभाग थे। दो प्रान्तीय विभाग—सिकन्दराबाद अर्थात् पुराना मद्रास विभाग और बर्मा—किसी 'कोर' में शामिल न किये जाकर स्वयं जङ्गीलाट के अधीन रक्खे गये।

"१९०७ में और भी फेर बदल हुए। अब से पूर्वी पश्चिमी और उत्तरी विभाग उठा दिये गये, भारत की सेना केवल दो—उत्तर और दक्षिण—विभागों में बांटी गई: दोनों एक एक 'जनरल अफसर' के अधीन रक्खे गये। यही व्यवस्था अब तक चली जा रही है।" †

फौजी विभाग के शासन प्रबन्ध का दूसरा परिवर्त्तन १९०५ में हुआ। अब भी सकौन्सिल बड़ेलाट को ही सब से अधिक क्षमता रही, अब भी उनको भारत सचिव द्वारा प्रकाशित सम्राट की आज्ञा माननी पड़ती है, परन्तु पुराने "मिलिटरी डिपार्टमेण्ट" (फौजी विभाग) के स्थान में (१) फौजी विभाग और (२) फौजी सामान (रसद इत्यादि) विभाग नामक दो विभाग स्थापित हुए। * विभाग नं० २

---

† The Fifth Decennial Report on Moral & Material Progress of India, p. 330.

को जिन बातों के प्रबन्ध का विशेष भार सौंपा गया था उनको छोड़ सेना सम्बन्धी सब प्रकार का प्रबन्ध विभाग नं० १ से जङ्गीलाट की अध्यक्षता में हुआ करता था। इसी पहले विभाग द्वारा छावनियों और स्वयं सेवकों ('वलसटेरो") से सम्बन्ध रखनेवाली सब बातों का फैसला होता था। विभाग नं० २ बड़े लाट की कौन्सिल के एक सदस्य के अधीन रक्खा गया था; यहीं से सेना सम्बन्धी बड़े बड़े ठेकों का प्रबन्ध होता था तथा बोझ ढोनेवाले पशुओं का सरञ्जाम और रजिस्ट्री होती थी; तोपखाने, घोड़े, फौजी मकानात, सिपाहियों की वर्दी तथा रायल इण्डियन मेरीन (सम्राट के लड़ाकू जहाजों का भारतीय बेड़ा) के प्रबन्ध करनेवाले विभागों का निरीक्षण होता था और 'इण्डियन मेडिकल सर्विस' के डाक्टरों के फौजी कामों का देखभाल हुआ करता था। *

"एप्रिल १९०९ में फौजीसामान विभाग उठा दिया गया, और फौज से सम्बन्ध रखनेवाले तोपखाने, रसद पहुंचाने, घोड़ापालनेवाले विभागों के ऐसे सहायक विभागों के शासन का फौजी प्रधान कार्य्यालय (Army Headquarter) से सीधा सम्बन्ध कराने का

---

* Imperial Gazetteer, Vol IV, p 360

† Vide The Fifth Decennial Report on Moral and Material Progress of India.

कार्य पूरा हो गया। फौजीसामान विभाग का जो कार्य भारत सरकार के हाथ था वह अब फौजी विभाग (Army Deptt) द्वारा ले लिया गया, और फौज से सम्बन्ध रखनेवाली सब बातों का शासन प्रबन्ध जंगी लाट के हाथ चला गया। जंगीलाट यह काम बड़ेलाट की कौन्सिल के एक सदस्य की हैसियत से करते हैं और अन्य सदस्यों को नाईं इन पर भी एक विभाग (सेना विभाग) का प्रबन्ध भार है; हां और बातों की नाईं यहां भी भारत सरकार का अधिकार सर्व्वोपरि है।"

भारत के सैन्यबल में कुमुक (इमदादी फौज, रिजर्व) का लेखा नहीं किया गया है, इस कुमुक में उन सिपाहियों की गिनती होती है जिन्होंने पांच से बारह वर्ष तक देशी फौज में काम किया है और जो स्वयंसेवक (वलमटेर) हैं। इनके अतिरिक्त कई प्रकार की सहायक सेनायें भी हैं जैसे मिलिशिया सिपाही (वैसे गृहस्त जो लड़ाई के समय सिपाही का काम देते हैं); जंगी पुलिस, और देशी राज्यों की सहायक सेना जिनका व्ययभार देशी राज्यों पर है, और जिनके अफसर भी देशी हैं परन्तु अंगरेजी अफसरों की देख-रेख में काम करते हैं। देशी राज्यों में इस प्रकार की सहायक सेना के अतिरिक्त भी कुछ सेना रहती है

जो शान्तिरक्षा करती है। सिक्ख और राजपूत रजवाड़ों की सेना सब से अच्छी हैं; उन के बाद ग्वालियर, हैदराबाद और काश्मीर की सेना का नम्बर है। *

देशी सिपाहियों के जो अंगरेज अफसर होते थे वे 'इण्डियन स्टाफ कोर' के नाम से पुकारे जाते थे। १८६१ में जब कि देशी सेना का पुनर्गठन हुआ था उस समय बंगाल, मद्रास और बम्बई की सेनाओं के लिये पृथक पृथक 'स्टाफ कोर' स्थापित हुआ था। १८८१ में तीनों 'स्टाफ कोर' मिला कर एक कर दिये गये। १९०३ में 'स्टाफ कोर' का नाम बदल कर "देशी सेना के अफसर" नाम रखा गया उस साल इनकी संख्या प्रायः २७०० थी। ये लोग देशी सेना तथा जंगी कार्यों में ही नहीं रक्खे जाते हैं परन्तु बहुत से मुल्की कामों पर भी इनको बहाल किया जाता है। पोलिटिकल डिपार्टमेण्ट (राजनीतिक विभाग) के अधिकांश पदों पर यही लोग बिठाये जाते हैं; और नन-रेगुलेशन (गैरकानूनी) प्रान्तों में शासन और विचार सम्बन्धी पदों पर भी नियुक्त किये जाते हैं। †

भारतवासियों का सेना विभाग में जो स्थान था उस में सिपाही विद्रोह ने बहुत कुछ परिवर्त्तन कर दिया

---

* The Fifth Decennial Report pp 372, 375.

† Strachey, India, p 442.

है। देशी सिपाहियों की संख्या तो घटा ही दी गई है, परन्तु अब उच्च जति के लोग कदाचित ही लिये जाते हैं और देशी अफसरों का भविष्य भी अत्यन्त संकुचित कर दिया गया है। जेनरल सर जौर्ज चेसनो लिखते हैं:—"एक प्रधान अंश में जातीय सैनिक संख्या का कोई परिवर्त्तन नहीं हुआ है और उसमें दोष भी रह गये हैं। जब कि विचार विभाग के अधिकांश पद भारतवासियों को ही मिले हैं, ये सर्व्वोच्च विचारालयों में विचारकों के पदों पर भी बिठाये गये हैं, और जब कि हाल मे किये गये सुधारों के कारण शासन और विचार विभागों के प्रत्येक अंगों के पदद्वार देशियों के लिये उन्मुक्त कर दिये गये हैं, तब सेनाविभाग ही ऐसा विभाग है जो अब तक भी, चार मामूली बातों को छोड़, जैसे का तैसा ही बना हुआ है—हमलोगों की सेना क्या है कि किसानों वा उनसे जरा से अच्छे लोगों की सेना हैं; इसमें सिपाही तो सब देशी हैं और अफसर सब के सब अंगरेज हैं। + + + + घुड़सवारों के देशी अफसरों की अवस्था तो पहल से भी हीनतर हो गई है; क्योंकि पहले तो देशी अफसर एक स्क्वाडरन (घुड़सवार सेना का एक दल) का अध्यक्ष बन सकता था परन्तु अब वह स्थान अंगरेज अफसरों को ही मिलता है, नया से नया

अंगरेज अफसर भी पुराने से पुराने देशी अफसर के ऊपर कर दिया जाता है। कम से कम सेना के विषय में तो इतना कहा जा सकता है कि राज्यभार अपने हाथ में लेते हुए महारानी ने जो घोषणापत्र निकाला था वह 'मृत पत्र' (Dead letter, बेकाम) के बराबर है। + + + देशी सज्जनों में बहुत से ऐसे उच्च वंश के लोग हैं जिनके पुरुषा पुराने राजाओं के समय में बड़े बड़े फौजी पदों पर थे। वैसे वंशों में बहुत से ऐसे व्यक्ति हैं जिनके लिये यदि कोई सरकारी ओहदा सम्भव और उपयुक्त तथा रुचिकर है तो वह फौजी पद ही है, दूसरा नहीं, परन्तु उसका द्वार उनके लिये बन्द है। जब तक यह अवस्था है तब तक यह कदापि नहीं कहा जा सकता कि घोषणा के समय जो वचन दिया गया था उसके अनुसार पूर्ण-रूप से कार्य किया जा रहा है।" *

बहुत शीघ्र इसमें अंशतः सुधार होने की सम्भावना है। जिसमें भारतवासियों को कुछ फौजी ओहदे मिल सकें इसका बहुत ही मनोयोग पूर्वक विचार किया जा रहा है, भारत सचिव और बड़ेलाट इसका विचार कर रहे हैं और इस विषय के बहुत ही महत्व की बातों पर लिखा पढ़ी हो रही है।

---

* Indian Polity, Third Edition p. 268.

सैनिक संगठन के अतिरिक्त देश की रक्षा के लिये किला इत्यादि बना कर भी देश के सामरिक बल की पुष्टि की गई है। पश्चिमोत्तर सीमान्त के उन स्थानों में जहां पर दुश्मनों की चढ़ाई का डर हो सकता है, बहुत ही मजबूत किले बना दिये गये हैं, और रेल से सम्बन्ध कर दिया गया है। प्रधान प्रधान बन्दरगाहों की रक्षा के लिये किले बना दिये गये हैं और वहां आधुनिक तोपें रखी गई हैं तथा टरेट शिप, टारपीडो गनबोट, टारपीडो बोट इत्यादि जंगी जहाजों के बेड़ों से वे बन्दरगाह और भी सुरक्षित हो गये हैं।* बम्बई, शिमला, दिल्ली, इलाहाबाद, कलकत्ता और अन्य प्रधान प्रधान स्थानों में बिना तार के तारघर बने हैं।

भारत के इतिहास में जोखिम के समय, अर्थात् हेस्टिंग्स के शासनकाल में, अंगरेजी जंगी बेड़े ने फरासीसियों के विरुद्ध समुद्र पर सफलता पूर्वक अधिकार जमाये रखा था। ईस्ट इंडिया कम्पनी स्थापित होने के थोड़े ही दिनों के बादसे उसके जहाज लड़ाई और व्यापार दोनो प्रकार का काम करने लगे। द्वितीय चार्लस और द्वितीय जेम्स के अनुशासन से कम्पनी के जंगी बेड़े की सृष्टि हुई, परन्तु १८२८ में बम्बई

---

* Strachey, India, p. 347.

और कलकत्ते के बेड़े को मिला कर 'भारतीय जंगी बेड़ा' बनाया गया जिसने आगे चलकर बहुत काम किया। १८६२ मे यह बेड़ा, खर्च के ख्याल से उठा दिया गया, उस समय यह सोचा गया कि भारत की सामुद्रिकरक्षा का भार शाही बेड़े को सौंपा जाना चाहिये। तब 'बम्बई मेरीन' की सृष्टि हुई और अन्त को १८७७ में बंगाल मेरीन' से मिला दिया गया, जिसका नाम पड़ा "सम्राज्ञी का हिन्दुस्तानी बेड़ा" फिर १८८२ में नाम बदल कर "हिन्दुस्तान का शाही बेड़ा" हो गया। सिपाहियों तथा रसद इत्यादि का ढोना, कैदियों के टापुओं (कालापानी) की रक्षा करना, समुद्री डाकुओं को दबाना, समुद्र का सर्वे (पैमाइश) करना और बन्दरगाहों की रक्षा करना इसका काम था। १८८१ ई० में इस बेड़े में टरेटशिप टारपीडो, गनबोट इत्यादि जितने लड़ाकू जहाज थे सब के सब विलायत के 'नौविभाग' को मातहत कर दिये गये। भारत सचिव इसके अफसरों को नियुक्त करने लगे। लड़ाई और साधारण कार्य के लिये इन जहाजों को अस्त्र शस्त्र मिलते हैं। बम्बई और कलकत्ते में इनके लिये 'डक' बने हुए हैं। आजकल जो प्रबन्ध है उसके अनुसार (यह प्रबन्ध १८८६-८७ से चला आता है) भारत सरकार को 'ईस्ट इंडिया स्क्वाडरन' के कई

जहाजों के खर्च के लिये एक लाख पाउण्ड सालाना देना पड़ता है, ये जहाज भारत सरकार की अनुमति बिना निर्द्धारित सीमा के बाहर नहीं भेजे जा सकते। †

† Imperial Gazetteer, Vol. IV, pp. 382-83.

तृतीय अध्याय।

उच्चवर्ग के शासक और व्यवस्थापक सभा।

भारत सचिव—उनकी कौन्सिल—इण्डिया आफिस—गवरनर जेनरल—उनकी कौन्सिल—भारत सरकार का शासन कार्य्य—उसके विभाग—भारत की व्यवस्थापक सभा—१८९२ के कानून से उसका संगठन—उस सभा तथा उसके मेम्बरों के अधिकार—ब्रिटिश भारत के विभाग—'प्रेसिडेन्सी' का अर्थ—प्रान्तीय सरकार—गवरनरों की शासक सभायें—प्रान्तीय सेक्रेटरियेट—प्रान्तीय व्यवस्थापक सभा—बंगाल की व्यवस्थापक सभा का संगठन—उसकी तथा उसके मेम्बरों की क्षमता।

———:-*-:———

१८५८ ई० में 'भारत के उत्तम शासन' के लिये जो कानून बना था उससे शासनभार ईस्ट इंडिया कम्पनी से बदल कर सम्राज्ञी के हाथ चला गया; उस समय यह भी निश्चित हुआ था कि अब से कम्पनी बहादुर और 'निरीक्षक सभा' (Board of Control) की सारी क्षमता का उपभोग भारत सचिव करेंगे, यह कभी कभी अपनी कौन्सिल की राय भी लेंगे। अन्य मन्त्रियों की तरह भारत सचिव भी सम्राट द्वारा नियुक्त किये जाते हैं। राज्यशासन व्यवस्था के अनुसार इन्हीं को भारत सम्बन्धी विषयों में सम्राट को परामर्श देने का अधिकार है। विलायती मन्त्रीमंडल के सदस्य की

हैसियत से महासभा (पार्लिमेंट) के अधीन हैं और उसकी सार्वभौम क्षमता का उपयोग भी करते हैं। यही महासभा भारत तथा ब्रिटिश सम्राट के सम्पूर्ण राज्य पर सार्वभौम अधिकार रखती है।

भारत सचिव की कौन्सिल का नाम "इण्डिया कौन्सिल" है। इसमें पहले १५ सदस्य थे। १८८९ के कानून से यह संख्या घटाकर दस तक कर दी जासकती है। ये सदस्य भारत सचिव द्वारा नियुक्त किये जाते हैं। इनमें से वैसे तीन सदस्य जो किसी पेशे के हैं, या जिनमें कोई विशेष योग्यता है, जन्म भर के लिये बहाल हो सकते हैं। शेष सदस्य दस वर्षों के लिये नियुक्त होते हैं, ये विशेष कारणों से सम्भवतः और भी पांच वर्षों तक रक्खे जा सकते हैं। इस सभा में कम से कम नौ सदस्य ऐसे हों जिन्हों ने कम से कम दस वर्षों तक भारत में नौकरी की है या निवास किया है तथा नियुक्त होने के समय उन्हें भारत छोड़े हुए दस वर्षों से अधिक नहीं हुआ है। *

---

* १९०७ के 'इण्डिया कौन्सिल ऐक्ट' के अनुसार इस कौन्सिल में कम से कम १० और अधिक से अधिक १४ सदस्य रह सकते हैं। सदस्य पहिले सात वर्षों के लिये नियुक्त होते हैं, परन्तु आवश्यक होने पर और भी पांच वर्षों तक रह सकते हैं। अधिकांश सदस्य वैसे होंगे जिन्होंने भारतवर्ष में कम से कम १० वर्षों तक नौकरी की है या निवास किया है, और जिन्हें भारत छोड़े पांच वर्षों से अधिक नहीं हुए हैं।—अनुवादक।

भारत सचिव की कौन्सिल के संगठन और सदस्य संख्या इत्यादि के विषय में महत्व के परिवर्त्तन होने वाले हैं जिनका विचार 'कामन्स सभा' कर रही है। अभी हाल में जो 'इण्डिया कौन्सिल बिल' पेश हुआ था उसमें कहा गया था कि कौन्सिल के सदस्यों की संख्या सात से कम और दस से अधिक नहीं होगी। यदि किसी समय इस कौन्सिल के सदस्यों में से कम से कम दो सदस्य ऐसे न हों जो बहाल होने के समय हिन्दुस्तान के बाशिन्दे हो गये थे, और यदि सदस्यों में से कक से कम ६ सदस्य ऐसे न हों जो बहाल होने के समय या तो भारत के बाशिन्दे हो गये थे, या जिन्होंने कम से कम दस बर्ष तक वास किया था वा नौकरी की थी और बहाल होने के समय उन्हें भारत से आये या वहां की नौकरी छोड़े हुए पांच बर्षों से अधिक नहीं हुआ था—यदि ये सब बातें न हों तो कौन्सिल में कोई पद शून्य होने से वह पद उसी को दिया जायगा जो भारत में बस गया है। शून्य स्थान पर वही व्यक्ति बहाल किया जायगा जो या तो भारत में बस गया होगा या जिसने भारत में नौकरी की होगी या जो कुछ दिनों तक रहा होगा। भारत की सब प्रकार की व्यवस्थापक सभाओं के गैर सरकारी सदस्य कुछ ऐसे योग्य व्यक्तियों का नाम चुनेंगे जो उनकी दृष्टि में इंडिया कौन्सिल के सदस्य होने लायक होंगे, सरकार इन्हीं प्रस्तावित व्यक्तियों में से किसी

व्यक्ति को चुनलेगी, तब वह भारतवासी इंडिया कौन्सिल का सदस्य होगा। इस तरह जो भारतवासी बहाल होंगे उनका सालाना वेतन १२०० पा० होगा, उन्हें इसके अतिरिक्त ६०० पा० का सालाना भत्ता भी मिलेगा। उस प्रस्तावित बिल में यह भी कहा गया था कि अब से भारत सचिव को ऐसा अधिकार दिया जावे जिसमें कि वह एक ऐसे व्यक्ति को जो रुपये पैसे के विषय में विशेष जानकारी रखता हो, खास शर्त्त पर कौन्सिल का सदस्य बना सकें। उस बिल में कुछ ऐसे भी नियम थे जिनके अनुसार भारत सरकार के पास किसी प्रकार की आज्ञा भेजने में या उससे पत्र व्यवहार करने में, या विलायत में भारत सरकार से सम्बन्ध रखनेवाले किसी प्रकार का आर्डर देने में भारत सचिव के हस्ताक्षर की आवश्यकता नहीं हो सकती थी। कई अवस्थाओं में किस प्रकार कार्य किया जायगा इसका नियम बनाने का अधिकार भारत सचिव को दिया गया था।

भारत सरकार का जो काम विलायत में होता है, तथा विलायत और भारत के बीच चिट्ठी पत्री भेजना इत्यादि कामों को अपने सभापति, भारत सचिव, की देख रेख में संभालना ही इंडिया कौन्सिल का काम है।

कानून के आसानुसार भारत सचिव को राजस्व के अतिरिक्त कुछ ऐसे भी काम करने पड़ते हैं जिनके लिये इंडिया कौन्सिल की बैठक में उपस्थित मेम्बरों के बहुमत को अवश्य मानना पड़ता है। इनके अतिरिक्त अन्य सब विषयों में भारत सचिव को अपनी कौन्सिल की राय के विरुद्ध भी कार्य करने का अधिकार है। हां, उन्हे विपक्ष की राय तथा तर्क को अवश्य लिख लेना पड़ेगा। अतः स्पष्ट है कि यह कौन्सिल केवल परामर्श देनेवाली संस्था है, इसे स्वयं किसी प्रकार के कार्यारम्भ करने की क्षमता नहीं। चाहे कोई विषय कितना हो महत्व का क्यों न हो कौन्सिल उसपर मत नहीं प्रकट कर सकती जब तक कि वह विषय भारत सचिव द्वारा उनके पास न भेज दिया गया हो। मानलो कि विलायत के मन्त्रीमंडल ने सन्धि, विग्रह वा परराष्ट्र सम्बन्ध में कोई कर्त्तव्य निश्चय किया और उसके कारण भारत को भी कुछ व्यय करना पड़ा, ऐसी अवस्था में भी भारतसचिव को अपनी कौन्सिल की राय के विरुद्ध कार्य करने का अधिकार है। भारत सचिव के जिन कर्त्तव्य और क्षमता का उपर उल्लेख किया गया है उनमें भी कुछ परिवर्त्तन करने का विचार हो रहा है।

भारत सचिव के दफ्तर का नाम "इंडिया आफिस" है। यह विभागों में बंटा हुआ है, प्रत्येक विभाग एक

एक स्थायी सेक्रेटरी (मन्त्री) के अधीन है। इंडिया कौन्सिल को भी कमिटियों में बांट दिया गया है, ये कमिटियां इंडिया आफिस के 'विभागों' से मिलती जुलती हैं।

भारत में, शासन प्रबन्ध के सर्वप्रधान अफसर बड़ेलाट (गवर्नर जेनरल) हैं, ये राजप्रतिनिधि (वाइसराय) भी हैं। इन्हें सम्राट नियुक्त करते हैं और साधारणतः पांच वर्षों तक काम करते हैं। इन्हें भी एक कौन्सिल ह जिसे साधारणतः कार्यकरिणी वा शासक समिति भी कहते हैं। इसमें आजकल ६ साधारण सदस्य हैं; जंगी-लाट इस समिति के सातवें अतिरिक्त सदस्य बनाये जा सकते हैं, और प्रायः सर्वदा रहते भी हैं। यदि इस समिति की बैठक किसी प्रेसिडेन्सी के हाते में होती है तो वहांका गवरनर भी उसका अतिरिक्त सदस्य बन जाता है।

सम्राट साधारणतः बड़ेलाट की शासक-समिति के सदस्यों को पांच वर्षों के लिये नियुक्त करते हैं। इनमें तीन सदस्य तो अवश्य ही ऐसे होंगे जिन्हो ने बहाल होते समय कमसे कम दस वर्षों तक भारत सरकार की नौकरी की होगी; और एक सदस्य इंगलैंड या स्काटलैंड का वैसा बारिस्टर होगा जिसने कमसे कम पांच वर्षों तक बारिस्टरी की होगी।

यदि शासक समिति में मतभेद हो तो साधारणतः बहुमत की राय बहाल रहेगी, परन्तु अवस्था विशेष में बड़ेलाट को इस समिति के मत के विरुद्ध भी काम करने का अधिकार है। इसकी बैठक गुप्त होती है, इसके मत को 'कौन्सिल की आज्ञा' (Orders in Council) कहते हैं।

भारतसरकार की राजाज्ञायें सकौन्सिल बड़ेलाट या भारतसरकार (Govt of India) के नाम से प्रकाशित होती हैं। भारतसरकार का राज्य शासन सम्बन्धी कार्य इन विभागों (Departments) के कार्य से स्पष्ट होता है :—

(१) पर-राष्ट्र :—यह विभाग पर-राष्ट्रनीति, तथा सीमाप्रान्त की जातियों और देशी राज्यों से सम्बन्ध रखने वाले कार्यों का प्रबन्ध करता है। *

(२) स्वराष्ट्र :—यह देश के शासन से सम्बन्ध रखता है। देश की आभ्यन्तरिक राजनीति, कानून, विचार जेल, पुलिस इत्यादि बहुत से विषयों का शासन करता है।

(३) राजस्व और कृषि विभाग :—इसके प्रधान कार्य

---

* १९१३ तक इस विभाग का प्रबन्ध एकही सेक्रेटरी करता था, परन्तु अब दो सेक्रेटरी रखे गये हैं। पहला परराष्ट्र सम्बन्धी कार्य करता है, और दूसरा (पोलिटिकल सेक्रेटरी) देशी राज्यों के सम्बन्ध का काम देखता है।—अनुवादक।

भूमिकर का प्रबन्ध, कृषि सम्बन्धी खोज और उसकी उन्नति तथा अकाल पीड़ितों की सहायता करना है।

(४) आयव्यय विभाग :—यह भारत सरकार तथा प्रान्तीय सरकारों के आय-व्यय, सरकारी नौकरों के वेतन, छुट्टी, पेन्शन इत्यादि का प्रबन्ध करता है। सिक्के, नोट, टकसाल और बंको का भी प्रबन्ध यहीं से होता है।

(५) वाणिज्य और शिल्प विभाग :—देश के वाणिज्य और शिल्प से सम्बन्ध रखने वाले प्रश्नों की मीमांसा के लिये १८०५ में इसकी सृष्टि हुई थी। हाल में जो रेलवे बोर्ड कायम हुआ है, वह भी इसी का अंश है। इस रेलवे बोर्ड का बड़ा मेम्बर वाइसराय की कौन्सिल का अतिरिक्त मेम्बर बन सकता है, और सीधे वाइसराय से व्यवहार करता है।

(६) व्यवस्थापक—बड़ेलाट की व्यवस्थापक सभा में जितने कानून बनते हैं उन सब का प्रबन्ध यहीं से होता है।

(७) पाबलिक वर्कस वा स्थापत्य (पूर्त्तकर्म) विभाग।

(८) सेना विभाग।

(९) शिक्षा तथा स्वास्थ्य विभाग। यह पहले स्वराष्ट्र विभाग का अंश था, परन्तु १९१० में यह अलग कर

दिया गया इसके एक अध्यक्ष (मेम्बर) और दो सेक्रेटरी हैं।

बड़ेलाट स्वयं परराष्ट्र विभाग का प्रबन्ध देखते हैं। सेना विभाग के संचालन का भार जंगीलाट पर है। शासक समिति के जो छ साधारण सदस्य हैं उनमें से एक के अधीन राजस्व-कृषि तथा स्थापत्य नाम के दो विभाग हैं, और शेष पांच विभाग अलग रखे गये हैं। इन सदस्यों को सहायता के लिये प्रत्येक विभाग में एक सेक्रेटरी रहते हैं। साधारण प्रश्नों को मीमांसा विभाग द्वारा की जाती हैं। परन्तु जब कोई महत्व का प्रश्न उपस्थित होता है वा दो वा अधिक विभागों में मतभेद हो जाता है तब वे प्रश्न शासक समिति में तय पाते हैं।

अबतक जिस शासक समिति का उल्लेख हुआ है, उसमें कानून बनाने में सहायता देने के लिये कुछ अतिरिक्त सदस्यों को बहाल करने से व्यवस्थापक सभा की सृष्टि होती है। इसका पूरा नाम होता है—नियम और कानून बनाने के लिये बड़ेलाट की सभा। सर जान स्ट्राची लिखते हैं कि व्यवस्थापक सभा को बहुधा स्वतन्त्र सभा समझा जाता है, परन्तु वह भूल है, सचमुच में कानून की दृष्टि में कुल एक ही सभा है।" शासक समिति (कौन्सिल) में अतिरिक्त सदस्य

तभी जाते हैं जब समिति कानून बनाने के लिये बैठती है। ये अतिरिक्त सदस्य बड़ेलाट द्वारा नामिनेशन से बहाल किये जाते हैं। नामिनेशन के लिये सकौन्सिल बड़ेलाट ने कानून बनाये हैं, इन कानूनोंपर भारत सचिव की भी सम्मति ली गयी है। १८९२ ई० में बने पार्लिमेंट के कानून से यह निश्चय हुआ था कि इन अतिरिक्त मेम्बरों की संख्या दस से कम और सोलह से अधिक न होगी। उस कानून के अनुसार जो नियम बने थे उससे १६ अतिरिक्त सदस्य बहाल हुए थे, जिनमें से छ सरकारी अफसर थे जिन्हे सकौन्सिल बड़ेलाट ने नियुक्त किया था और दस गैरसरकारी सदस्य थे। बड़ेलाट इन गैरसरकारी सदस्यों में से चार को प्रान्तीय व्यवस्थायक सभाओं के गैर सरकारी मेम्बरों के बहुमत के अनुमोदन पर बहाल करते थे. प्रत्येक प्रान्तीय सभा एक मेम्बर को अनुमोदन करती थी। पांचवां सदस्य कलकत्ते के बणिकों की सभा (Chamber of Commerce) के अनुमोदन पर बहाल होता था। यदि आवश्यक हो तो बड़ेलाट इन संस्थाओं की सिपारिश नहीं भी मान सकते थे, उस अवस्था में इन संस्थाओं को दूसरा व्यक्ति चुनना पड़ता था। शेष पांच सदस्यों को बड़ेलाट अपने विचार के अनुसार ही नियुक्त करते थे। ये सब अतिरिक्त मेम्बर दो वर्ष तक काम करते थे।

१९०९ के रेगुलेशन से बड़ेलाट को व्यवस्थापक सभा का संगठन बदल कर इस प्रकार का हो गया है:— सभ्यों में से ९ पदाधिकारी (Exofficio) हैं—यथा श्रीमान वायसराय (सभापति), उनकी शासक—समिति के सात सदस्य और जिसप्रान्त में सभा होती है उसके छोटे लाट— ; नामिनेशन से नियुक्त किये गये सरकारी अफसर २८ (जिनमें से आठ सदस्य आठो प्रान्तों के प्रतिनिधि होते हैं *) और गैर सरकारी ७, जिनमें से तीन पंजाब के जमीन्दार तथा पंजाब के मुसलमान तथा भारत के बणिकों के प्रतिनिधि अवश्य रहेंगे। चुने गये गैर सरकारी मेम्बरों की संख्या २५ ; अतः सब जोड़ कर मेम्बरों की संख्या हुई ६९।

उन नियमों के अनुसार यह भी स्थिर हुआ था कि दूसरे, चौथे, छठे इसी तरह प्रत्येक दूसरे चुनाव के समय (१) पूर्वबंगाल और आसाम (२) तथा युक्त प्रदेश के मुसलमान जमीन्दारों को बड़ी व्यवस्थापक सभा के लिये एक एक प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया जायगा। उस अवस्था में नामिनेसन से बहाल किये गये सदस्यों की संख्या ३५ से घट कर ३३ हो जायगी।

---

* मद्रास १, बम्बई १, बंगाल १, युक्तप्रदेश १, पंजाब १, पूर्वबंगाल और आसाम १, बर्म्मा १, मध्यप्रदेश १।

हाल मे † जो सब परिवर्त्तन हुए हैं उनसे बड़ी व्यवस्थापक सभा का संगठन इस प्रकार का हो गया है :—

अब पदाधिकारियों (Exofficio members) की संख्या ८ है। नामिनेशन से नियुक्त किये गये सदस्यों में २८ सरकारी अफसर हैं (इन में से ८ अफसर ८ प्रदेशों से बहाल किये जाते हैं ‡) और ५ गैर-सरकारी सज्जन हैं।

चुने गये प्रतिनिधियों की संख्या २७ है। ये नीचे लिखे अनुसार चुने जाते हैं :—(१) प्रान्तीय व्यवस्थापक सभाओं द्वारा १२ ; (२) मद्रास, बम्बई, बंगाल, युक्तप्रदेश, बिहार उड़ीसा, मध्यप्रदेश के जमीन्दारों के प्रतिनिधि ६ ; (३) मद्रास, बम्बई, बंगाल, युक्तप्रदेश और बिहार उड़ीसा के मुसलमानों के प्रतिनिधि, ५ ; (४) बंगाल के मुसलमान और युक्तप्रदेश के मुसलमान जमीन्दार पारी पारी से, १ ; (५) कलकत्ते और बम्बई की बणिक सभायें (Chamber

---

† दिल्ली दरबार में किये गये सम्राट की घोषणा के बाद जो नियम १९१२ में बने थे उनके अनुसार—अनुवादक।

‡ मद्रास १, बम्बई १, बंगाल १, युक्तप्रदेश १, पंजाब १, बर्म्मा १, बिहार उड़ीसा १, मध्यप्रदेश १, आसाम १।

of Commerce), २ ; (६) मध्यप्रदेश को म्युनिसिपेलिटियों और जिला कौन्सिलों के प्रतिनिधि, १ * ।

प्रत्येक कानून के लिये बड़े लाट की स्वीकृति आवश्यक है। किसी कानून के जायज होने के लिये सम्राट की स्वीकृति की आवश्यकता नहीं है, परन्तु सम्राट किसी बने हुए कानून का प्रयोग नहीं होने दे सकते हैं।

१८६१ में बने इंडिया कौन्सिल ऐक्ट के अनुसार बड़े लाट कोई विशेष आवश्यकता होने पर स्वयं, कौन्सिल को विना पूछे, राजाज्ञा (Ordinance) निकाल सकते हैं जो छ महीनों तक कानून का काम दे सकती है।

पार्लिमेंट में बने जिन काननों से भारत सरकार की सृष्टि हुई है उनको बदलने का अधिकार भारत की व्यवस्थापक सभा को नहीं है ; उसी प्रकार भारत में ऐसा कोई कानून भी नहीं बन सकता है जिससे पार्लिमेंट की प्रभुता वा सम्राट के प्रति राजभक्ति (वश्यता, अधीनता) में त्रुटि हो। इन बातों को छोड़ सकौन्सिल बड़ेलाट की क्षमता सम्पूर्ण ब्रिटिश भारत के लिये कानून बनाने में अनिवार्य है।

---

* जब से मध्यप्रदेश में व्यवस्थापक सभा स्थापित हुई है तब से न० ६ के प्रतिनिधि की आवश्यकता नहीं रही। अब से (१) प्रान्तीय व्यवस्थापक सभाओं के प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ कर १३ होगई है।—अनुवादक।

पहले ब्रिटिश भारत वा वह भूमाग जो सकौन्सिल बड़े लाट के शासनाधीन है, आठ बड़े बड़े और पांच छोटे प्रान्तों में विभक्त था; प्रत्येक प्रान्तीय सरकार के नाम से पुकारा जाता था। आठ बड़े बड़े प्रान्तों में मद्रास, बम्बई की प्रेसिडेन्सियां; बंगाल, पूर्वबंगाल और आसाम, युक्तप्रदेश, पंजाब और बर्म्मा के छोटे लाट और मध्यप्रदेश के चीफ कमिश्नर की गणना होती थी। छोटे छोटे इलाकों में पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त, ब्रिटिश बलुचिस्तान, कुग, अजमेर-मारवाड़ और अंडेमन द्वीप की गिनती होती थी। बम्बई, और मद्रास के इलाके बहुत दिनों से चले आरहे हैं; सिन्ध विजय होने (१८४३) के कुछ ही दिनों बाद वह बम्बई के इलाके में मिला दिया गया था।

प्रेसिडेन्सी शब्द का आजकल कोई तात्पर्य्य न रहा। कम्पनी के राज्य के अगले दिनों में बंगाल, मद्रास और बम्बई के इलाकों का प्रबन्ध एक एक प्रेसिडेन्ट और कौन्सिल, जिनमें कम्पनी के नौकर ही बैठते थे, द्वारा होता था। इनके अधिकार में जहां तक का इलाका रहता था वह सब 'प्रेसिडेन्सी' कहा जाता था। बंगाल के फोर्ट विलियम' की प्रेसिडेन्सी में केवल बंगाल, बिहार और उड़ीसा ही नहीं शामिल थे, परन्तु उत्तर भारत में कम्पनी का जितना राज्य था सब उसीमें

शामिल था, अर्थात् फोर्ट विलियम और राजधानी कलकत्ते से जितने बड़े इलाके का शासन होता था वहसब बंगाल प्रेसिडेन्सी के अन्तर्गत था। सचमुच में बंगाल नाम की कोई खास प्रेसिडेन्सी न थी, वह तो फोर्ट विलियम की प्रेसिडेन्सी का अंश मात्र था।

१२ वी दिसम्बर, १८११ में जिस राजाज्ञा का प्रचार हुआ था उसके अनुसार जो पुनर्विभाग हुआ था उससे नीचे लिखे अदल बदल हुए हैं :—

"(१) इनके अनुसार पुराने बंगाल प्रदेश की वे पांच कमिश्नरियां जहां बंगला बोली जाती है, मिला ली जाती हैं, और उनको एक प्रेसिडेन्सी बना कर सकौन्सिल गवरनर के इलाके रखा जाता है। प्रान्तीय राजधानी कलकत्ते में रहेगी, परन्तु ढाके में भी दूसरी राजधानी रहेगी; और जिस तरह युक्तप्रदेश के छोटे लाट कुछ दिनों के लिये लखनऊ में रहा करते हैं उसी तरह बंगाल के गवरनर भी कुछ समय ढाके में विताया करेंगे।

(२) इस आज्ञा के अनुसार बिहार, छोटा नागपुर और उड़ीसा मिला कर एक पृथक प्रदेश बनाया जायगा जिसका शासन सकौन्सिल छोटेलाट करेंगे, यहां एक व्यवस्थापक सभा रहेगी; इसकी राजधानी पटने में होगी।

(३) आसाम पूर्वबंगाल से अलग किया जा कर फिर से एक चीफ कमिश्नर के अधीन रखा जायगा।

शासन सम्बन्धी ये सब परिवर्त्तन प्रायः कानूनों द्वारा दिये गये भारत सरकार के अधिकार से ही किये गये थे; पर तौभी इसके लिये इंगलैंड और भारत में कुछ अतिरिक्त व्यवस्था (कानून) की जरूरत पड़ी थी।

सकौन्सिल भारतसचिव ने दस्तूर के माफिक घोषणा की कि अब से भारत के बड़ेलाट फोर्ट विलियम प्रेसिडेन्सी, बंगाल के गवरनर नहीं रहेंगे, बंगाल के लिये एक पृथक गवरनर नियुक्त किया जायगा।

२१ वीं मार्च, १९१२ को सम्राट की आज्ञा से लाट करमाइकेल जो मद्रास के गवरनर थे, बंगाल फोर्ट विलियम प्रेसिडेन्सी के गवरनर नियुक्त किये गये।

२२ वीं मार्च १९१२ की घोषणा से पुराने बंगाल प्रदेश को काट कर एक नया प्रदेश बनाया गया जिसका नाम पड़ा बिहार और उड़ीसा; यह एक छोटे लाट के शासनाधीन रखा गया।

उसी तारीख को एक दूसरी राजाज्ञा प्रकाशित हुई जिससे बंगाल प्रेसिडेन्सी की भावी सीमा निर्द्धारित हुई।

उसी तारीख की तीसरी घोषणा से वे इलाके जो १९०५ के पहिले आसाम की चीफ कमिश्नरी में थे फिर

से सकौन्सिल बड़ेलाट के प्रत्यक्ष शासन और प्रबन्ध में ले लिये गये, और फिर उन इलाकों की एक चीफ कमिश्नरी बना कर एक चीफ कमिश्नर के अधीन रखा गया।" *

सकौन्सिल बड़ेलाट सब प्रान्तीय सरकारों का निरीक्षण और देख भाल करते हैं। प्रान्तीय सरकारों को बड़े लाट की आज्ञा का पालन करना पड़ता है और अपने सब कार्यों की सूचना बड़ेलाट के पास भेजनी पड़ती है। परन्तु चीफ कमिश्नरों समेत सब प्रान्तीय शासक अपने प्रान्त के शासन विभाग के सर्वश्रेष्ठ कर्मचारी समझे जाते हैं।

बंगाल मद्रास और बम्बई की प्रेसिडेन्सियां सकौन्सिल गवरनर के अधीन हैं, जिन्हें सम्राट नियुक्त करते हैं। इन सब की नियुक्ति साधारणतः पांच वर्षों के लिये होती है। गवरनर तो कोई अंगरेज राजनीतिज्ञ होता है, और कौन्सिल (Executive Council, शासक सभा) के दो सदस्य इंडियन सिविल सर्विस के वैसे कर्मचारी होते हैं जिन्हों ने कम से कम १२ वर्षतक नौकरी की है, और तीसरे कोई भारतवासी सज्जन वा श्रीमान होते हैं जिन्हें सरकार बहाल करती है। मद्रास और बम्बई के गवरनरों को सीधे भारत सचिव से लिखा पढ़ी करने का विशेष अधिकार है, वे जरूरत पड़ने पर बड़ेलाट

---

* Vide The Coronation Durbar and its consequences.

की तरह अपनी कौन्सिल की राय को भी रद्द कर सकते हैं।

बिहार के नये प्रदेश को छोड़ और किसी छोटेलाट की शासक सभा नहीं है। सम्राट की अनुमति से बड़ेलाट ही छोटेलाट को बहाल करते हैं। जहां शासक सभा है वहां दो सदस्य इंडियन सिविल सर्विस के और एक भारतवासी सज्जन वा ओमान होते हैं। ये पांच वर्षों के लिये नियुक्त होते हैं। जहां शासक सभा नहीं है वहां छोटेलाट ही सम्पूर्ण शासन व्यवस्था करते हैं। जब भारत सरकार निश्चय करेगी तब अन्य प्रदेशों में भी शासक सभायें नियुक्त होंगी।

जैसे कि भारत सरकार के यहां है उसी तरह प्रान्तीय सरकारों का दफ्तर (सेक्रेटेरियट) विभागों (डिपार्टमेंट) में बंटा रहता है, प्रत्येक विभाग एक सेक्रेटरी और अन्य सहायक कर्मचारी के अधीन रहता है। लगान और साधारण शासन विभागों को छोड़ अन्य प्रधान विभाग प्रायः सब प्रान्त में बराबर ही हैं। बंगाल में पुलिस, जेल और रजिस्ट्रेशन के लिये पृथक पृथक इन्सपेक्टर जेनरल हैं; शिक्षा विभाग के लिये डाइरेक्टर, अस्पतालों के लिये इन्सपेक्टर जेनरल और स्वास्थविभाग के लिये कमिश्नर तथा पशुरक्षा (भेटरीनरी) विभाग के लिये सुपरिनटेन्डेन्ट हैं। समुद्र और सिंचन विभाग तथा सड़क और सरकारी मकान के लिये पृथक पृथक

दो चीफ इंजिनियर हैं, ये लोग अपने विभाग के मन्त्री (सेक्रेटरी) का भी काम करते हैं।

मद्रास और बम्बई की व्यवस्थापक सभा क्या है मानों सकौन्सिल गवरनर की वह सभा है जिसमें कानून बनाने के लिये कुछ अतिरिक्त सदस्य नियुक्त कर दिये गये हैं। पहले इन अतिरिक्त सदस्यों की संख्या आठ से कम और बीस से अधिक नहीं हो सकती थी। इसमें प्रान्तीय अडभोकेट जेनरल (सब से बड़ा सरकारी बैरिस्टर) अवश्य रहेंगे, तथा अतिरिक्त सदस्यों में से आधे सज्जन अवश्य वैसे होंगे जो फौजी या सुल्की किसी किसिम की सरकारी नौकरी नहीं करते हैं।

इन सदस्यों को गवरनर नियुक्त करते थे, परन्तु नियुक्त करने में उन्हीं नियमों का प्रयोग किया जाता था जिन नियमों को सकौन्सिल बड़ेलाट ने सकौन्सिल भारत सचिव की अनुमति से बनाया था। १८९२ के कानून से जो नियम बने थे उनके अनुसार इन सदस्यों की संख्या बम्बई और मद्रास में २० कर दीगई; इन में से सरकारी अफसरों की संख्या ९ से अधिक नहीं हो सकती है। इन नियमों का अभिप्राय यह था कि व्यवस्थापक सभा के सदस्य, जहां तक हो सके, समाज के सब अंग के प्रतिनिधि स्वरूप हों। १९१२ के जिन

परिवर्त्तनों का उपर उल्लेख किया गया है उनसे प्रेसिडेन्सियों में बहुत कुछ अदल बदल हुआ था।

उन चारो प्रदेशों को व्यवस्थापक सभाओं में जहां छोटेलाट हैं, छोटेलाट और उनके बहाल किये हुए कुछ सज्जन रहते हैं। ये सज्जन उन कानूनों और नियमों के अनुसार बहाल किये जाते हैं जिनको सकौन्सिल बड़ेलाट ने भारत सचिव की अनुमति से बनाया है। बम्बई और मद्रास की व्यवस्थापक सभाओं के अतिरिक्त-सदस्य जिन सिद्धान्तों के अनुसार नियुक्त किये जाते हैं उन्हीं सिद्धान्तों पर ये नियम भी बने हैं।

पहले बंगाल की व्यवस्थापक सभा के २० सदस्यों में से १३ को छोटेलाट बहाल करते थे, इनमें से सरकारी अफसरों की संख्या १० से अधिक नहीं हो सकती थी। शेष सात सदस्यों की नियुक्ति इस प्रकार होती थी:—प्रदेश भर के शहरों कसबों की मुनिसिपलटियां दो सदस्यो को चुनती थीं; डिस्ट्रिक्ट बोर्डों को दो सदस्य, तथा कलकत्ता कारपोरेशन, चेम्बर आफ कामर्स (बणिक सभा) तथा कलकत्ता विश्वविद्यालय—तीनों को एक एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार था। प्रतिनिधि चुनने के लिये कमिश्नरी भर की मुनिसिपलटियों और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों का एक एक समूह बना दिया गया था। इसतरह बंगाल प्रदेश में कमिश्नरियों के अनुसार मुनिसिपल

और बोर्ड के आठ आठ समूह हो गये थे। जब निर्वाचन का समय आता था तब दो समूह मिल कर एक प्रतिनिधि भेजते थे, इस तरह पहिली बार चार समूहों के प्रतिनिधि सभा में बैठते थे, दूसरी बार शेष चार समूहों के। ये प्रतिनिधि दो वर्षों तक सभा में रहते थे, इस तरह आठ वर्ष में प्रत्येक समूह को प्रतिनिधि भेजने का अवसर मिलता था।

नये नियम के अनुसार भारतीय वणिकों में से भी एक प्रतिनिधि बहाल किये जांयगे। आसाम और बिहार को चाय और नील के इलाकों के निकल जाने से चायवाले तथा निलहे साहबों के प्रतिनिधियों की संख्या घटा कर एक कर दी गई है, यह प्रतिनिधि भी चाय बागान के मनेजरों द्वारा चुना जाता है। पाट-वालों के प्रतिनिधि का, जिनको नारायणगंज की वणिक सभा चुनती थी, स्थान उठ गया, अब उनकी जगह पर कलकत्ता और चटगांव के बाहर के युरोपियन वणिकों में से किसी एक को सरकार बहाल करेगी।

प्रत्येक कमिश्नरी को (१) म्युनिसिपलटियों, (२) डिस्ट्रिक्ट बोर्डों, (३) मुसलमानों, (४) और जमीन्दारों को एक एक प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया गया है। परन्तु प्रेसिडेन्सी और वर्द्धवान कमिश्नरियों का अधिक महत्व रहने के कारण इन्हें बारी बारी से एक

अतिरिक्त प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया गया है; और क्योंकि चाटगांव कमिश्नरी के जमीन्दारों और म्युनिसिपलटियों का महत्व कम है, इस कारण ये बारी बारी से एक ही प्रतिनिधि चुनती हैं।

ऊपर जिन निर्वाचित प्रतिनिधियों का वर्णन किया गया है उनके अतिरिक्त भी कलकत्ता शहर को एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है। कलकत्ते के कारपोरेशन और विश्वविद्यालय से और भी दो प्रतिनिधि जाते हैं।

पुराने कौन्सिल में चुने गये सदस्यों की संख्या २६ थी, परन्तु अब २८ है; पहले अधिक से अधिक १७ सरकारी सदस्य बहाल हो सकते थे, परन्तु अब सिर्फ १६। इसके अतिरिक्त दो गैरसरकारी सज्जनों को भी गवरनर नियुक्त कर सकते हैं।

इन चुने गये तथा बहाल किये गये ४८ सदस्यों के अतिरिक्त दो सरकारी वा गैर सरकारी विशेषज्ञों को भी बहाल करने का प्रबन्ध किया गया है, इनका काम भावी वा स्थगित कानूनों के बनाने में सहायता देना है। *

प्रान्तीय शासकों को, चाहे गवरनर हों या छोटे लाट, अपनी व्यवस्थापक सभा में प्रश्न पूछने वा बजट

* Vide Ilbert's Coronation Darbar and its Consequence.

पर बहस करने के नियमों को बनाने का अधिकार है, हां, उन्हें बड़ेलाट की सभा में प्रचलित नियमों को अवश्य मानना पड़ेगा। बजट पर बहस करने तथा प्रश्न पूछने का अधिकार बर्म्मा और पंजाब को छोड़ सब प्रान्तीय व्यवस्थापक सभाओं को दिया गया था।

अब यह स्पष्ट हो गया होगा कि "बड़ेलाट १ ली एप्रिल १९१२ से बंगाल के फोर्ट विलियम प्रेसिडेन्सी के गवरनर नहीं रहे, और बंगाल का नया इलाका एक प्रेसिडेन्सी बनाकर गवरनर के हाथ सौंपा गया। १९१२ के गवर्नमेंट आफ इंडिया ऐक्ट से बंगाल के गवरनर और कौन्सिल का पद मद्रास और बम्बई के गवरनरों और कौन्सिलों के बराबर हो गया, ये सब प्रायः एकही कानून के अधीन हो गये। १९०९ में शासकसभा के संगठन के लिये जो कानून बना था उसका १९१२ के कानून से बिहार में प्रयोग किया गया। उसके अनुसार पहली अगस्त १९१२ से बिहार उड़ीसा में एक शासक सभा बनी, जिसका संगठन १९१० वाली बंगाल की शासकसभा के अनुसार ही हुआ। इसमें आजकल तीन सदस्य हैं।" *

---

* Vide The Fifth Decennial Report, ch. IV.

चतुर्थ अध्याय।

निम्न शासक-वर्ग।

देशका पुनर्विभाग—कानूनी और गैरकानूनी इलाके—जिले—जिला कलक्टर और मजिस्ट्रेट—प्रादेशिक पुलिस—फौजी पुलिस—गांव की पुलिस—रेलवे पुलिस—बदमाशों का पत लगानेवाला विभाग—स्थानीय स्वायत्तशासन—प्रेसिडेन्सी शहरों की म्युनिसिपलटियां—उनके संगठन, अधिकार और आय के मद—कलकत्ता कारपोरेशन—जिला बोर्ड—सब-डिस्ट्रिक्ट बोर्ड—उनके संगठन, अधिकार और आय के मद।

भारत सरकार और प्रान्तीय सरकारों द्वारा जिस प्रकार शासन प्रबन्ध हुआ करता है उसका वर्णन किया जाचुका है; उनसे जो व्यवस्थापक सभायें संलग्न हैं साथ साथ उनका भी वर्णन किया गया है। निम्न-वर्ग के शासकों का वर्णन करने से शासन प्रणाली का वर्णन सम्पूर्ण हो जायगा। पहले प्रदेश-विभाजन के विषय में कुछ कहना आवश्यक होगा।

भारतवर्ष के प्रदेशों को कानूनी और गैर कानूनी इलाकों में बांटना एक पुरानी चाल है। कम्पनी को जो सनद मिलती थी उसके अनुसार सकौन्सिल बड़ेलाट नियम (रेगुलेशन) बनाते थे, इन नियमों का जिन प्रदेशों

में प्रयोग होता था वे 'कानूनी' समझे जाते थे। जिन प्रदेशों का शासन उपर कहे गये नियमों से नहीं होकर सकौन्सिल बड़ेलाट के आदेश से हुआ करता था वे प्रदेश गैर-कानूनी समझे जाते थे। इन दोनों प्रकार के इलाकों में दो प्रकार के प्रभेद थे कानून तो भिन्न भिन्न थे ही, साथ साथ वहां के शासकों में भी प्रभेद था। अब ये प्रभेद प्रायः उठ से गये हैं, परन्तु उनके चिन्ह शासकों के नाम—जिसका उदाहरण नीचे दिया गया है—और योग्यता में पाये जाते हैं। महाराणी विक्टोरिया के शासनकाल के २४ वें २५ वें वर्ष के कानून नं० ५४ (24 & 25 Vict. c. 54) के अनुसार जो सब पद सिविल सर्विस के कर्मचारियों के लिये अलग रखे गये हैं वे गैर-कानूनी इलाकों के लिये नहीं हैं। मद्रास बम्बई (सिन्ध को छोड़) बंगाल और आगरा प्रान्त पुराने 'कानूनी' इलाके हैं। गैर-कानूनी इलाकों में पंजाब, बर्म्मा, अवध, मध्यप्रदेश और आसाम को गिनती थी। परन्तु अब अवध युक्तप्रदेश का अंश है, और आसाम जो कुछ दिनों तक पूर्व बंगाल के कानूनी इलाके के शामिल था, अब फिर से अलग कर एक चीफ्कमिश्नर के अधीन रक्खा गया है, इसे निज की व्यवस्थापक सभा है। अब ये सब इलाके गैर-कानूनी नहीं रहे।

प्रदेश क्या है मानों बहुत से जिलों का समूह है। ये जिले भी सब-डिविजन और सर्किलों में बंटे रहते हैं।

सम्पूर्ण ब्रिटिश भारत के लिये जिला ही शासन का प्रधान केन्द्र है; प्रत्येक जिले में एक बड़ा अफ्सर रहता है जो कानूनी इलाकों में कलक्टर—मजिस्ट्रेट कहलाता है और गैर-कानूनी इलाकों में डिप्टी—कमिश्नर के नाम से पुकारा जाता है। ब्रिटिश भारत में प्रायः २६७ जिले हैं। एक जिले का औसत क्षेत्रफल ४००० वर्गमील होगा, और मनुष्यसंख्या लगभग ८ लाख होगी। "कोई कोई जिले ऐसे हैं जिनका क्षेत्रफल और मनुष्य संख्या इससे कहीं अधिक है। उदाहरणतः पूर्वबंगाल के मैमनसिंह जिले की आबादी ४५ लाख से अधिक और क्षेत्रफल ६३४७ वर्ग-मील है। *

जिला मजिस्ट्रेट अर्थात् जिले का कलक्टर और मजिस्ट्रेट पुलिस का भी सरदार होता है, यह शासन विभाग का एक प्रधान अङ्ग है। जिन नियमों के अनुसार पुलिस का प्रबन्ध होता है, वे नियम प्रत्येक प्रान्त में भिन्न २ हैं, परन्तु सम्पूर्ण भारत की पुलिस का संगठन १८६१ के कानून के अनुसार हुआ है; पुलिस को किस तरह काम करना पड़ता है उसका नियम फौजदारी दण्डविधान में दिया हुआ है। भारत सरकार ने हालमें एक कमिशन बैठाया था जिसने पुलिस विभाग के पुनर्गठन की सलाह दी थी।

---

* To Fifth Decennial Report, p. 62.

उस कमिशन की रिपोर्ट पर सरकार ने कुछ आदेश प्रकाशित किया है, परन्तु नये नियमों के अनुसार कोई कानून अब तक नहीं बना है।

प्रान्तीय सरकारों के अधीन जो पुलिस कर्मचारी हैं उनका प्रान्त भर के लिये एक स्वतन्त्र दल होता है। प्रान्तभर की पुलिस इन्सपेक्टर जेनरल के अधीन रहती है। प्रत्येक जिले की पुलिस का शासन भार, डिस्ट्रिक्ट-सुपरिन्-टेण्डेण्ट नामक अफ़सर पर रहता है। जिले भरके पुलिस कर्मचारियों के विनयानुशासन तथा पुलिस के भीतरी प्रबन्ध के लिये सुपरिन्टेण्डेण्ट दायी हैं, परन्तु जिले की शान्तिरक्षा और अपराधियों के पकड़ने और दण्ड देनेसे सम्बन्ध रखने-वाली बातों में जिला मजिस्ट्रेट के अधीन हैं। पुलिस के कामों के लिये प्रत्येक जिले को कई भागों में बांटकर प्रत्येक भाग को इन्सपेक्टर के अधीन कर दिया जाता है। बहुत से प्रान्तों में थानों से भी छोटे इलाके होते हैं जिन्हें फांड़ी (Outpost) कहते हैं। जिले के सदर में इन्सपेक्टर के अधीन कुछ 'रिजर्व' (कुमक) सिपाही रखे जाते है; जिले भरमें जब कहीं गोलमाल की आशंका होती है या कोई विशेष आवश्यकता पड़ती है तब ये सिपाही पुलिस को सहायता करते हैं।

बंगाल, आसाम और बर्मा की सीमा के उन इलाकों में जहां गोलमाल हुआ करता है, तथा पश्चिमोत्तर सीमा-

प्रान्त में, फौजी पुलिस का भी एक एक दल रक्खा जाता है।

प्रत्येक थाने के इलाके मे बहुत से गांव रहते हैं, और प्रत्येक गांव के लिये एक चौकीदार रहता है। चौकीदार का प्रधान काम जुर्मों का पता देना है, परन्तु उसे इसके अतिरिक्त भी बहुत सा काम करना पड़ता है। शहरों में थाने, फांड़ी और 'बोट' का प्रबन्ध रहता है, यहां रात को भी पहरा चौकी पड़ा करती है।

रेलवे पुलिस का संगठन जिले की पुलिस से स्वतन्त्र है, पर दोनों मिल जुल कर काम करती हैं। रेलवे पुलिस का काम शान्ति और कानून की रक्षा करना है, रेल कम्पनी की सम्पत्ति रक्षा करना उसका काम नहीं हैं, इसका प्रबन्ध तो कम्पनी करती है।

ठगी और डकैती विभाग जो बहुत दिनों से चला आता था १८०४ में उठा दिया गया। उसके स्थान पर "जुर्मों का पता देने वाला एक केन्द्रीय विभाग" कायम कर भारत सरकार के स्वराष्ट्र विभाग के अधीन रखा गया। इस विभाग का काम उन बदमाशों का पता लगाना है जो दल बांध कर रेल के किनारे किनारे जुर्म करते हैं; डोम, चमार, दुसाध जैसी जुर्म करने वाली जातियों, नटों के जैसे घूमनेवाले दलबंधे डकैती और उसी तरह के लोगों का जिनका काम प्रदेश

प्रदेश में चोरी डकैती करना हैं, पता लगाना भी इसी विभाग का काम है।

स्थानीय स्वायत्तशासन अब शासन विभाग का एक मुख्य अंग हो गया है। इसका प्रचार हाल ही में हुआ है। स्थानीय स्वायत्तशासन जिन संस्थाओं से होता है उसको दो प्रधान अंशों में—म्युनिसिपेलिटी और तरह तरह के डिस्ट्रिक बोर्डों में—बांट सकते हैं। प्रादेशिक कानूनों द्वारा ही इन संस्थाओं का संगठन हुआ है, इस कारण ये कानून प्रान्त प्रान्त में भिन्न हैं।

पहले म्युनिसिपल की बात लीजिये। १८७२, १८७३ और १८७८ के कानूनों से क्रमशः बम्बई, कलकत्ता और मन्द्रास रेट पेयरों (म्युनिसिपल टैक्स देनेवालों) के प्रतिनिधि निर्वाचन की प्रथा का पहले पहल आरम्भ हुआ। १८८१।२ में लार्ड रिपन की सरकार की आज्ञा से स्थानीय स्वायत्त-शासन के सिद्धान्तों के प्रचार में बड़ी सहायता मिली, शहर और दिहात के रहनेवालों को स्थानीय बातों के प्रबन्ध में पहले से अधिक महत्व के अधिकार मिले। निर्वाचन की प्रथा का अधिक प्रचार हुआ; अबतक जिन शहरों में सरकारी अफसर म्युनिसिपल के चेयरमैन (सभापति) का काम करता था वहां पर गैर सरकारी सज्जन को चेयरमैन बनाने का अधिकार देकर म्युनिसिपल कमिटियों को आगे से अधिक स्वतन्त्रता तथा अधिकार मिले।

म्युनिसिपल का शासन म्युनिसिपल कमिश्नरों के एक संयुक्त मंडल के हाथ रहता है; मद्रास और बम्बई में इन कमिश्नरों को 'म्युनिसिपल कौन्सिलर' के नाम से पुकारते हैं, अधिकांश म्युनिसिपलों में कुछ कमिश्नर प्रजा द्वारा निर्वाचित होते हैं, शेष प्रान्तीय सरकार द्वारा नियुक्त होते हैं। म्युनिसिपल का चेयरमैन (सभापति) कभी कभी प्रान्तीय सरकार की आज्ञा से नियुक्त होता है परन्तु बहुधा म्युनिसिपल कमिश्नर ही अपने में से किसी एक कमिश्नर को चयरमैन बनालेते हैं। जिला मजिस्ट्रेट और डिविजन के कमिश्नर द्वारा इन म्युनिसिपलों के कामों की आलोचना होती है। यदि म्युनिसिपल कमिश्नर कोई काम भलीभांति न करें तो स्वयं सरकार उसका प्रबन्ध कर सकती हैं; यदि ये कमिश्नर अपने काम के अयोग्य ठहरें, या काम न करें या अपने अधिकार का बुरा प्रयोग करें तो सरकार उनके अधिकार छीन ले सकती है। म्युनिसिपल के आय-व्यय और नौकरों की नियुक्ति पर सरकार की विशेष दृष्टि रहती है।

म्युनिसिपल जिन कामों को करती है उन्हें सर्वसाधारण की रक्षा, स्वास्थ्य, सुविधा और शिक्षा नामक विभागों में बांट सकते हैं। प्रत्येक विभाग के कार्य बहुत और रंग बिरंग के हैं। इन कामों को भलीभांति कर सकने के लिये म्युनिसिपल ऐक्ट और उनके बाई-ला से बहुत से

अधिकार म्युनिसिपलों को दिये गये हैं। म्युनिसिपल की आमदनी चुंगी, मकान और जमीन के टैक्स, गाड़ी और जानवरों के टैक्स, पेशेवालों और व्यापारियों पर बैठाये गये टैक्स से होती है। इनके अतिरिक्त सड़कों और घाटों पर महसूल लगाया जाता है; पानी, रोशनी और कूड़ा कचरा साफ करने के लिये भी टैक्स बैठाया जाता है।

कलकत्ता कारपोरेशन के कमिश्नरों की संख्या ५० है; इनमें से २५ तो २५ वार्डों से चुने जाते हैं और शेष २५ नीचे लिखे अनुसार नियुक्त किये जाते हैं:—१५ को प्रान्तीय सरकार नियुक्त करती है, कलकत्ते की वणिक सभा (Chamber of Commerce) ४ और व्यवसायियों की सभा (Trades Association) ४ और पोर्टकमिश्नर २ सदस्य चुन लेते हैं। कारपोरेशन का शासन तीन प्रकार के अधिकारियों में बंटा है—कारपोरेशन, चेयरमैन; और १२ कमिश्नरों की एक कमिटी जिसे 'जेनरल कमिटी' कहते हैं। प्रान्तीय सरकार चेयरमैन को नियुक्त करती है। वही कारपोरेशन का प्रधान शासक है, वही कारपोरेशन की सभा का सभापति भी बनता है। सरकार ने बम्बई, मद्रास और कलकत्ते की म्युनिसिपैलिटियों के आय-व्यय और शासन विषयक कुछ अधिकार अपने हाथ रखा है। सरकार इस बात पर

विचार कर रही है कि किस प्रकार कानून का परिवर्त्तन कर निर्वाचन की प्रथा का विस्तार किया जा सकता है। बंगाल कौन्सिल में इस विषय का कानून शीघ्र ही बनने वाला है। जब कारपोरेशन का पुनर्गठन होगा तब, आशा की जाती है कि, कलकत्ता विश्वविद्यालय के एक प्रतिनिधि को भी वहां स्थान मिलेगा, निर्वाचित कमिश्नरों की संख्या बढ़ेगी, और चेयरमैन को सरकार नहीं नियुक्त कर म्युनिसिपल कमिश्नर ही चुन सकेंगे।

लार्ड रिपन की जिस आज्ञा का प्रचार १८८१-८२ में हुआ था उसके अनुसार स्थानीय कार्यों के सम्पादन के लिये देश भर में बोर्ड की सृष्टि हुई थी। इस आज्ञा में जिस ढंग के बोर्डों की सूचना दी गई थी मद्रास के बोर्ड प्रायः उसी से मिलते जुलते हैं, यहां तीन श्रेणी के बोर्ड हैं। प्राय सम्पूर्ण प्रेसिडेन्सी में बड़े बड़े गांवों, वा कई छोटे छोटे गांवों को मिला कर एक 'युनियन' बना दिया गया है, प्रत्येक का प्रबन्ध 'पंचायत' के द्वारा हुआ करता है। ये पंचायतें, सफाई इत्यादि स्वास्थ्य सम्बन्धी कामों के लिये घर पीछे कुछ हलका सा टैक्स बैठाती हैं। इन पंचायतों के उपर एक दूसरी श्रेणी के बोर्ड हैं, जिन्हें बहुत से इलाकों में "तालूक बोर्ड" भी कहते हैं। शासन सम्बन्धी प्रबन्ध के लिये जिलों को सब-डिविजन वा तालूक में बांट दिया जाता

है, ये तालूक बोर्ड उन्हीं सब-डिविजन वा तालूक से सम्बन्ध रखते हैं। सबके उपर जिला बोर्ड का स्थान है, जो जिले भर के बोर्ड सम्बन्धी कार्यों का निरीक्षण करता है। कानून की आज्ञा है कि बंगाल और कई प्रदेशों में प्रत्येक जिले में एक जिला बोर्ड का संगठन हो, परन्तु जिले के सब-डिविजन वा तालूक के लिये 'लोकल बोर्ड' का संगठन करना या न करना प्रान्तीय सरकार की मरजी पर है। बंगाल के ३४ जिलों में 'लोकल बोर्ड' की स्थापना हुई है। बंगाल के कानून में "गांवों की पंचायत" स्थापित करने का भी आदेश है, परन्तु इसका पूरा उपयोग नहीं हुआ है।

डिस्ट्रिक्ट बोर्डों में निर्वाचन की प्रथा का प्रचार सब प्रदेश में बराबर नहीं है। बंगाल के जिन जिलों में लोकल बोर्ड का संगठन हुआ है, वहां के लोकल बोर्डों को जिला बोर्ड में कमसे कम आधे सदस्यों को चुनने का अधिकार है। अच्छे जिलों में लोकल बोर्ड के $\frac{२}{३}$ मेम्बर चुने जाते हैं; कुछ कुछ जिलों में सबके सब सरकार द्वारा ही नियुक्त होते हैं। जिला बोर्ड का सभापति चुना जायगा वा सरकार द्वारा नियुक्त किया जायगा—इसका निश्चय प्रान्तीय सरकार करती है। किसी प्रान्त में जिला बोर्ड का चेयरमैन निर्वाचित नहीं होता है, साधारणतः यह पद मजिस्ट्रेट को ही दिया जाता है।

जिले भर में जाने आने के लिये सड़कों, नदियों को ठिकाने से रखना और उसका संभार करना ही बोर्ड का प्रधान काम है। दूसरे महत्व के काम ये हैं :— अस्पतालों और दवाखानों का प्रबन्ध करना; पानी के निकास और अच्छे जल का प्रबन्ध करना; स्वास्थ रक्षा शिक्षा (विशेष कर प्राथमिक) का इन्तजाम करना; बाजार हाट चलाना और बनाना; और अकाल के समय पीड़ितों की सहायता करना इत्यादि।

बोर्डों की आय का प्रधान मद 'प्रोविन्शियल रेट' है। प्रान्तीय सरकार भी कुछ कुछ देती है; तथा पशु अवरोधालय (कानी हौस"; "फाटक") और घाट की आमदनी (खेवा) तथा स्कूल पाठशालाओं की फीस से भी कुछ आमदनी होती है।

पञ्चम अध्याय।

विचार विभाग।

हाइकोर्ट—उनकी व्याप्ति—कौन हाइकोर्ट का जज हो सकता है—चीफकोर्ट—छोटी दीवानी अदालतें—फौजदारी आदालत—उनकी श्रेणियां—उनके अधिकार—जूरी और असेसर—अभयदान का विशेष अधिकार—प्रिवी कौन्सिल की जुडिशियल कमिटी।

भारत में हाइकोर्ट और चीफ कोर्ट ही सब से बड़े विचारालय हैं। १८६१ में भारतीय हाइकोर्ट के सम्बन्ध में पार्लिमेंट में जो कानून बना था उससे सम्राट को कलकत्ते, मद्रास और बम्बई में हाईकोर्ट स्थापित करने का अधिकार मिला था। इनके विचारपति सम्राट द्वारा नियुक्त होते थे और सम्राट की मरजी के मुताबिक जब तक चाहें काम कर सकते थे। हाइकोर्ट का विचारपति वही हो सकता है जो या तो इंगलैण्ड, आयरलैण्ड या स्काटलैंड का वकील वारिस्टर हो और कम से कम पांच वर्षों तक वकालत या वारिस्टरी कर चुका हो; अथवा जो भारतीय सिविल सार्विस का दस वर्ष का पुराना कर्मचारी हो और कमसे कम तीन

वर्षों तक जिला जज का काम कर चुका हो; अथवा वह पुरुष जो सदराला वा छोटी अदालत के जज के पद पर हो; अथवा जिसने हाइकोर्ट में कम से कम दस वर्षों तक वकालत की हो। प्रत्येक हाइकोर्ट में प्रधान विचारपति (चीफ जस्टिस) के अतिरिक्त अधिक से अधिक १५ जज रह सकते थे, कब कहां कितने जज रहेंगे इसका निश्चय स्वयं सम्राट करेंगे।* जजों में से कम से कम एक तिहाई, इसमें प्रधान विचारपति भी शामिल हैं, अवश्य ही विलायत के बारिस्टर वा वकील होंगे; और कम से कम एकतिहाई सिविल सर्विस वाले होंगे। प्रत्येक हाइकोर्ट को अपने अधीन की अदालतों के निरीक्षण तथा शासन का अधिकार रहेगा, इन अदालतों में किसतरह काम होगा इसके लिये कानून बनाने की भी क्षमता हाइकोर्ट को रहेगी परन्तु इसमें सकौन्सिल बड़ेलाट की अनुमति लेनी पड़ेगी।

---

* परन्तु काम बढ़ जाने से १५ जजों से काम न चलने लगा। इस कारण १९११ से कानून द्वारा (The Indian High Court Act) निश्चय हुआ है कि आवश्यक होने पर चीफ जस्टिस समेत जजों की संख्या २० तक बढ़ सकती है। जरूरत होने पर नया हाइकोर्ट भी खुल सकता है। अनुवादक।

इन्हीं कानूनों के अनुसार कलकत्ता, बम्बई और मद्रास के हाइकोर्टों के संगठन के लिये १८६२ और १८६५ में सनद दिये गये; उसी प्रकार सनद देकर प्रयाग का हाइकोर्ट १८६६ ई० में बनाया गया। कलकत्ते के हाइकोर्ट की व्याप्ति बंगाल, बिहार, उड़ीसा और आसाम तक है।* दीवानी मुकद्दमों में उसके अधिकार नीचे लिखे अनुसार हैं :—

(१) कलकत्ते के प्रेसिडेन्सी शहर की सीमा के भीतर के छोटे छोटे मुकद्दमों को छोड़ सब मुकद्दमों का आरम्भ हाइकोर्ट में (Original Side) हो सकता है।

(२) अवस्था विशेष में आवश्यकता होने पर नीचे की अदालतों से भी मुकद्दमें उठा कर हाइकोर्ट (ओरिजिनल साइड) में लाये जा सकते है।

(३) जिला जज और कभी कभी सब-जज (सदराला) के फैसले की अपील भी हाइकोर्ट में होती है।

(४) बच्चे, जन्म के पागल या अन्य पागलों के शरीर और सम्पत्ति के प्रबन्ध इत्यादि विषय का अधिकार हाइकोर्ट को है।

---

* अब तो बिहार, उड़ीसा के लिये अलग हाइकोर्ट मार्च १९१६, से खुल गया। अनुवादक।

(५) दीवालियों को रक्षा का अधिकार भी हाइकोर्ट को है।

(६) सामुद्रिक (जहाज इत्यादि से सम्बन्ध रखनेवाले), धर्मसम्बन्धी, तथा वैसी जायदाद जिसका वसीयत हुआ है तथा जिसका वसीयत नहीं हुआ है इन सब से सम्बन्ध रखनेवाले मुकद्दमें हाइकोर्ट में होते हैं।

(६) सरकार की क़ुस्तान प्रजा के विवाह सम्बन्धी मुकद्दमें।

हाइकोर्ट में जिस प्रकार के फौजदारी मुकद्दमें होते हैं उनका वर्णन यों किया जा सकता है :—

(१) प्रेसिडेन्सी मजिस्ट्रेट जिन मुकद्दमों को दौरा सुपुर्द करते हैं उनका विचार ओरिजिनल साइड में होता है।

(२) यहां हमेशे जूरी की सहायता से विचार होता है।

अवस्था विशेष में कुछ ऐसे फौजदारी मुकद्दमों का भी विचार हाइकोर्ट के ओरिजिनल साइड में हो सकता है जो प्रेसिडेन्सी शहर की सीमा के बाहर के हैं।

(३) हाइकोर्ट में निम्नवर्ग की अदालतों के फैसले की अपील हो सकती है। वे हाइकोर्ट की सलाह ले सकती हैं, हाइकोर्ट उन के किये काम को फिर से दुहरा सकता है।

बम्बई और मद्रास के हाइकोर्टों को कलकत्ते के बराबर ही अधिकार हैं। इलाहाबाद के हाइकोर्ट में साधारणतः ओरिजिनल साइड नहीं है (अर्थात् वहां केवल अपील के ही मुकद्दमें दायर हो सकते हैं)। परन्तु यदि किसी युरोपियन ब्रिटिश प्रजा पर फौजदारी कायम हुई हो तो उसका मुकद्दमा हाइकोर्ट में ओरिजिनल साइड में ही होगा। बिहार और उड़ीसा के लिये इसी प्रकार का एक हाइकोर्ट खुलने वाला है। (अब खुल गया।)

दो चीफ कोर्ट हैं—एक पंजाब के लिये और दूसरा बर्म्मा के लिये। पंजाब का चीफकोर्ट १८६६ में लाहोर में खुला था और बर्म्मा का १९०० में रंगून में। ये हाइकोर्ट के ढांचे पर बने हैं, परन्तु उनके जो अधिकार हैं वे सब भारत की व्यवस्थापक सभाओं के दिये हैं; इन अदालतों के चीफ जज सकौन्सिल बड़ेलाट द्वारा ही नियुक्त होते हैं। शेष प्रान्तों में हाइकोर्ट वा चीफ कोर्ट की जगह में एक या अधिक जुडिशियल कमिश्नर रहते हैं जिन्हें भारत सरकार नियुक्त करती है।

प्रत्येक प्रान्त की छोटी छोटी दीवानी आदालतों का संगठन और उनकी व्याप्ति (Jurisdiction) का निर्णय विशेष कानूनों वा रेगुलेशनों से हुआ है। बंगाल, बिहार, उड़ीसा, आसाम और युक्तप्रदेश में नीचे लिखे अनुसार दीवानी अदालतें पाई जाती हैं:—(१) जिला जज (२)

अडिशनल (अतिरिक्त) जज, (३) सब-जज (सदराला), (४) मुन्सिफ की अदालतें। नः १, २, ३ की अदालतों में वैसे सब प्रकार के मुकद्दमें दायर हो सकते हैं जो दीवानी कानूनों में लिखे हैं। मुन्सिफ की अदालत में साधारणतः १००० रु० तथा कभी कभी २००० रु० तकके मुकद्दमें लिये जाते हैं। प्रेसिडेन्सी शहरी तथा मुफस्सिल में छोटे छोटे मुकद्दमों के लिये 'स्मालकोर्ट' (छोटी अदालत) हैं।

साधारणतः प्रत्येक जिले में एक जिला और दौरा जज रहा करता है। उसे ओरिजिनल और अपील के मुकद्दमों के विचार करने के अतिरिक्त मातहत की अदालतों के शासन तथा उनमें विचार के लिये मुकद्दमों के बांटने का भी अधिकार है। इस पद के लिये सिविल सर्विस या प्रान्तीय जुडिशियल सर्विस के कर्मचारी ही चुने जाते हैं। लाट इसलिंगटन के सभापतित्व में जिस 'पवलिक सर्विस कमिशन' ने १९१२-१३ में भारत का दौरा किया था वह कमिशन विचार तथा अन्य विभागों के विषय में बहुत सी महत्व पूर्ण बातों का विचार कर रहा है।

फौजदारी मुकद्दमों के लिये हाइकोर्ट के अधीन जो सब अदालते हैं उनका वर्णन इस प्रकार है :—प्रत्येक प्रदेश विभागों या जिलों में बांट दिया गया है, प्रत्येक विभाग में एक दौरा कचहरी है जिसका अध्यक्ष दौरा जज होता

है।* जरूरत पड़ने पर अडिशनल, ज्वायराट और असिसटंट दौरा जज भी बहाल किये जा सकते हैं। प्रत्येक जिले में एक जिला मजिस्ट्रेट भी रहता है। जितने सहायक मजिस्ट्रेटों की अवश्यकता होती है उतने सहायक मजिस्ट्रेट प्रत्येक जिले में बहाल कर लिये जाते है; और जिला मजिस्ट्रेट की निगरानी में रहते हैं। ज्वायंट मजिस्ट्रेट, असिसटंट मजिस्ट्रेट, डिप्टी मजिस्ट्रेट, सब-डिप्टी मजिस्ट्रेट—सहायक मजिस्ट्रेट कहलाते हैं। कलकत्ते, बम्बई और मद्रास के प्रसिडेन्सी शहरों में ये प्रेसिडेन्सी मजिस्ट्रेट के नाम से पुकारे जाते हैं। कौन मजिस्ट्रेट कैसा मुकद्दमा देख सकता है और कितनी सजा दे सकता है इसके लिये उन्हें तीन श्रेणियों में विभक्त कर दिया गया है, जैसे पहले दर्जे का मजिस्ट्रेट, दूसरे दर्जे का, तथा तीसरे दर्जे का।

पीनल कोड (दराड विधान) वा अन्य कानून में जिस प्रकार की सजा का उल्लेख है हाइकोर्ट वह सब सजा दे सकता है। दौरा जज भी सब प्रकार की सजा दे सकता है, परन्तु प्राणदण्ड के लिये उस हाइकोर्ट की अनुमति लेनी पड़ती है। प्रान्तीय सरकार की

---

* कभी कभी एक दौरा जज एक से अधिक जिलों का अध्यक्ष होता है। अनुवादक।

जहां जैसी आज्ञा है वहां दौरा जज के इजलास में असेसर वा जूरी की सहायता से विचार होता है, परन्तु असेसर की राय मानने को जज वाध्य नहीं है। दौरा जज यदि यह समझे कि जूरी की राय ठीक नहीं है तब वह उस मुकद्दमें को हाइकोर्ट में विचार के लिये भेज सकता है। हाइकोर्ट उनकी राय को बदल या घटा बढ़ा सकता है। हाइकोर्ट में जब विचार होता है तब ८ आदमियों की जूरी बैठती है, और दौरा अदालत में जूरी की संख्या प्रान्तीय सरकार निश्चय करती है, यह संख्या ८ से अधिक नहीं हो सकती और हमेशे विसम रहती है। हाइकोर्ट की जूरी एक मत हो कर जो राय देती है वही वहाल रहती है, जज का मतभेद हो तौभी कोई हर्ज नहीं।

भारतवर्ष में अपराधियों को क्षमा दान का विशेष अधिकार सकौन्सिल बड़ेलाट और प्रान्तीय सरकार दोनो को है, परन्तु इससे सम्राट की क्षमता का ह्रास नहीं होता है, वह भी चाहें तो क्षमादान कर सकते हैं।

सम्राट को समुद्र पार बसनेवाली प्रजा की अपील सुनने का विशेष अधिकार आरम्भ से ही है। परन्तु इसमें पार्लिमेंट के कानूनों और नियमों से कुछ व्याघात पहुचा है। १८३३ के कानून से, प्रिवीकौन्सिल की जुडिशियल कमिटी सम्राट की इस विशेष क्षमता का प्रयोग करती

है। योंतो सम्राट किसी विषय पर प्रिवी कौन्सिल की सलाह ले सकते हैं परन्तु इसके अलावे भी भारत के मुकद्दमों की अपील हो सकती है, इसमें हाइकोर्ट की सनद, और दीवानी मुकद्दमों में जाब्ता दीवानी और प्रिवी कौन्सिल के नियमों के अनुसार कार्य हो सकता है। फौजदारी मुकद्दमों की अपील तभी हो सकती है जब कि हाइकोर्ट के विचार में वह फौजदारी मुकद्दमा कौन्सिल के सामने भेजने लायक होता है। हाइकोर्ट के ओरिजिनल विभाग में जिन फौजदारी मुकद्दमों का फैसला हुआ है, अथवा वैसे मुकद्दमें जिनमें किसी कानूनी विषय में हाइकोर्ट की विशेष राय की जरूरत हुई थी—वैसे मुकद्दमों की अपील प्रिवी कौन्सिल में हो सकती है। यदि जुडिशियल कमिटी उचित समझे तो वैसे मुकद्दमों की अपील की भी आज्ञा दे सकती है जिनका उपर कहे गये नियमों में उल्लेख नही है।

षष्ठ अध्याय।

राजस्व और आयव्यय।

लगान टैक्स नहीं है—बन्दोबस्त के भिन्न भिन्न प्रकार—स्थायी, जमीन्दारी वा तालूकदारी और रैयतवारी—इनका बोझ किनपर पड़ता है—टैक्स को छोड़ कर आमदनी के दूसरे दूसरे मद—लगान—अफीम—जंगल—खिराज—डाक, तार, रेल, नहर इत्यादि। टैक्स—नमक—आबकारी—कस्टम—स्टाम्प—प्रोभिन्शियल सेस—इन्कम टैक्स—रजिस्ट्रेशन फीस। खर्च के प्रधान प्रधान मद—सिविल विभाग—सिविल विभाग के फुटकर खर्च—डाक, तार और टकसाल—नहर—सरकारी मकानात—जातीय ऋण का सूद—सैनिक खर्च—असाधारण व्यय—होम चार्ज का स्वरूप—भारत के आय-व्यय का शासन—पृथक्करण—रेवेन्युबोर्ड।

———o———

भारत सरकार की कुछ आमदनी तो टैक्स से आती है और कुछ दूसरे दूसरे मदों से। भूमिकर से ही सब से अधिक आमदनी होती है। बहुत से विज्ञ अंगरेज लेखकों की राय है कि भूमिकर को यथार्थ में टैक्स नहीं कह सकते हैं। सर जान स्ट्राची कहते हैं कि बहुत पुराने समय से हिन्दुस्तान भर में राजाओं को जमीन की उपज का कुछ अंश ले लेने का अधिकार रहा है, यही अंश अब भूमिकर के नाम से विख्यात

है ; हां, यदि राजा चाहें तो अपने अधिकार को दूसरे के हाथ बेच वा हस्तान्तरित कर सकते हैं। जे. एस. मिल लिखते हैं कि भारत सरकार की आमदनी का ज्यादे से ज्यादा हिस्सा बिना टैक्स बैठाये ही वसूल होता है, क्योंकि सरकार उपजके केवल उस अंश को सर्वसाधारण के कामों के लिये ले लेती है जो अंश, यदि सरकार के यहां नहीं आया तो व्यक्ति विशेष को अपने खर्च के लिये मिल जायगा ; अर्थात् सरकार उपज का वही अंश लगान में वसूल करती है जो अंश अन्यथा जमीन्दारों को मालगुजारी कह कर दिया जाता।

एक दूसरे लेखक ने कहा है कि लगान आधुनिक भारत सरकार की आय का वह अंश है जो देश की पुरानी प्रथा पर अवलम्बित है। ज्यों ज्यों एक प्रदेश के बाद दूसरा प्रदेश ब्रिटिश सरकार के अधीन आता गया त्यों त्यों मुगलों की जमीन बन्दोबस्त की प्रथा का प्रबन्ध पक्का होता गया। "भारत सरकार का इतिहास मानों टैक्स कम करने का क्रमागत इतिहास है।"

लगान का बन्दोबस्त दो प्रशस्त विभागों में बांटा जा सकता है :—चिरस्थायी बन्दोबस्त और अस्थायी बन्दोबस्त। अस्थायी दो प्रकार का होता है—जमीन्दारी (इसे कहीं कहीं मालगुजारी या तालूकदारी भी कहते हैं), और रैयतवारी।

लगान का चिरस्थायी बन्दोबस्त १७८३ ई० में बंगाल में आरम्भ हुआ था। सरकार ने देखा कि बंगाल में मध्यवित्त के कुछ ऐसे लोग (जमीन्दार) हैं जो सरकारी लगाग और टैक्स वसूल करते हैं। सरकार ने इन्हीं जमीन्दारों को जमीन का मालिक जाहिर किया। लगान (अर्थात् जमीन की उपज का वह हिस्सा जो सरकार का होता था) का निश्चय कर दिया गया, और वही सब दिन के लिये कायम रहा। दवामी बन्दोबस्त करने वालों का यह अभिप्राय था कि जमीन्दारों को जो लगान सरकार को देना पड़ेगा उसका तो निश्चय अवश्य ही हो जाय और उसके साथ रैयत को अपनी जोत जमीन पर कब्जा भी हो जाय और मालगुजारी की दर भी ठीक रह जाय (अर्थात् घटे बढ़े नहीं)। बंगाल (अर्थात् आजकल के बंगाल, बिहार, उड़ीसा और आसाम) के अधिकांश, युक्त प्रदेश और मद्रास के कुछ हिस्सों तथा जहां तहां कुछ और इलाकों में दवामी बन्दोवस्त का प्रचार है।

जहां जमीन्दारी बन्दोबस्त का प्रचार है वहां जमीन्दार या मालिकों के दल मिल कर सरकार का लगान वसूल करते हैं; यहां या तो लगान वसूल करने वाले जमीन्दार स्वयं जमीन आबाद करते हैं, या मालगुजारी देने वाले रैय्यतों के हाथ बन्दोबस्त करते हैं। इसमें गांव भर की जमाबन्दी एकसाथ रहती है, पृथक पृथक खेत या पट्टी

की नही। साधारणत: सरकार को खेतिहरों से सीधे कोई सम्बन्ध नहीं रहता। इस प्रकार का बन्दोवस्त युक्त-प्रदेश, पंजाब, मध्यप्रदेश और उड़ीसा में पाया जाता है। पंजाब और मध्यप्रदेश में यह बन्दोवस्त साधारणत: २० वर्षों के लिये और अन्यत्र ३० वर्षों के लिये होता है।

जहां रैयतवारी बन्दोबस्त है वहां रैयत को अपनी जोत जमीन पर स्वत्वाधिकार रहता है, उसे केवल निश्चित लगान भर सरकार को देना पड़ता है, यह लगान तीस वर्षों के लिये निश्चय कर दिया जाता है। जब कि नई फसल का दिन आता है तब प्रत्येक रैयत को अधिकार है कि अपनी जमीन को रखे या न रखे। यदि उसने अपने खर्च से जमीन की पैदावार की उन्नति की तब उसके लिये बन्दोवस्त करने के समय उस जमीन का लगान नहीं बढ़ाया जा सकता। वह सरकार की अनुमति विना अपनी जमीन बेच या बन्धक रख सकता है या किसी दूसरे के हाथ बन्दोबस्त कर सकता है; उसके मरने पर उत्तराधिकार के नियम के अनुसार उसको जमीन उसके बच्चों को मिलती है। वह कृषक अपनी जमीन का स्वामी है, और सरकार सीधे उसके हाथ बन्दोवस्त करती है। यह प्रथा बम्बई, बर्मा, आसाम, और बरार तथा अधिकांश मद्रास में पाई जाती है।

जहां जमीन्दारी प्रथा है वहां पर जमीन्दारों को जितनी

मालगुजारी मिलती है उसका आधा वा उससे भी कम सरकारी लगान में लिया जाता है। जहां रैयतवारी प्रथा है वहां पर जमीन की कुल उपज का (इसमें से खर्च बाद नहीं दिया जाता है) $\frac{१}{५}$ से $\frac{१}{२५}$ वां हिस्सा तक सरकारी लगान में दिया जाता है।

टैक्स से भिन्न जिन मदों से आमदनी होती है उसमें अफीम का नम्बर दूसरा है। अफीम से जो आमदनी है वह दो प्रकार से आती है,—एक तो सरकार को अफीम तैयार करने का एकाधिपत्य अधिकार है, और दूसरे जब देशी राज्यों का बना अफीम समुद्र की राह बाहर भेजा जाता है या जब ब्रिटिश राज्य में उसकी आमदनी होती है तब उस पर टैक्स बैठाया जाता है। यद्यपि अफीम (पोश्ते) की खेती प्रायः सम्पूर्ण ब्रिटिश भारत में हो सकती है, तथापि कुछ मामूली छोटी छोटी जगहों को छोड़ बंगाल और युक्तप्रदेश के कुछ हिस्सों में ही अफीम की खेती होने पाती है। एक खास सरकारी महकमें की निगरानी में ही इन दोनों इलाकों में अफीम की खेती होती है। किस साल कितने बीघे में अफीम की खेती होगी इसका निश्चय भी इसी महकमे से हुआ करता है। इन इलाकों में किसान को अफीम की खेती करने के लिये सरकार से लाइसेन्स लेनी पड़ती है। इस लाइसेन्स की फीस, और उपर कहे गये आमदनी रफ्तनी के कर से ही

विशेष कर सरकारी आमदनी होती है। परन्तु अब यह अफीम की आमदनी दिन पर दिन कमती जाती है क्योंकि चीन सरकार ने अफीम का व्यवहार और अफीम की आमदनी रोक दी है।

इसके बाद जंगलात का उल्लेख किया जा सकता है। जंगलात से जो आमदनी है वह लकड़ी और जंगल की अन्य पैदावार के बेचने से आती है। जब तक राज्य कम्पनी के हाथ था तब तक जंगल को बचाने का कोई उपाय नहीं किया गया था। ये जंगल बहुत ही विस्तृत और लाभ दायक हैं। ये सब मिलाकर प्रायः दो लाख वर्गमील में फैले हुए हैं। जंगल विभाग से इनका प्रबन्ध होता है।

देशी राज्यों के दिये कर और चन्दे से भी कुछ आमदनी होती है। देशी राज्यों ने सेना रखने या सेना से सहायता करने की जो पहले प्रतिज्ञा की थी उसी के बदले में अब कहीं कहीं रुपया दिया जाता है। भारत सरकार ने देश भर में शान्ति स्थापित करने का जो भार लिया है उसके बदले में जो यह सहायता दी जाती है वह कुछ भी नहीं है।

टैक्स को छोड़ और दूसरे दूसरे मदों से जो आमदनी होती है वह डाक, तार, रेल और नहर इत्यादि से आती है।

टैक्स से जो आय है उसके प्रधान मद ये है :—

(१) निमक—जितना निमक बाहर से आता है और जितना देश में बनता है सब पर टैक्स बैठाया जाता है।

पहले टैक्स की दर $\frac{१}{५}$ रु० (जैसा कि बर्म्मा में था) से लेकर ३॥० रु० फी मन (जैसा कि बंगाल मे था) तक थी। आज कल सर्वत्र एक रुपये मन है।* बर्म्मा में जो नमक बनता है उस पर अधिकांश आठ आने मन ही टैक्स बैठाया जाता है। धीरे धीरे जो टैक्स घटाया गया है उससे नमक की कटती भारत भर में बढ़ गई है। बाहर से तो नमक आता ही है, उसके अतिरिक्त भी राजपुताने के गड़हों और पंजाब की खानों से नमक निकलता है। जहां नमक बनता है वहां या जहां नमक बाहर से आता है वहां टैक्स बैठाया जाता है।

जहां नमक बनते हैं वैसे बहुत से स्थान स्वयं सरकार के हैं या सरकार की निगरानी में हैं, और शेष खास खास व्यक्तियों के हैं। अतएव यह नहीं कहा जा सकता कि केवल सरकार ही नमक बना या बेच सकती है, यहां पर विदेश से भी बे रोक टोक नमक आता है। जहां सर्वसाधारण को नमक बनाने देने से कर वसूल करना असम्भव होगा (जैसा कि बगाल में समुद्र के किनारे के इलाकों में होता है) वहां उन्हें नमक बनाने की आज्ञा नहीं है।

नमक पर का टैक्स ही एक ऐसा अनिवार्य टैक्स है जो सर्वसाधारण को भी देना पड़ता है।

---

* लड़ाई के कारण टैक्स बढ़ा कर १।० रु० मन कर दिया गया है। (१९१६) अनुवादक।

(२) आबकारी। यह आमदनी शराब, गांजा, भांग, कोकेन, अफीम पर बैठाये गये टैक्स से आती है। इस में बनाने वालों पर कर बैठाया जाता है और बेचने वालों को लाइसेन्स लेना पड़ता है। इसकी आमदनी दिन पर दिन बढ़ती जाती है इसके उत्तर में कहा जाता है कि आमदनी बढ़ने का कारण यह है कि आज कल आबकारी का इन्तजाम बहुत अच्छा होता है और लोगों को छिपकर शराब चुलाने या बेचने नहीं दिया जाता है, परन्तु बहुतों को इस जबाब से सन्तोष नहीं होता।

(३) कस्टमस। इसकी आमदनी तीन प्रकार से होती है—(क) बाहर से आनेवाले माल के दाम पर सैकड़े पांच रु० टैक्स लगाया जाता है। (ख) बाहर से आनेवाली शराब, प्रेट्रोलियम जैसी वस्तुओं पर विशेष 'कर' बैठाया जाता है। (ग) भारत से बाहर जानेवाले चावल और चावल के आंटे पर एक मन धान पर तीन आने को दर से टैक्स बैठाया जाता है। रुई के धागे और सूत पर, चाहे वे भारत के बने हों या विदेश से आये हों, कोई कर नहीं बैठाया जाता है। परन्तु सूत के बने कपड़ों पर, चाहे वे भारत की मिलों में बने हों या विदेश से आये हों, दाम के मुताबिक २॥० रू० सैकड़ा टैक्स लगाया जाता है। करघों में बने सूती माल पर यह टैक्स नहीं लगाया जाता। जिन चीजों को विदेशी सरकार मदद करती है

वैसी चीजें यदि भारत में विदेश से आयें तो उनपर टैक्स बैठाने का अधिकार भारत सरकार को है; चीनी पर का टैक्स इसका उदाहरण है।

स्टाम्प। यह आमदनी तमस्सुक, चेक, हुंडी, रसीद इत्यादि तिजारती कागजों पर जो टिकट लगाये जाते हैं उनसे होती है। कचहरियों में दाखिल करने के समय बयान तहरीर, अर्जी इत्यादि कागजों पर जो टिकट लगाये जाते हैं उनसे भी आय होती है।

(५) प्रोविन्शियल (प्रान्तीय) रेट या सेस। यह कर स्थानीय आवश्यकताओं के लिये जमीन पर बैठाया जाता है। यह 'सेस' सड़क, स्कूल, अस्पताल, नहर, गांवकी रक्षा, पटवारी इत्यादि में खर्च होता है।

(६) इन्कमटैक्स (आमदनी पर का टैक्स)। इसको प्रत्यक्ष कर कहते हैं, अर्थात् जिस पर यह टैक्स बैठाया जाता है वह स्वयं अपनी आमदनी में से यह टैक्स देता है। अप्रत्यक्ष कर उसे कहते हैं जो माल पर लगाया जाता है, जैसे नमक, शराब या सूतीमाल पर का टैक्स। अब जो आदमी इन वस्तुओं को खरीदता है वह टैक्स भी देता है, क्योंकि यदि इन वस्तुओं पर टैक्स नहीं लगाया गया होता तो ये चीजें सस्ती मिलतीं। यह टैक्स अप्रत्यक्ष टैक्स इसी लिये कहा जाता है कि खरीदने वाला स्वयं यह टैक्स

सरकार को वसूल नहीं कर (यह टैक्स इन वस्तुओं को बनाने वाला ही वसूल करता है) व्यापारियों को देता है। जो टैक्स व्यक्तियों पर है, वह प्रत्यक्ष टैक्स कहलता है, क्योंकि उन व्यक्तियों को ही स्वयं उसका रुपया वसूल करना पड़ता है। लाइसेन्स भी इसी प्रकार का प्रत्यक्ष कर है। इनकम टैक्स भी इसी प्रकार का प्रत्यक्ष कर है, क्योंकि यह टैक्स वह आदमी स्वयं देता है जिसे उतनी आमदनी होती है, या जो आदमी उसे उतने रुपये को तनखाह देता है वही टैक्स का रुपया उसकी तनखाह में से काटलेता है। नमक खरीदने वाला यह नहीं समझता कि वह नमक पर का टैक्स वसूल कर रहा है, इसी से इसे अप्रत्यक्ष कर कहते हैं।

यदि नौकरी से या पेन्शन से या कम्पनी कागज से सालाना २०००) रु० की आमदनी होती हो तो फी रुपये पांच पाई के हिसाब से इन्कम टैक्स देना पड़ेगा, यदि दो हजार से कम की आमदनी हो तो फी रुपये चार-पाईके हिसाब से टैक्स देना पड़ेगा। कम्पनियों को खर्च बाद देकर जो नफा होता है उस पर फी रुपये पांचपाई टैक्स देना पड़ता है। और दूसरे मदों से जो आमदनी होती है उस पर रकम के हिसाब से टैक्स लगाया जाता है। हजार रुपये से कम की आमदनी पर टैक्स नहीं लगाया जाता। खेती बारी से जो आमदनी या नफा होता

है उस पर यह टैक्स नहीं बैठाया जाता ; उसी तरह जिस फौजी अफसर को सालाना ६ हजार रू० से कम की आमदनी है उसे भी यह टैक्स नहीं देना पड़ता।

(७) दस्तावेज इत्यादि कागज पत्र रजिस्ट्री करने की फीस। इन से कम आमदनी होती है।

जिन मदों में सरकारी आय खर्च होती है उनमें से प्रधान मद ये है :—

(१) सिविल (मुल्की) विभाग। इससे (क) शासन (General Administration), (ख) विचार, (ग) पुलिस, (घ) मेरीन (सामुद्रिक) ; (च) शिक्षा, (छ) चिकित्सा, (ज) राजकीय, (झ) धर्मसम्बन्धी, (ट) तथा भारतीय सर्वे, बनस्पतिक और भूगर्भ विषय सर्वे, जल वायुके वेग की परीक्षा वाले तथा अन्य वैज्ञानिक, परीक्षा के लिये खेतीवाले, देशान्तर गमन करने वाले लोगों से सम्बन्ध रखने वाले इत्यादि बहुत से छोटे बड़े विभाग शामिल हैं।

उपर जिस जेनरल शासन का (General Administration) उल्लेख किया गया है उसमें डिविजन के कमिश्नर तक का खर्च शामिल है। इसमें भारत सचिव, हिन्दुस्तान में बड़ेलाट, गवरनर, छोटेलाट, कौन्सिल इत्यादि इत्यादि का खर्च शामिल है।

(२) फुटकर सिविल खर्च। इसमें देश सम्बन्धी तथा

राजकीय पेन्शन, स्टेशनरी, छपाई इत्यादि का खर्च शामिल है।

(३) डाक, तार, टकसाल।

(४) नहर।

(५) मुल्की मकानात इत्यादि—इसमें सरकारी मकान, सड़क इत्यादि शामिल हैं।

(६) जातीय ऋण का सूद। इस ऋण में साधारण ऋण और पबलिक वर्कस के लिये लिया गया ऋण—दोनो शामिल हैं।

(७) फौजी खर्च—इसमें सेना रखने और फौजी काम के खर्च शामिल हैं।

(८) असाधारण खर्च। इसमें—

(क) लड़ाई भिड़ाई।

(ख) देश की रक्षा के विशेष कार्य।

(ग) अकाल निवारण।

(घ) आमदनी के रुपये से रेल बनाने।

(ङ) अकाल निवारण (Famine Insurance) के लिये रखे गये रुपये से रेल नहर बनाने के काम शामिल हैं।

उपर जिन मदों का नाम लिया गया हैं उनमें 'होम चार्ज' भी शामिल हैं। इस 'होम चार्ज' का विशेष भाग तो भारत में लगी हुई इंगलैंड की पूंजी और इंगलैंड

के भेजे हुए सामान के बदले में ही दिया जाता है, इस कारण इसका सम्बन्ध व्यापार से है, शासन से नहीं। * होम चार्ज का कुछ अंश छुट्टी पर गये सरकारी अफसरों के वेतन और विलायत में रहने वाले सरकारी अफसरों के पेन्शन में खर्च होता है। इसके अतिरिक्त भी खर्च के कई मद हैं जैसे रेल का हिसाब; ऋण का सूद और उसका प्रबन्ध; सामान; "गोरे सिपाहियों को सदैव योग्य बनाये रखने के लिये उन्हें विलायत भेजने और वहां से लाने इत्यादि का खर्च"; मुल्की शासकों का खर्च; सामुद्रिक। हाल में जो फाइनेन्स कमिशन लंडन में बैठा था और मि० औस्टिन चेम्बरलेन जिसके सभापति थे उस कमिशन ने इस विषय से सम्बन्ध रखने वाले बहुत से प्रश्नों का विचार किया है।

भारत के आयव्यय के प्रबन्ध का सबसे अन्तिम भार पार्लिमेंण्ट ने सकौन्सिल भारत सचिव को दिया है। भारत सचिव ने अपना बहुत सा अधिकार भारत सरकार को सौंप दिया है जिससे भारत सरकार नया नया खर्च

---

* १९११-१२ में जो कुछ कम १ करोड़ ८० लाख पा० होम चार्ज में गया था, उसमें से प्रायः १ करोड़ बीस लाख पा० तो भारत में लगी इंगलैंड की पूंजी के सूद और इंगलैंड के भेजे माल के बदले में ही मग्न था।

मंजूर कर सकती है, और छोटे छोटे नये महकमों को कायम कर सकती है। परन्तु जब कोई विशेष आवश्यकता आ पड़ती है तब भारत सरकार के अधिकार की सीमा नहीं रहती है।

जब सम्राट ने कम्पनी के हाथ से भारत का राज्य लिया था तब बड़ेलाट की कौन्सिल में पहले पहल मि० जेम्स विलसन अर्थसचिव नियुक्त हुए थे। इन्होंने १८६० में सम्पूर्ण ब्रिटिश भारत में सरकारी हिसाब किताब रखने और आयव्यय के निरीक्षण करने का बहुत ही अच्छा प्रबन्ध किया था। ब्रिटिश भारत के सब प्रदेशों से जिस प्रकार की जितनी आमदनी होती थी वह सब एक ही खाते में जमा होती थी; इसमें से जब जो खर्च करना होता था वह सकौन्सिल बड़ेलाट की आज्ञा से ही किया जा सकता था। प्रान्तीय सरकारों को किसी नये मद में रुपया खर्च करने का अधिकार नहीं था।

इस व्यवस्था से बहुत बड़ी असुविधा होती थी, इसको दूर करने के लिये लाट मेयो ने, १८७१ में, प्रान्तीय सरकारों को अपने अपने प्रदेश के शासन के लिये कुछ नियत धन देने का नियम निकाला। साथ ही साथ यह भी कहा गया कि यदि अधिक धन की आवश्यकता हो तो प्रान्तीय सरकार या तो खर्च घटा कर

धन बचावे, या आवश्यकता हो तो अपने प्रान्त में नया टैक्स बैठा कर रुपया जमा करे। इस प्रबन्ध को आय-व्यय विषयक अधिकार का पृथक्करण कहते हैं। लगान, स्टाम्प, आबकारी, असेसड टैक्स, तथा कुछ अन्य मामूली मदों से जो आमदनी होती है उसको भारत सरकार और प्रान्तीय सरकार आपस में बांट लेती है, किस मद में किसको कितना मिलेगा यह निश्चय किया हुआ है। इनके अतिरिक्त और बड़े बड़े मदों से जो आमदनी होती है वह केवल भारत सरकार के कामों में खर्च की जाती है। कुछ ऐसा भी प्रबन्ध किया गया है जिसके अनुसार प्रत्येक प्रान्तीय सरकार को कुछ मदों की आमदनी एक नियत समय के लिये—जैसे पांच वर्ष—दे दी जाती है, और इसी आमदनी से उसे कई विभागों का प्रबन्ध करना पड़ता है। साधारणतः पौर विभाग के प्रबन्ध में, लगान वसूल करने में, न्यायालय, जेल, पुलिस, शिक्षा, चिकित्सा, सरकारी मकान सड़क, इत्यादि विभागों के प्रबन्ध में वह आमदनी खर्च की जाती है। अब प्रान्तीय सरकारों को अधिकार है कि वे जिस तरह चाहें इन मदों का प्रबन्ध करें। यदि सुप्रबन्ध करेंगी तो उसका लाभ भी उनको ही मिलेगा। जितने दिनों के लिये यह बन्दोबस्त किया जाता है, यदि उसके बीच में किसी प्रकार से आय की वृद्धि हुई

तो लाभ का सम्पूर्ण वा कुछ अंश प्रान्तीय सरकारों को भी मिलता है। *

न भारत ही इंगलैंड को किसी प्रकार का कर देता है, और न इंगलैंड ही भारत को राज्य प्रबन्ध में किसी प्रकार से धन की सहायता करता है। भारत साम्राज्य के शासन का सम्पूर्ण व्यय भारत को ही देना

---

* लाट मेयो का किया हुआ बन्दोबस्त लाट लिटन के समय बदल दिया गया। इसके अनुसार प्रान्तीय सरकारों के साथ पांच वर्षों का ठेका किया जाता था, जो बहुत ही असुविधाजनक था। पुनः १९०४ में नया अर्द्ध-स्थायी बन्दोबस्त हुआ, परन्तु यह भी उपयोगी न हुआ। १९११ से फिर एक नया बन्दोबस्त किया गया है। यह चिरस्थायी होगा अर्थात् इसके अनुसार कई आमदनी के मद प्रान्तीय सरकारों को चिरकाल के लिये सम्पूर्णतः वा अंशतया दे दिये गये हैं। हां, कोई आवश्यकता आ पड़ने पर यह बदल भी दिया जा सकता है। इसके अनुसार प्रत्येक प्रान्तीय सरकार को कुछ रुपया बचा कर रखना पड़ेगा, यह जमा किसी हालत में खर्च नहीं किया जा सकेगा। यदि भारत सरकार को कुछ बचत होगी तो वह उसे प्रान्तीय सरकारों में बांट देगी। इस बन्दोबस्त के अनुसार भारत सरकार अफीम, नमक, कस्टमस्, खिराज, डाक, तार, रेल, टकसाल और फौजी इत्यादि महकमों की आमदनी स्वयं लेती है, और उसी प्रकार इन महकमों में जितना खर्च होता है वह सब आप देती है। इसके अतिरिक्त 'होमचार्ज' तथा 'जातीय ऋण' का सूद भी वसूल करती है। इनके अतिरिक्त जिन महकमों की जो आमदनी वा खर्च है वह या तो भारत और प्रान्तीय सरकारों में बांट लिया जाता है, वा कुल प्रान्तीय सरकारों को ही दे दिया गया है।——अनुवादक।

पड़ता है, इस व्यय में उस गोरी सेना का, जो भारत की रक्षा करती है, और विलायत के 'इंडिया आफिस' का भी खर्च शामिल है।

युक्त प्रदेश और मद्रास में लगान का प्रबन्ध "रेवेन्युबोर्ड" से हुआ करता है, यह बोर्ड प्रान्तीय सरकार के अधीन है। पहले बंगाल में भी दो सदस्यों का एक 'रेवेन्यु बोर्ड' था। कुछ दिन के बाद यह संख्या घटा कर एक करदी गई, फिर आगे चल कर बोर्ड ही उठा दिया गया। अब बोर्ड का काम नई शासक सभा करती है। पंजाब और बर्म्मा में बोर्ड का काम एक ही कर्म्मचारी करता है, जो 'फाइनैनशियल कमिश्नर' के नाम से पुकारा जाता है। पूर्व बंगाल और आसाम के लिये एक पृथक बोर्ड था जो उस प्रान्त के साथ साथ उठा दिया गया।

सप्तम अध्याय।

देशी राजवाड़े।

देशी राजवाड़े—उनकी संख्या, उनका स्वरूप, उनकी उत्पत्ति—उनका विभाजन—ब्रिटिश सरकार के अधिकार और कर्त्तव्य—देशी राज्यों के अधिकार किस प्रकार मर्य्यादित हैं—निःसन्तान राजा के राज्य मिला लेने की नीति—उस नीति का छोड़ देना—यदि देशी राज्यों के उत्तराधिकारी न हों तो क्या प्रबन्ध होगा।

———o———

'भारत' कहने से सिर्फ "ब्रिटिश भारत" का ही (अर्थात् केवल उस भूभाग का जिसका शासन ब्रिटिश सम्राट अपने गवरनर जेनरल वा उनके अधीनस्थ कर्म-चारियों द्वारा करते हैं) ज्ञान नहीं होता है परन्तु उन देशों का भी जो देशी राजाओं और सरदारों के अधीन हैं तथा ब्रिटिश सम्राट की अधीनता स्वीकार करते हैं। आजकल इन देशी रजवाड़ों की संख्या प्रायः सात सौ है। पिछली मनुष्यगणना की रिपोर्ट के अनुसार इन रजवाड़ों का क्षेत्रफल और मनुष्य संख्या कितनी है उसका वर्णन पुस्तक के पूर्वार्द्ध में ही दिया जाचुका है। 'देशी रजवाड़े, इस वाक्य से कभी कभी अनुमान हो सकता है कि ये रजवाड़े विदेशी राज्य के बीच छोटे

छोटे स्वदेशी राष्ट्र हैं। परन्तु सर जान स्ट्राची कहते हैं कि "इस अनुमान से बढ़ कर और कोई अनुमान यथार्थता के विरुद्ध नहीं हो सकता है। १७०७ ई० में औरंगजेब की मृत्यु के बाद जब मुगल साम्राज्य ध्वंस हो रहा था, उस समय उसके टुकड़ों के लिये चारो तरफ लड़ाई छिड़ गई थी। यह लड़ाई अठारहवीं शताब्दी के अधिकांश भाग तथा उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ तक चलती रही। इस लड़ाई में मरहटे, दक्षिण के मुसलमानी राज्य और अंगरेज ही प्रतिद्वन्द्वी थे। लूट का अधिकांश अंगरेजों के ही हाथ लगा, परन्तु दूसरे दूसरे प्रतिद्वन्द्वियों को भी हमलोगों की अपेक्षा कोई अच्छा हक न था। जिन प्रान्तों में राज स्थापित करने की चेष्टा कर रहे थे, उनके लिये सबके सब बराबरही विदेशी थे। सर अलफ्रेड लायल कहते हैं कि "यह सिद्ध करना सरल होगा कि अंगरेजों के इस तेजी से हिन्दुस्तान जीतलेने का एक प्रधान कारण यह था कि हमलोगों के हाथ में जो प्रदेश आये थे उनमें न कोई राष्ट्रीयता थी, न वहां कोई पुराना राजवंश ही था और न पुराने जमीन्दार ही थे। सचमुच में, वहां कोई दृढ़ वा चिरस्थायी संस्था न थी। * * * हां, जहां दीर्घकाल व्यापिनी स्वदेशी राष्ट्रीय संस्थाये अब भी मिलती हैं, वहां वे अंगरेजों द्वारा ही विनाश होने से बचाई गई हैं।"

देशी रजबाड़ों को मुख्यतः तीन श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं—(१) वे रजबाड़े जो सीधे भारत सरकार से सम्बन्ध रखते हैं। (२) जो बड़ेलाट के एजेंट के अधीन हैं; और (३) जो प्रान्तीय सरकारों से सम्बन्ध रखते हैं।

पहले दर्जे के रजबाड़े ही अधिक महत्व के हैं। उनमें नेपाल, हैदराबाद, मैसूर, बड़ोदा, काश्मीर जम्मू शामिल हैं।

नेपाल का दर्जा सबसे अलग है। यह अपने राज्य के आभ्यन्तरिक शासन में पूर्ण रूप से स्वतन्त्र है। परन्तु इसका परराष्ट्र सम्बन्ध भारत सरकार के हाथ है। इसे अंगरेजी रेजिडंट को अपने दरबार में अवश्य रखना पड़ेगा, यह अंगरेज सरकार की अनुमति बिना किसी युरोपियन को नौकर नहीं रख सकेगा।

दूसरे दर्जे के रजबाड़ों का महत्व इन सब से कुछ कम है। ये तीन एजेन्सियों में विभक्त हैं। (१) मध्यभारत एजेन्सी (२) राजपुताना एजेन्सी; (३) बलुचिस्तान एजेन्सी। पहली एजेन्सी में ग्वलियर, इन्दौर, भूपाल, रीवां के राज्य महत्व के हैं। दूसरी एजेन्सी के सब से अच्छे रजबाड़े उदयपुर, जयपुर, जोधपुर, भारतपुर, बीकानेर, अलवर और धोलपुर हैं। इन तीनों एजेन्सियों में कुल १७० रजबाड़े शामिल हैं।

तीसरी श्रेणी में छोटे छोटे रजबाड़े शामिल हैं। इनकी

संख्या बहुत अधिक है। इस श्रेणी के रजवाड़े जो बंगाल सरकार के अधीन हैं उनमें सिक्किम, कुचविहार, हिलटिपरा (त्रिपुरा), भुटान और मयुरभंज * ही श्रेष्ठ हैं।

ब्रिटिश सरकार को, सब राजाओं के शीर्षस्थानीय (चक्रवर्त्ती) राजा होने के कारण, देशी रजवाड़ों के सम्बन्ध में ये अधिकार हैं :—

(क) परराष्ट्र सम्बन्ध में पूर्ण अधिकार।

(ख) रजवाड़ों की भीतरी शान्ति बनाये रखने का साधारण दायित्व।

(ग) जो ब्रिटिश प्रजा देशी राज्यों में बास करती है उनकी रक्षा और मंगल का विशेष दायित्व।

(घ) किसी बाहरी शत्रु के इस देश पर आक्रमण करने और देश में शान्ति बनाये रखने के लिये देशी रजवाड़ों से मदद लेने का अधिकार।

स्वाधीन राष्ट्रों में देशी राज्यों की कोई स्थिति नहीं है। देशी राजे न कोई लड़ाई लड़ सकते है, और न किसी पड़ोसी राजा से किसी प्रकार की सन्धि, शर्त्त या एकरार ही कर सकते हैं। वे योरप, एशिया वा अन्य किसी स्थान के स्वाधीन राष्ट्र के साथ किसी प्रकार की कूटनीति-सम्बन्धी मन्त्रणा न कर सकते हैं और न वैसा सम्बन्ध ही रख सकते हैं।

---

* मयुरभंज अब बिहार और उड़ीसा के अधीन है।——अनुवादक।

ब्रिटिश सरकार को यह क्षमता है तथा उसका यह कर्त्तव्य भी है कि देशी राजों में सुख शान्ति बनाये रखे। ब्रिटिश सरकार ने मानो देशी राजाओं को इस बात की गरांटी दी है कि कभी उनकी प्रजा उन्हें बलवा करके हटा नहीं सकेगी। उसी तरह वहां की प्रजा को भी यह अभय-दान दिया गया है कि असह्य कुशासन से उनकी रक्षा की जायगी।

जब १८७७ में रानी विक्टोरिया ने भारत की सम्राज्ञी (कैसर-ए-हिन्द) की उपाधि ग्रहण की थी उस समय ब्रिटिश सरकार की देशी रजवाड़ो पर सार्वभौमता की जैसी घोषणा हुई थी वैसी और कभी नहीं हुई थी।

देशी राजाओं के निःस्तान मरने पर उनके राज्य मिला लेने की नीति को लाट डलहौसी ने स्वीकार किया था और उसी को कार्य में भी परिणत किया था। इस नीति का यही अर्थ था कि जब कोई देशी राजा निःसन्तान मरे तो उनका राज्य ब्रिटिश राज्य में मिला लिया जावे और दत्तक-पुत्र को राज्य का अधिकारी न बनाया जावे। १८५७ के सिपाही विद्रोह के बाद इस नीति का त्याग किया गया। उस घोर विपत्ति के समय सब देशी रजवाड़े राजभक्त बने रहे। उस समय लाट कैनिंग ने कहा था कि "इन देशी रजवाड़ो ने मानो उस ढेव की लहर को तोड़ने में बांध का काम किया था जो ढेव हमलोगों को बहा कर ले

जाता।" लाट कैनिंग के भारत छोड़ने के पहले महारानी विक्टोरिया के नाम से प्रत्येक बड़े बड़े हिन्दू नरेश के पास एक सनद भेजा गया था। उसमें उन्हें इस बात का निश्चय दिलाया गया था कि राजाओं को सन्तान नहीं होने पर उन्हें पुत्र गोद लेने का अधिकार दिया जायगा। हिन्दू धर्म वा जाति विशेष के नियमों के अनुसार लिये गये उस दत्तक पुत्र को सरकार भी स्वीकार करेगी। मुसलमान नवाबों को भी इस बात का निश्चय दिलाया गया था कि मुसलमान धर्म के अनुसार जिस प्रकार उत्तराधिकार के नियम प्रचलित हैं उन्हें सरकार स्वीकार करेगी। इन नियमों को अब तक किसी प्रकार से त्यागा नहीं गया है। जहां कोई गोद लिया हुआ लड़का नहीं रहता है, वहां सरकार ही कोई उत्तराधिकारी चुन लेती है। जहां के राजा नाबालिग रहते हैं, वहां के शासन प्रबन्ध का बन्दोबस्त स्वयं सरकार करती है।

HIn.
E58.2
193640
Author
Title England's work in India.
DATE

University of Toronto
Library

DO NOT
REMOVE
THE
CARD
FROM
THIS
POCKET

Acme Library Card Pocket
Under Pat. "Ref. Index File"
Made by LIBRARY BUREAU